भूमिका।

हर्षका विषय है कि, आज हम अपने भजनप्रेमी पाठकोंके स-म्मुख दौलतविलासका द्वितीय संस्करण उपस्थित करनेको समर्थ हुए हैं। अबकी बार इसको हम जैनपदसंग्रह प्रथमभागके नामसे प्रकाशित करते हैं। क्योंकि जिस अभिप्रायसे हमने इसका दौलतवि-लास नाम रक्खा था, खेद है कि, उसकी पूर्ति न हो सकी। अर्थात् कविवर दौलतरामजीकी समस्त कविताका विलास हमको प्राप्त नहीं हो सका। एक एक पदपर एक एक पुस्तक देनेकी सूचना देनेपर भी हमारे जैनीभाइयोंके प्रमादसे हमको कविवरके समस्त पद नहीं मिले। लाचार हमने इसका नाम कविवर दौलतरामजीका पदसंग्रह रख दिया। पदसंग्रह नाम रखनेका एक कारण यह भी है कि, जैनियोंमें पदों-का बड़ा भारी भंडार होने पर भी आजतक किसीने इसके प्रका-शित करनेका प्रयत्न नहीं किया। और दो चार महाशयोंकी कृपासे जो दो चार छोटी मोटी पुस्तकें संग्रह होकर प्रकाशित भी हुई हैं; वे ऐसी अशुद्ध और बेसिलसिले हैं कि, उनका प्रकाशित होना न होना बराबर ही है। इसलिये हमारी यह इच्छा हुई है कि, एक एक कविका एक एक पदसंग्रह पृथक् पृथक् करके क्र-मशः प्रकाशित करें। अर्थात् जैसे यह दौलतरामजीका पदसंग्रह प्रथमभाग है, उसीप्रकार पं० भागकचंदजीके पं० भूधरदासजीके संग्रहका द्वितीयभाग संग्रहका तृतीयभाग, कविवर द्यानतरायजीके संग्रहका चतुर्थभाग, आदि नामसे वह पदभंडार अपने पाठकोंके सम्मुख उपस्थित करें। ऐसा किये विना हम अपने प्राचीन कवियोंके काव्य ऋणसे किसीप्रकार मुक्त नहीं हो सकते। यह कितनी बड़ी लज्जाकी बात है कि, हमारे लिये दिनरात परिश्रम करके हमारे पूर्वकवि जो एक भंडार बनाके रख गये हैं, उसे हम भं-डारोंमें पड़ा पड़ा सड़ने देवें, मूर्ख लेखकोंकी कलमकुटारसे नष्टभ्रष्ट होने देवें और उसके उद्धारका कुछ भी प्रयत्न न करें। आशा है कि,

धर्मात्मा पाठक इस कृत्यमें पुस्तकादिसे सहायता देकर हमारे उत्साहको बढ़ावेंगे, जिससे हम इस कठिन कार्यको सहज कर सकें।

छहढाला दौलतरामजीका एक स्वतंत्र ग्रन्थ है, वह पदोंमें संम्मिलित नहीं हो सकता। इसलिये इस संस्करणमें हमने उसको संग्रह नहीं किया है। इसके सिवाय नंबर ३२ '**नाथ मोहि तारत क्यों ना ? क्या तकसीर हमारी, नाथ मोहि०**' यह पद भी निकाल दिया है। क्योंकि यथार्थमें यह एक दूसरे कविका है। किसी कृपानाथने पुस्तकके लोभसे दौलतकी छाप डालकर हमारे पास भेज दिया था। इस संग्रहमें दो चार पद भी हमको इसीप्रकारके जान पड़ते हैं, परन्तु कोई दृढ़ प्रमाण मिले विना उन्हें पृथक् करनेको जी नहीं चाहता है। यदि कोई महाशय ऐसे पदोंकी सूचना हमको देवेंगे, तो बड़ा उपकार होगा। आगामी संस्करणमें वे पद अवश्य हटा दिये जावेंगे।

प्रथमसंस्करण छप चुकनेपर कई महाशयोंने दौलतरामजीके और भी भजन हमारे पास भेजनेकी कृपा की हैं, परन्तु उनमें अधिकांश सज्जन ऐसे ही निकले, जिन्होंनें या तो द्यानतकी जगह दौलत करके अथवा आंचलीमें कुछ उलट पुलट करके भेजी है। शेष जो पद नवीन प्राप्त हुए हैं, उन्हें हमने अन्तमें लगा दिये हैं।

अबके संस्करणमें हमने टिप्पणी अधिक लगवाई है। इससे पदोंके गूढशब्द वाक्य तथा भाव समझनेमें बहुत सुभीता होगा। दौलतरामजीके पद ऐसे गंभीर और कठिन हैं कि, पाठकोंको समझानेके लिये इच्छा न रहते भी हमको टिप्पणी लगाना पड़ी। जिस शब्दकी एक वार टिप्पणी की जा चुकी है, दूसरीवार आनेपर उसकी टिप्पणी नहीं दी है। पहले संस्करणकी अपेक्षा इसवार विशेष परिश्रमसे इस ग्रन्थकी शुद्धता की गई है। इतने पर भी दृष्टिदोषसे कुछ अशुद्धि रह गई हो, तो पाठकगण क्षमा करें और सुधारके पढ़ें।

ता० १०-१-०७ ई०। पन्नालाल वाकलीवाल।

श्रीवीतरागाय नमः

जैनपदसंग्रह ।

१.

मंगलाचरण स्तुति ।

दोहा ।

सकल ज्ञेय ज्ञायक तदपि, निजानंदरसलीन ।
सो जिनेन्द्र जयवंत नित, अरि[1]रजरहसविहीन १

पद्धरिछन्द ।

जय वीतराग विज्ञानपूर । जय मोहतिमिरको हरन सूर ॥ जय ज्ञान अनंतानंत धार । दृग[2]-सुख-वीरज-मंडित अपार ॥२॥ जय परम-शांति मुद्रा-समेत । भविजनको निज-अनुभूति-हेत ॥ भवि[3]-भागन-वश जोगे[4]वशाय । तुम धुनि है सुनि विभ्रम नसाय ॥ ३ ॥ तुम गुन चिंतत निज-

१ चार घातिया कर्म । २ अनन्तदर्शन, अनन्तसुख, अनन्तवीर्य । ३ भव्यजनोंके भाग्यसे । ४ मनवचनकायके योगोंके कारण ।

पर-विवेक-प्रघटै, विघटैं आपद अनेक ॥ तुम जग-भूषन दूषनवियुक्त। सब महिमायुक्त विकल्पमुक्त ॥ ४ ॥ अविरुद्ध शुद्ध चेतनस्वरूप। परमात्म परमपावन अनूप॥ शुभ-अशुभ-विभाव अभाव कीन। स्वाभाविकपरनतिमय अछीन ॥ ५ ॥ अष्टादश-दोषविमुक्त धीर। सुचतुष्टयमय राजत गभीर ॥ मुनि गनधरादि सेवत महंत। नव-केवललब्धि-रमा धरंत ॥ ६ ॥ तुम शासन सेय अमेय[1] जीव। शिव गये जाहिं जै हैं सदीव ॥ भवसागरमें दुख खारवारि। तारनको और न आप टारि ॥ ७ ॥ यह लखि निजदुखगद[2]हरनकाज। तुम ही निमित्तकारन इलाज ॥ जाने, तातैं मैं शरन आय। उचरों निजदुख जो चिर लहाय ॥ ८ ॥ मैं भ्रम्यो अपनपो विसरि आप। अपनाये विधिफल[3] पुण्यपाप ॥ निजको परको करता पिछान। परमें अनिष्टता इष्ट ठान ॥९॥ आकुलित भयो अज्ञान धारि। ज्यों मृग मृगतृष्णा जान वारि[4]॥ तन-परनतिमें आपौ चितार।

१ अपरिमाणं। २ रोग। ३ कर्मफल। ४ पानी।

कवहूं न अनुभयो स्वपद सार ॥ १० ॥ तुमको विन जाने, जो कलेश । पाये सो तुम जानत जिनेश ॥ पशु-नारक-नर-सुरगतिमझार । भव धर धर मस्रो अनंत वार ॥ ११ ॥ अब काल-लब्धिवलतैं दयाल । तुम दर्शन पाय भयो खुशाल ॥ मन शांत भयो मिट सकलद्वंद । चाख्यो स्वातमरस दुखनिकंद ॥ १२ ॥ तातैं अव ऐसी करहु नाथ । विछुरैं न कभी तुव चरनसाथ ॥ तुम गुन-गनको नहिं छेव देव ! जगतारनको तुअ विरद एव ॥ १३ ॥ आतमके अहित विषय-कषाय । इनमें मेरी परनति न जाय ॥ मैं रहों आपमें आप लीन । सो करो होंहु ज्यों निजाधीन ॥ १४ ॥ मेरे न चाह कछु और ईश । रत्नत्रयनिधि दीजे मुनीश ॥ मुझ कारजके कारन सु आप । शिव करहु हरहु मम मोहताप ॥ १५ ॥ शशि शांतिकरन तपह-रन-हेत । स्वयमेव तथा तुम कुशल देत ॥ पीवत पियूष ज्यों रोग जाय । त्यों तुम अनुभवतैं

१ पार । २ मोक्ष ।

भव नसाय ॥ १६ ॥ त्रिभुवन तिहुँकालमझार कोय । नहिं तुम विन निजसुखदाय होय ॥ मो उर यह निश्चय भयो आज । दुखजलधि-उतारन तुम जहाज ॥ १७ ॥

दोहा ।

तुम गुन-गन-मनि गनपती[1], गनत न पावहिं पार ।
दौल स्वल्पमति किमि कहै, नमों त्रियोग[2] सँभार १८

२.

देखो जी आदीश्वर स्वामी, कैसा ध्यान लगाया है। कर ऊपरकर सुभग विराजे, आसन थिर ठहराया है ॥ देखो जी० ॥ टेक ॥ जगत-विभूति भूँति[3]सम तजकर, निजानंद-पद ध्याया है । सुरभित[4]-श्वासा, आशा[5]-वासा नासादृष्टि सुहाया है ॥ देखो जी० ॥ १ ॥ कंचनवरन चलै मन रंच न, सुरगिर[6] ज्यों थिर थाया है । जास

---

१ गणधरदेव २ मनवचनकाय । ३ भस्म जैसी । ४ सुगंधित । ५ दिशारूपी वस्त्र=दिगम्बरता । ६ सुमेरु ।

पास अहि मोर मृगी हॅरि, जातिविरोध नशाया है ॥ देखो जी० ॥ २ ॥ शुधउपयोग हुताशनमें जिन, वसुविधि समिधॅ जलाया है। श्यामलि अलिकावलि शिर सोहै, मानों धुंआँ उड़ाया है ॥ देखो जी० ॥ ३ ॥ जीवन मरन अलाभ लाभ जिन, तृन मनिको सम भाया है। सुर-नर-नाग नमहिं पद जाके, दौल तास जस गाया है ॥ देखो० जी ॥ ४ ॥

३.

जिनवर-आनन-भान निहारत, भ्रमतमघान नसाया है ॥ जिन० ॥ टेक ॥ वचन-किरन-प्रस-रनतें भविजन, मनसरोज सरसाया है। भव-दुखकारन सुखविसतारन, कुपथ सुपथ दरसाया है ॥ जिन० ॥ १ ॥ विनसाई कॅजॅ जलसरसाई, निशिचर समरॅ दुराया है। तस्करॅ प्रवल कषाय पलाये, जिन धन बोध चुराया है ॥ जिन० ॥ २ ॥ लखियत उडुॅ न कुभाव कहूं अव, मोह

१ सिंह। २ होम करनेकी लकड़ियें। ३ काई, दूसरी पक्षमें—अज्ञानरूपी काई। ४ कामदेव। ५ चोर। ६ तारे।

उलूक लजाया है। हंस[1] कोक[2]को शोक नश्यो निज,—परिनतिचकवी पाया है ॥ जिन० ॥ ३ ॥ कर्मबंधकजकोष[3] बंधे चिर, भवि-अलि मुंचन पाया है। दौल उजास निजातम अनुभव, उर जग अंतर छाया है ॥ जिन० ॥ ४ ॥

४.

पारस जिन चरन निरख, हरख यों लहायो, चितवत चंदा चकोर ज्यों प्रमोद पायो ॥ टेक ॥ ज्यों सुन घनघोर शोर, मोरहर्षको न ओर[4], रंक निधिसमाजराज, पाय मुदित थायो ॥ पारस० ॥१॥ ज्यों जन चिरछुधित[5] होय, भोजन लखि सुखित होय, भेषज[6] गद-हरन पाय, सरुज[7] सुहरखायो ॥ पारस० ॥ २ ॥ वासर भयो धन्य आज, दुरित दूर परे भाज, शांतदशा देख महा, मोहतम पलायो ॥ पारस० ॥ ३ ॥ जाके गुन जानन जिम, भानन भवकानन इम, जान दौल शरन आय, शिवसुख ललचायो ॥ पारस० ॥ ४ ॥

---

१ आत्मा। २ चकवा। ३ कर्मबंधरूपीकमलोंके कोष बंधे हुए थे उनसे। ४ छोर। ५ बहुतकालका भूखा। ६ दवाई। ७ रोगी।

५.

वंदों अद्भुत चन्द्र वीर[1] जिन, भवि-चकोर-चितहारी ॥ वंदों० ॥ टेक ॥ सिद्धारथनृपकुल-नभ-मंडन, खंडन भ्रमतम भारी। परमानंद-जलधिविस्तारन, पाप-ताप-छयकारी ॥ वंदों० ॥ १ ॥ उदित निरंतर त्रिभुवन अंतर, कीरति किरन पसारी। दोप[2]मलं[3]कलंकअटंकित, मोहराहु निरवारी ॥ वंदों० ॥ २ ॥ कर्मावर्न[4]-पयोद-अरोधित, वोधित शिवमगचारी। गनधरादि मुनि उडुंगन[5] सेवत, नित पूनमतिथि धारी ॥ वंदों० ॥ ३॥ अखिल-अलोकाकाश-उलंघन, जासु ज्ञान-उजियारी। दौलत मनसा[6]-कुमुदनि-मोदन, जयो चरम[7]जगतारी ॥ वंदों० ॥ ४ ॥

६.

निरखत जिनचंद्र-वदन, स्वपरसुरुचि आई।

---

१ वर्द्धमानभगवान्। २ दोपा-रात्रि। ३ पापरूपी कलंक। ४ कर्मावरणरूपी वादलोंसे जो ढकता नहीं है। ५ तारागण। ६ मनरूपी कुमोदनीको हर्षित करनेवाला। ७ अन्तिम तीर्थंकर।

निरखत० ॥ टेक ॥ प्रगटी निज आनकी, पिछान ज्ञान भानकी, कला उदोत होत काम, जामिनी पलाई । निरखत० ॥ १ ॥ सास्वत आनंद स्वाद, पायो विनस्यो विषाद, आनमें अनिष्ट इष्ट, कल्पना नसाई । निरखत० ॥ २ ॥ साधी निज साधकी, समाधि मोहव्याधिकी, उपाधिको विराधिकैं, अराधना सुहाई । निरखत० ॥ ३ ॥ धन दिन छिन आज सुगुनि, चिंते जिनराज अबै, सुधरे सब काज दौल, अचल सिद्धि पाई । निरखत ॥ ४ ॥

७.

जबतें आनंद-जननि दृष्टि परी माई । तबतें संशय विमोह भरमता विलाई । जबतें० ॥ टेक ॥ मैं हूं चितचिह्न भिन्न परतें पर जड़ स्वरूप, दोउनकी एकता सु, जानी दुखदाई । जबतें० ॥ १ ॥ रागादिक बंधहेत, बंधन बहु विपति देत, संवर हित जान तासु, हेतु ज्ञानताई ।

---

१ रात्रि ।

जवतें० ॥ २ ॥ सब सुखमय शिव है तसु, कारन विधिझारन इमि, तत्त्वकी विचारन जिन, वानि सुधि कराई । जवतें० ॥ ३ ॥ विषयचाह-ज्वालतें द,-ह्यो अनंतकालतें सु,-धांबुस्यात्पदां-कगाह,-तें प्रशांति आई । जवतें० ॥ ४ ॥ या विन जगजालमें न, शरन तीनकालमें सँ,-भाल चितभजो सदीव, दौल यह सुहाई । जवतें० ॥५॥

८.

भज ऋषिपति ऋषभेश ताहि नित, नमत अमर असुरा । मनमथ-मथ दरसावन शिवपंथ, वृष-रथ-चक्र-धुरा ॥ भज० ॥ टेक ॥ जा प्रभु गर्भछमासपूर्व सुर, करी सुवर्ण धरा । जन्मत सुरगिर-धर सुरगनयुत, हँरि पय न्हवन करा ॥ भज० ॥ १ ॥ नटत नृत्यकी विलय देख प्रभु, लहि विराग सु थिरा । तवहिं देवऋषि आय नाय शिर, जिनपद पुष्प धरा ॥ भज० ॥ २ ॥

---

१ निर्जरा । २ स्याद्वादरूपी अमृतसे अवगाहन करनेसें । ३ मुनिनाथ । ४ धर्मके ईस आदिनाथ भगवान् । ५ कामदेवके मथनेवाले । ६ मोक्षपथ । ७ इन्द्र । ८ अप्सरा । ९ लौकांतिकदेव ।

केवलसमय जास वच-रविने[1] जगभ्रम-तिमिर हरा। सुदृगबोधचारित्रपोत[2] लहि, भवि भवसिंधुतरा॥ भज०॥ ३॥ योगसँहार निवार शेष[3]विधि, निवसे वसुमधरा[4]। दौलत जे याको जस गावें, ते ह्वैं अज अमरा॥ भज०॥ ४॥

९.

जगदानंदन जिन अभिनंदन, पदअरविंद नमूं मैं तेरे। जग०॥ टेक॥ अरुनवरन अघतापहरन वर, वितरन कुशल सु शरन बड़ेरे। पद्मासदन[5] मदन-मद-भंजन, रंजनमुनिजनमन-अलिकेरे॥ जग०॥ १॥ ये गुन सुन मैं शरनें आयो, मोहि मोह दुख देत घनेरे। ता मदभानन[6] स्वपरपिछानन, तुमविन आन न कारन हेरे॥ जग०॥२॥ तुम पदशरन गही जिननें ते, जामन-जरा-मरन-निरवेरे। तुमतें विमुख भये शठ तिनको, चहुंगति विपतमहाविधि पेरे॥ जग०॥ ३॥ तुमरे अमित सुगुनज्ञानादिक, सतत मु-

१ वचनरूपी रज सूर्यने। २ जहाज। ३ शेषके चारअघातिकर्म। ४ मोक्ष। ५ लक्ष्मीके घर। ६ मदनाशक।

दित गनराज उँगेरे। लहत न मित मैं पतितें[2] कहौं किम, किन शिशुकन गिरिराज उखेरे॥ जग०॥ ४॥ तुम विनरागदोष दर्पन ज्यों, निज निज भाव फलैं तिनकेरे। तुम हो सहज जगत उपकारी, शिवपथ-सारथवाह भलेरे॥ जग०॥५॥ तुम दयाल बेहाल बहुत हम, काल-कराल-व्याल-चिर-घेरे। भाल नाय गुणमाल जपों तुम, हे दयाल! दुखटाल सबेरे[3]॥ जग०॥ ६॥ तुम बहु पतित सुपावन कीनें, क्यों न हरो भवसंकट मेरे। भ्रम-उपाधि-हर शँमसमाधिकर[4], दौल भये तुमरे अब चेरे॥ जग०॥ ७॥

१०.

पद्मसद्म[5] पद्मपद[6] पद्मा,-मुक्तिसद्म[7] दरशावन है। कलि-मल-गंजन मन-अलिरंजन, मुनिजन शरन सुपावन है॥ पद्मा०॥ टेक॥ जाकी जन्मपुरी कुशंबिका, सुर-नर-नाग-रमावन है। जास जन्म-दिनपूरव पटनव,-मास रतन वरसावन है॥ पद्मा०

१ गाये। २ पापी। ३ शीघ्र। ४ शान्तिसमाधि। ५ समरसरन लक्ष्मीके घर। ६ पद्मप्रभके चरण। ७ पद्मामुक्ति=मोक्षलक्ष्मी।

॥ १ ॥ जा तपथान पंपोसागिरि[1] सो, आत्मज्ञान थिर-थावन है। केवलजोतउदोत भई सो, मिथ्या-तिमर-नशावन है ॥ पद्मा० ॥ २ ॥ जाको शासन[2] पंचानन[3] सो, कुमति-मतंग[4]-नशावन है। राग विना सेवक जन तारक, पै तसु रुषतुप भाव न है ॥ पद्मा० ॥ ३ ॥ जाकी महिमाके वरननसों, सुरगुरु[5]बुद्धि थकावन है। दौल अल्पमतिको कहवो जिमि, शिशु[6]गिरिंद धकावन है ॥ पद्मा० ॥४॥

११.

चन्द्रानन जिन चन्द्रनाथके, चरन चतुर-चित ध्यावतु हैं। कर्म-चक्र-चकचूर चिदातम, चिनमूरतपद पावतु हैं ॥ चन्द्रा० ॥ टेक ॥

हाँहा-हूहू-नारद-तुंबर,[7] जासु अमल जस गावतु हैं। पद्मा-सची-शिवा-श्यामादिक, करधर बीन बजावतु हैं ॥ चन्द्रा० ॥ १ ॥ विन इच्छा उपदेशमाहिं हित, अहित जगत दरसावतु हैं।

---

१ पंपोसा नामका पर्वत है। २ उपदेश। ३ सिंह। ४ हाथी। ५ बृहस्पति वा इन्द्र। ६ जैसे बालक सुमेरुको धकेलना चाहें। ७ गंधर्व देवोंके भेद हैं।

जा पदतट सुरनरमुनिघटचिर[1], विकटविमोह नशावतु हैं ॥ चन्द्रा० ॥ २ ॥ जाकी चन्द्रवरन तनदुतिसों, कोटिक सूर[2] छिपावतु हैं। आतम-जोतउदोतमाहिं सब, ज्ञेय[3] अनंत दिपावतु हैं ॥ चन्द्रा० ॥ ३ ॥ नित्य-उदय अकलंक अछीन सु, मुनि-उडु[4]-चित्त रमावतु हैं। जाकी ज्ञानचन्द्रिका लोका,-लोकमाहिं न समावतु हैं॥ चन्द्रा० ॥ ४ ॥ सांम्यसिन्धुवर्द्धन[5] जगनंदन[6],-को शिर हरिगन नावतु हैं। संशय विभ्रम मोह दौलके, हर जो जगभरमावतु हैं ॥ चन्द्रा० ॥ ५ ॥

१२.

जय जिन वासुपूज्य शिव-रमनी-रमन मदन-दनु[7]-दारन हैं। बालकाल संजम सँभाल रिपु, मोहव्यालबल[8]मारन हैं ॥ जय जिन० ॥ १ ॥ जाके पंचकल्यान भये चंपापुरमें सुखकारन हैं।

---

१ देव मनुष्यों और मुनियोंके हृदयका चिरकालका। २ सूर्य। ३ पदार्थ। ४ तारा। ५ समतारूपी समुद्रको बढ़ानेवाला। ६ जगको आनंदित करनेवाला। ७ कामदेवरूपी राक्षसको मारनेवाले। ८ मोहरूपी सांप।

वासवबृंद[1] अमंद मोद धर, किये भवोदधितारन हैं ॥ जय जिन० ॥ २ ॥ जाके वैनसुधा त्रिभुवन-जन,-को भ्रमरोगविदारन हैं । जा गुनचिंतन अमलअनल मृत,-जनम-जरा-वन-जारन हैं ॥ जय० ॥ ३ ॥ जाकी अरुन शांतिछवि-रविभा, दिवसप्रवोधप्रसारन हैं । जाके चरनशरन सुरतरु[2] वांछित शिवफल विस्तारन हैं ॥ जय० ॥ ४ ॥ जाको शासन सेवत मुनि जे, चारज्ञानके धारन हैं । इन्द्र-फणींद्र-मुकुटमणि-दुतिजल, जापद कलिल[3] पखारन हैं ॥ जय० ॥ ५ ॥ जाकी सेव अछेवरमाकर[4], चहुंगतिविपति उधारन हैं । जा अनुभवघनसार[5] सु आकुल,[6] तापकलाप-निवारन हैं ॥ जय० ॥ ६ ॥ द्वादशमों जिनचन्द्र जास वर, जस उजासको पार न हैं । भक्तिभारतें नमें दौलको चिर-विभाव-दुख टारन हैं ॥ जय० ॥ ७ ॥

---

१ इन्द्रोंके समूह । २ कल्पवृक्ष । ३ पाप । ४ अक्षयलक्ष्मी (मोक्ष) की करनेवाली । ५ अनुभवरूपी मलयागर चंदन । ६ आकुलताके तापका समूह ।

१३.

कुंथनके[1] प्रतिपाल कुंथु जग,-तार सारगुन-धारक हैं। वर्जितग्रंथ[2] कुपंथवितर्जित, अर्जित[3]-पंथ अमारक हैं॥ कुंथनके० ॥ टेक॥ जाकी समवसरनबहिरंग, रमा गनधार[4] अपार कहैं। सम्यग्दर्शन-बोध-चरण-अध्यात्म-रमा-भर-भार कहैं॥ कुंथ०॥ १ ॥ दशधा-धर्म-पोतकर[5] भव्यन,को भवसागरतारक हैं। वरसमाधि-वन-घन विभाव-रज, पुंजनिकुंजनिवारक हैं॥ कुंथ० ॥ २ ॥ जासु ज्ञाननभमें अलोकजुत—लोक यथा इक तारक हैं। जासु ध्यानहस्तावलम्ब दुख-कूपविरूप-उधारक हैं॥ कुंथ० ॥ ३ ॥ तज छखंडकमला[6] प्रभु अमला, तपकमला आगारक हैं। द्वादशसभा-सरोजसूर भ्रम, तरुअंकूरउपारक हैं॥ ॥ कुंथनके० ॥ ४ ॥ गुणअनंत कहि लहत अंत को ? सुर-गुरुसे बुध हार कहैं। नमैं दौल हे कृपाकंद ! भवद्वंद टार बहुवार कहैं॥ कुंथन० ॥ ५ ॥

---

१ छोटे जीवोंके भी । २ परिग्रहरहित । ३ अहिंसक पंथके अर्जन करनेवाले । ४ गणधर देव । ५ दशलक्षणधर्मरूपी जहाज करके । ६ छहखंडकी लक्ष्मी ।

१४.

पास अनादिअविद्या मेरी, हरन पास-परमेशा हैं । चिद्विलास सुखराशप्रकाशवितरन त्रिभौनदिनेशा हैं ॥ टेक ॥ दुर्निवार कंदर्पसर्पको दर्पविदरनखगेशा हैं । दुठ-शठ-कमठ-उपद्रव-प्रलयसमीर-सुवर्णनगेशा हैं ॥ पास० ॥ १ ॥ ज्ञान अनंत अनंत दर्श बल, सुख अनंत पदमेशा हैं । स्वानुभूति-रमनी-वर भवि-भव-गिर-पवि शिवसदमेशा हैं ॥ पास० ॥ २ ॥ ऋषि मुनि यति अनगार सदा तिस, सेवत पादकुशेसा हैं । वदनचंद्रतैं झरै गिरामृत, नाशन जन्म-कलेशा हैं ॥ पास० ॥ ३ ॥ नाममंत्र जे जपैं भव्य तिन, अघअहि नशत अशेसा हैं । सुर अहमिन्द्र खगेन्द्र

---

१ अनादि अविद्या रूपी फांसी । २ पार्श्वनाथ भगवान् । ३ तीन लोकके सूरज । ४ कामदेव रूपी सर्पको । ५ गरुडपक्षी । ६ दुष्ट, शठ, ऐसे कमठके उपद्रवरूपी प्रलयकालकी आंधीको सहन करनेवाले मेरूपर्वत हो । ७ लक्ष्मीके ईश । ८ स्वानुभवरूपी स्त्रीके दूलह । ९ भव्योंके संसार रूपी पर्वतके नष्ट करनेको वज्रके समान । १० मोक्ष महलके मालिक समान । ११ चरणकमल । १२ वचनरूपी अमृत । १३ सब ।

चन्द्र है, अनुक्रम होंहिं जिनेशा हैं ॥ पास० ॥ ४ ॥ लोक-अलोक-ज्ञेय-ज्ञायक पै, रत निज-भावचिदेशा हैं। रागविना सेवकजन-तारक, मारक[1] मोह न द्वेषा हैं ॥ पास० ॥ ५ ॥ भद्र-समुद्र-विवर्द्धन अद्भुत-पूरनचन्द्र सुवेशा हैं। दौल नमे पद तासु जासु, शिवथल संमेदअचलेशा[2] है ॥ पास० ॥ ६ ॥

१८.

जय शिव-कामिनि-कंत वीर[3] भगवंत अनंत-सुखाकर हैं। विधि-गिरि-गंजन[4] बुधमनरंजन, भ्रमतमभंजन भाकर[5] हैं ॥ जय० ॥ टेक ॥ जिनउपदेश्यो दुविधधर्म[6] जो, सो सुरसिद्धरमाकर[7] हैं। भवि-उर-कुमुदनि-मोदन भवतप, हरन अनूप निशाकर[8] हैं ॥ जय० ॥ १ ॥ परमविरागि रहैं जगतें पै, जगतजंतुरक्षाकर हैं। इन्द्र फणीन्द्र

---

१ मारनेवाले। २ सम्मेदशिखर। ३ वर्द्धमान भगवान्। ४ कर्मरूपीपर्वत नष्ट करनेवाले। ५ सूर्य। ६ दो प्रकारका धर्म गृहस्थ और मुनिका। ७ स्वर्ग और मोक्ष लक्ष्मीका करनेवाला है। ८ चन्द्रमा।

खगेन्द्र चन्द्र जग,-ठाकर ताके चाकर हैं ॥ जय० ॥ २ ॥ जासु अनंत सुगुनमणिगन नित गनत गनीगन थाक रहैं । जा प्रभुपद नवकेवलिलब्धि सु, कमलाको कमलाकर हैं ॥ जय० ॥ ३ ॥ जाके ध्यान[1]-कृपान-रागरुष, पासहरन समताकर हैं । दौल नमें करजोर हरन भव, वाधा शिव-राधाकर हैं ॥ जय० ॥ ४ ॥

१६.

जय श्रीवीर जिनेन्द्रचन्द्र, शतइन्द्रवंद्य जग-तारं । जय० ॥ टेक ॥ सिद्धारथकुल-कमल-अमल-रवि, भव[2]भूधरपविभारं । गुनमनिकोष अदोष मोषपति, विपिन[3]कषायतुषारं । जय० ॥ १ ॥ मदनकदन शिवसदन पद-नमित, नित अनमित यतिसारं । रमा[4]अनंतकंत अंतक[5]-कृत,-अंत जंतु-हितकारं, जय० ॥ २ ॥ फंद[6]चंदना[7]कंदन दादुर-

१ ध्यानरूपी तरवारसे रागद्वेषकी फासीको काटनेवाला । २ संसाररूपी पर्वतको बड़े भारी वज्रके समान । ३ कषायरूपी वनको तुसार । ४ अनंत मोक्षलक्ष्मीकेपति । ५ यमराजका भी किया है अन्त जिन्होंने ऐसे । ६ चंदनासतीके फंद काटनेवाले । ७ समवशरणमें पुष्प लेकर जानेवाले मेंडकके पाप ।

दुरित तुरितनिर्वारं। रुद्र[1]रचित अतिरुद्र उपद्रव, पवन अद्रिपतिसारं। जय० ॥ ३ ॥ अंतातीत[2] अचिंत्य सुगुन तुम, कहत लहत को पारं। हे जगमौल[3] दौल तेरे क्रम[4], नमें शीसकरधारं ॥ जय० ॥ ४ ॥

१७.

उरगसुरगनरईश शीस जिस, आतपत्र[5] त्रि[6] धरे। कुंदकुसुम[7]सम चमर अमरगन, ढारत मोदभरे ॥ उरग० ॥ टेक ॥ तरुअशोक जाको अवलोकत, शोकथोक उजरे। पारजातसंतानकादिके, बरसत सुमन वरे ॥ उरग० ॥ १ ॥ सुमणिविचित्र-पीठअंबुजपर, राजत जिन सुथिरे। वर्णविगत[8] जाकी धुनिको सुनि, भवि भवसिंधुतरे ॥ उरग० ॥ २ ॥ साढ़े बारह कोड़ जातिके, बाजत तूर्य[9] खरे। भामंडलकी दुतिअखंडने, रविशशि मंद करे। उरग० ॥ ३ ॥ ज्ञान अनंत अनंत दर्श बल, शर्म अनंत भरे। करुणामृत-

१ रुद्रनामक दैत्यके किये हुए। २ अनंत। ३ जगन्मुकुट। ४ चरण। ५ छत्र। ६ तीन ७ कुंदके फूल ८ अनक्षरी ९ बाजे।

पूरित पद जाके, दौलत हृदय धरे, ॥उरग०॥४॥

१८.

भविनसरोरुहसूर[1] भूरिगुनपूरित अरहंता।
दूरितदोष[2] मोष पथघोषक, करन कर्मअन्ता॥
भविन०॥ टेक॥ दर्शबोधतैं[3] युगपतलखि जाने
जु भावऽनंता। विगताकुल[4] जुतसुख अनंत
विन,-अंत शक्तिवंता॥ भविन०॥ १॥ जा
तनजोतउदोतथकी रवि, शशिदुतिलाजंता।
तेजथोक अवलोक लगत है, फोक सचीकंता[5]॥
भविन०॥ २॥ जास अनूपरूपको निरखत,
हरखत हैं संता। जाकी धुनि सुनि मुनि निजगुन-मुन,[6] पर-गर[7] उगलंता॥ भविन०॥ ३॥
दौल तौलविन[8] जस तस वरनत, सुरगुरु[9] अकुलंता। नामाक्षर सुन कान स्वानसे, रांक[10] नाक-गंता[11]॥ भविन०॥ ४॥

---

१ भव्यरूपीकमलोंको सूर्य। २ दोषरहित। ३ दर्शन और ज्ञानसे। ४ आकुलतारहित। ५ इंद्र। ६ अपने गुणोंका मनन करके। ७ विभावरूपी विष। ८ अपरिमित। ९ बृहस्पति। १० रंक नाचीज। ११ स्वर्ग गया।

१९.

हमारी वीर हरो भवपीर । हमारी० ॥ टेक ॥ मैं दुखतपित दयामृतसर तुम, लखि आयो तुम तीर । तुम परमेश मोखमगदर्शक, मोहदवानल-नीर ॥ हमारी० ॥ १ ॥ तुम विनहेत जगतउपकारी, शुद्ध चिदानँद धीर । गनपतिज्ञानसमुद्र न लंघैं, तुम गुणसिंधु गहीर ॥ हमारी० ॥ २ ॥ याद नहीं मैं विपति सही जो, धर धर अमित शरीर । तुम गुनचिंतत नशत तथा भय, ज्यों घन चलत समीर ॥ हमारी० ॥ ३ ॥ कोटवारकी अरज यही है, मैं दुख सहूं अधीर । हरहु वेदनाफंद दौलको, कतर कर्म जंजीर ॥ हमारी०॥४॥

२०.

सब मिल देखो हेली म्हारी हे, त्रिसलाबाल वदन रसाल । सब० टेक ॥ आये जुतसमवसरन कृपाल, विचरत अभय व्याल मराल, फलित भई सकल तरुमाल । सब० ॥ १ ॥ नैन न हाल भृकुटी न चाल, वैन विदारै विभ्रमजाल, छविलखि होत संत निहाल । सब० ॥ २ ॥ वंदनकाज

साज समाज, संग लिये स्वजन पुरजन आज, श्रेणिक चलत है नरपाल । सब० ॥ ३ ॥ यों कहि मोदजुत पुरवाल, लखन चाली चरमजिन-पाल, दौलत नमत करधरभाल ॥ सब० ॥ ४ ॥

२१.

अरिरज[1]रह[2]स[3]हनन प्रभु अरहन, जैवंतो जग-में । देव अदेव सेवकर जाकी, धरहिं मौलि प-गमें ॥ अरिरज० ॥ टेक ॥ जा तनअष्टोत्तरसह-सलक्खन लखि कलिल शमें । जा वचदीपशि-खातें मुनि विचरैं शिवमारगमें ॥ अरिरज०॥१॥ जास पासतैं शोकहरनगुन, प्रगट भयो नगमें[4] । व्यालमरालकुरंगसिंघको, जातिविरोध गमें ॥ अरिरज० ॥ २ ॥ जा जस-गगन उलंघन कोऊ, क्षमें[5] न मुनीखगमें । दौल नाम तसु सुरतरु है या, भवमरुथलमगमें[6] ॥ अरि० ॥ ३ ॥

२२.

हे जिन तेरे मैं शरणे आया । तुम हो पर-

१ मोह । २ ज्ञानदर्शनावरणी । ३ आवरण । ४ अशोकवृक्षसें । ५ समर्थ । ६ संसाररूपी मारवाड देशके मार्गमें ।

मदयाल जगतगुरु, मैं भवभव दुख पाया ॥ हे जिन० ॥ टेक ॥ मोह महादुठ[1] घेर रह्यो मोहि, भवकानन[2] भटकाया। नित निज ज्ञानचरननिधि विसर्यो, तनधनकर अपनाया ॥ हे जिन० ॥ १ ॥ निजानंदअनुभवपियूष[3] तज, विषयहलाहल खाया। मेरी भूल मूल दुखदाई, निमित मोहविधि थाया ॥ हे जिन० ॥ २ ॥ सो दुठ होत शिथिल तुमरे ढिग, और न हेतु लखाया। शिवस्वरूप शिवमगदर्शक तुम, सुयश मुनीगन गाया ॥ हे जिन० ॥ ३ ॥ तुम हो सहजनिमित जगहितके, मो उर निश्चय भाया। भिन्न होहुं विधितैं[4] सो कीजे, दौल तुम्हें शिरनाया ॥ हे जिन० ॥ ४ ॥

२३.

हे जिन मेरी, ऐसी बुधि कीजे। हे जिन० ॥ टेक ॥ रागद्वेषदावानलतें बचि, समतारसमें भीजे। हे जिन० ॥ १ ॥ परमें त्याग अपनपो निजमें, लाग न कबहूं छीजे ॥ हे जिन० ॥ २ ॥

---

१ दुष्ट। २ संसाररूपीवन। ३ अमृत। ४ कर्मोंसे ५. आत्मत्व

कर्म कर्मफलमाहिं न राचै, ज्ञानसुधारस पीजे॥ हे जिन०॥ ३॥ मुझ कारजके तुम कारन वर, अरज दौलकी लीजे। हे जिन०॥ ४॥

२४.

शामरियाके नाम जपेतैं, छूटजाय भवभाम-रियां। शाम०॥ टेक॥ दुरित[2] दुरंत[3] पुन पुरत फुरतैं[4] गुन, आतमकी निधि आगरियां। विघटत है परदाह चाह झट, गटकंत[5] समरस गागरियां। शाम०॥ १॥ कटत कलंक कर्म कलसांयन[6], प्रगटत शिवपुरडांगरियां, फटत घटाघन मोह छोर्ह हट प्रगटत भेद ज्ञान घरियां॥ शाम०॥२॥ कृपाकटाक्ष तुमारीहीतैं, जुगलनागविपदा टरि-यां। धार भये सो मुक्तिरमावर, दौल नमैं तुव पागरियां॥ शाम०॥ ३॥

२५.

शिवमगदरसावन रावरो दरस। शिवमग०

---

१ भवभ्रमण। २ पाप। ३ छिपते हैं। ४ स्फुरित होता है। ५ गटकते हैं अर्थात् पीते हैं। ६ कालिख। ७ मोक्षका रास्ता। ८ रागद्वेष। ९ तुह्मारा नाम धारण करकें। १० आपको।

॥ टेक ॥ पर[1]-पद-चाह-दाह-गदनाशन, तुम वच-भेपज-पान सरस । शिवमग० ॥ १ ॥ गुणचित-वत निज अनुभव प्रघटै, विघटै विधिठग दुविध तरस । शिवमग० ॥ २ ॥ दौल अवाँ[2]ची संपति सांची; पाय रहै थिर राच सरस । शिवमग०॥३॥

२६.

मेरी सुध लीजे रिपभस्वाम । मोहि कीजें शिवपथगाम ॥ टेक ॥ मैं अनादि भवभ्रमत दुखी अव, तुम दुखमेटत कृपाधाम । मोहि मोह घेरा कर चेरा, पेरा चहुंगतिविपतठाम । मेरी० ॥ १ ॥ विपयन मन ललचाय हरी मुझ, शुद्धज्ञान-संपति ललाम । अथवा यो जड़को न दोप मम, दुख-सुखता, परनतिसुकाम ॥ मेरी० ॥ २ ॥ भाग जगे अव चरन जपे तुम, वच सुनके गहे सुगु[3]नग्राम । परमविराग ज्ञानमय मुनिजन, जपत तुमारी सुगु[4]नदाम ॥ मेरी० ॥ ३ ॥ निर्विकार संपतिकृति

---

१ पुद्गलसम्बन्धी चाहका दाहरूपीरोग नाशकरनेके लिये दवाई । २ अवाच्य, जिसका वर्णन न हो सके । ३ गुणोंके समूह । ४ गुणोंकी माला ।

तेरी, छविपर वारों कोटि काम । भव्यनिके भव-हारन कारन, सहज यथा तमहरन घाम[1] ॥ मेरी० ॥ ४ ॥ तुम गुनमहिमा कथनकरनको, गिनत गनी[2] निजबुद्धि खाम[3] । दौलतनी अज्ञान परनती, हे जगत्राता कर विराम ॥ मेरी० ॥ ५ ॥

२७.

मोहि तारो जी क्यों ना ? तुम तारक त्रिजग त्रिकालमें, मोहि० ॥ टेक ॥ मैं भवउदधि पस्यो दुख भोग्यो, सो दुख जात कह्यो ना । जामनमरन अनंततनो तुम, जाननमाहिं छिप्यो ना ॥ मोहि० ॥ १ ॥ विषय विरसरस विषम भख्यो मैं, चख्यो न ज्ञान सलोना । मेरी भूल मोहि दुख देवै, कर्मनिमित्त भलो ना ॥ मोहि० ॥ २ ॥ तुम पदकंज धरे हिरदै जिन, सो भवताप तप्यो ना । सुरगुरुहूके वचनकरनकर[5], तुम जसगगन नप्यो[6] ना ॥ मोहि० ॥ ३ ॥ कुगुरु कुदेव कुश्रुत सेये मैं, तुम मत हृदय धस्यो ना । परम-

---

१ सूरज । २ गणधर । ३ कोताही कमी । ४ की । ५ वचनरूपी किरणोंसे अथवा हाथों से । ६ मापा नहीं गया ।

विराग ज्ञानमय तुमजा,-ने विन काज सरो ना ॥ मोहि० ॥ ४ ॥ मो सम पतित[1] न और दया-निधि, पतिततार[2] तुम सो ना । दौलतनी अरदास[3] यही है, फिर भववास वसों ना ॥ मोहि० ॥ ५ ॥

२८.

मैं आयो, जिन शरन तिहारी । मैं चिरदुखी विभावभावतैं, स्वाभाविक निधि आप विसारी ॥ मैं० ॥ १ ॥ रूप निहार धार तुम गुन सुन, वैन होत भवि शिवमगचारी । यों ममकारजके कारन तुम, तुमरी सेव एव उरधारी ॥ मैं० ॥ २ ॥ मिल्यो अनंत जन्मतें अवसर, अब विनऊं हे भव-सरतारी । परमें इष्ट अनिष्ट कल्पना, दौल कहै झट मेट हमारी ॥ मैं० ॥ ३ ॥

२९.

मैं हरख्यो निरख्यो मुख तेरो । नासान्यस्त[4]-नयन भ्रूहलय[5] न, वयन निवारन मोह अंधेरो ॥ मैं० ॥ १ ॥ परमें कर मैं निजबुधि अबलों, भव-

---

१ पापी । २ पापियोंका तारनेवाला । ३ अर्जी । ४ नासिकापर लगाई है दृष्टि जिसने ५ हिलते नहीं हैं ।

सरमें दुख सह्यो घनेरो । सो दुखभानन स्वपर-पिछानन, तुमविन आन न कारन हेरो ॥ मैं० ॥ २ ॥ चाह भई शिवराहलाहकी[1], गयो उछाह असंजमकेरो । दौलत हितविराग चित आन्यो, जान्यो रूप ज्ञानदृग मेरो ॥ मैं० ॥ ३ ॥

३०.

प्यारी लागै म्हाने जिन छवि थारी ॥ टेक ॥ परमनिराकुलपद दरसावत, वर विरागताकारी । पटभूषन विन पै सुंदरता, सुरनरमुनिमनहारी ॥ प्यारी० ॥ १ ॥ जाहि विलोकत भवि निज निधि लहि, चिरविभावता टारी । निरनिमेषतें[2] देख सचीपति[3], सुरतां[4] सफल विचारी ॥ प्यारी० ॥२॥ महिमा अकथ होत लख ताको, पशु सम सम-कितधारी । दौलत रहो ताहि निरखनकी, भव भव टेव हमारी ॥ प्यारी० ॥ ३ ॥

३१.

निरख सुख पायो, जिन मुखचंद । नि० ॥ टेक ॥ मोह महातम नाश भयो है, उरअंबुज

---

१ लाभ–प्राप्तिकी । २ टिमकाररहित । ३ इन्द्र । ४ देवपणा ।

प्रफुलायो। ताप नस्यो वढ़ि उदधि अनंद। निरख० ॥ १ ॥ चकवी कुमति विछुर अति विलखै, आतमसुधा स्रवायो। शिथिल भये सब विधिगनफंद ॥ निरख० ॥ २ ॥ विकट भवोदधिको तट निकट्यो, अघतरुमूल नसायो। दौल लह्यो अव सुपद स्वछंद ॥ निरख० ॥ ३ ॥

३२.

निरख सखि ऋषिनको ईश यह ऋषभ जिन, परखिके स्वपर परसौंज छारी। नैन नाशाग्र धरि मैन[२] विनसायकर, मौनजुत स्वास दिशि-सुरभिकारी[३] ॥ निरख० ॥ १ ॥ धरासम क्षांतियुत नरामरखचरनुत[४], वियुत[५]रागादिमद दुरित[६]हारी। जास क्रमपास[७] भ्रमनाश पंचास्य[८] मृग, वासकरि प्रीतिकी रीति धारी ॥ निरख० ॥ २ ॥ ध्यानदव-[९]माहिं विधिदारु[१०] प्रजरांहि शिर, केशशुभ जिमि धुआं दिशि विथौरी[११]। फँसे जगपंक जनरंक तिने

१ परपरणति। २ काम। ३ दिशाओंको सुगन्धित करनेवाली। ४ मनुष्य देव विद्याधरोंसे वन्दनीय। ५ रहित। ६ पाप। ७ चरण। ८ सिंह। ९ ध्यानरूपी अग्निमें। १० कर्मरूपी ईंधन। ११ विस्तारी।

काढ़ने, किधों जगनाह यह बाँह सारी[1] ॥ निरख० ॥ ३ ॥ तप्त हाटकवरन[2] वसन विन आभरन, खरे थिर ज्यों शिखर मेरुकारी[3] । दौलको दैन शिवधौल[4] जगमौल जे, तिन्हें करजोर वंदन हमारी ॥ निरख० ॥ ४ ॥

३३.

ध्यानकृपान[5] पानि गहि नासी, त्रेसठ प्रकृति अरी । शेष पचासी[6] लाग रही हैं, ज्यों जेवरी जरी ॥ ध्यान० ॥ टेक ॥ दुठ अनंगमातंगभंगकर[7], है प्रबलंगहरी[8] । जा पदभक्ति भक्तजन-दुख दावानल-मेघझरी ॥ ध्यान० ॥ १ ॥ नवल धवल पल[9] सोहै कलमें[10], क्षुधतृषव्याधि टरी । हलत न पलक अलक[11] नख बढ़त न, गति नभमाहिं करी । ध्यान० ॥ २ ॥ जा विन शरन मरनजरधरधर, महा असात भरी । दौल तास पद दास होत हैं, बास मुक्तिनगरी ॥ ध्यान० ॥ ३ ॥

---

१ पसारी । २ तपाये हुए सोनेकासा रंग । ३ मेरुका । ४ मुक्तिरूपी महल । ५ ध्यानरूपी तलवार । ६ घातियाकर्मोंकी प्रकृतियें । ७ कामदेवरूपी हस्तीको मारनेवाले । ८ बलवान् सिंह । ९ मांस व रुधिर । १० शरीरमें । ११ केश ।

३४.

दीठा भागनतैं जिन[1]पाला, मोहनाशनेवाला। दिठा० ॥ टेक ॥ सुभग निशंक रागविन यातें, वसन न आयुध बा[2]ला। मोह० ॥ १ ॥ जास ज्ञानमें युगपत भासत, सकल पदारथमाला। मोह० ॥ २ ॥ निजमें लीन हीन इच्छा पर,- हितमितवचन रसाला। मोह० ॥ ३ ॥ लखि जाकी छवि आतमनिधि निज, पावत होत निहाला। मोह० ॥ ४ ॥ दौल जासगुन चिंतत रत है, निकट विकट भवनाला ॥ मोह० ॥ ५ ॥

३५.

थारा तो वैनों[3]में सरधान घणो छै, म्हारै छ- विनिरखत हिय सरसावै। तुम[4]धुनिघन [5]परचहन दहनहर, वर समता-रस-झर वरसावै। थारा ॥ १ ॥ रूपनिहारत ही बुधि है सो, निजपर-

---

१ सम्यग्दृष्टीसे लगाकर बारहवें गुणस्थानतकके जीवोंको जिन संज्ञा है, उनका रक्षक। २ स्त्री। ३ वचनोंमें ४ आपका वाणीरूप मेघ। ५ परपदार्थोंकी चाहरूपी अग्निको बुझानेवाला है।

चिह्न जुदे दरसावै। मैं चिदंक[1] अकलंक अमल थिर, इन्द्रियसुखदुख[2] जड़फरसावै।थारा० ॥ २ ॥ ज्ञानविरागसुगुनतुम तिनकी, प्रापतिहित सुरप[3]ति तरसावै। मुनि बड़भाग लीन तिनमें नित, दौल धवल[4] उपयोग रसावै ॥ थारा० ॥ ३ ॥

३६.

त्रिभुवनआनँदकारी जिन छवि, थारी नैननिहारी। त्रिभु० ॥ टेक ॥ ज्ञान अपूरब उदय भयो अब, या दिनकी बलि हारी। मो उर मोद बढ़ो जु नाथ सो, कथा न जात उचारी। त्रिभु० ॥ १ ॥ सुन घनघोर मोरमुद ओर न, ज्यों निधिपाय भिखारी। जाहि लखत झट झरत मोहरज, होय सो भवि अविकारी ॥ त्रिभु० ॥ २ ॥ जाकी सुंदरता सु पुरंदर-शोभ[5] लजावनहारी। निज अनुभूति सुधाछवि पुलकित, वदन मदन अरिहारी ॥ त्रिभु० ॥ ३ ॥ शूल[6] दुकूल[7] न बाला

---

१ चैतन्यस्वरूप। २ इंद्रियजन्य सुखदुख जडका स्पर्श करते हैं मेरा नहीं, मुझे सुखदुख नही होते। ३ इन्द्र। ४ विशुद्ध—निर्मल। ५ इन्द्रकी शोभा। ६ त्रिशूल। ७ वस्त्र।

माला, मुनिमनमोद प्रसारी। अरुन न नैनन सैन भ्रमै न न, वंक न लंकै सम्हारी ॥ त्रिभु० ॥ ४ ॥ तातैं विधिविभाव क्रोधादि न लखियत हे जगतारी। पूजत पातकपुंज पलावत, ध्यावत शिवविस्तारी ॥ त्रिभु० ॥ ५ ॥ कामधेनु सुरतरु चिंतामनि, इकभव सुखकरतारी। तुम छवि लखत मोदतैं जो सुर, सो तुमपद दातारी ॥ त्रिभु० ॥ ६ ॥ महिमा कहत न लहत पार सुर,-गुरुहूकी बुधि हारी। और कहै किम दौल चहै इम, देहु दशा तुमधारी ॥ त्रिभु० ॥ ७ ॥

३७.

जिन छवि तेरी यह, धन जगतारन। जिन छवि० ॥ टेक ॥ मूल[1] न फूल[2] दुकूल[3] त्रिशूल न, शमदमकारन भ्रमतमवारन। जिन० ॥ १ ॥ जाकी प्रभुताकी महिमातें, सुरनधीशता लागत सार न। अवलोकत भविथोक मोख मग, चरत वरत निजनिधि उरधारन। जिन० ॥ २ ॥ जंजत

१ कमर। २ जटा वा वल्कल। ३ फूलोंकी माला। ४ वस्त्र। ५ इन्द्रपणा। ६ आपके पूजनेसे यदि पाप भागते हैं, तो इसमें क्या आश्चर्य है?

भजंत अघ तो को अचरज ? समकित पावन भावनकारन । तासु सेवफल एव चहत नित, दौलत जाके सुगुन उचारन ॥ जिन छ० ॥ ३ ॥

३८.

चलि सखि देखन नाभिरायघर, नाचत हरि नटवा[1] । चल० ॥ टेक ॥ अद्भुत तालमान शुभलययुत, चवंत[2] राग षटवा[3] । चलसखि० ॥ १ ॥ मनिमय नूपुरादिभूषनदुति, युत सुरंग पटवा[4] । हरिकरनखन नखनपै[5] सुरतिय, पगफेरत कटवा[6] ॥ चल० ॥ २ ॥ किन्नर करधर बीनबजावत, लावत लय झटवा[7] । दौलत ताहि लखें चख[8] तृपते, सूझत शिवबटवा[9] ॥ चल० ॥ ३ ॥

३९.

आज गिरराज निहारा, धनभाग हमारा । श्रीसम्मेद नाम है जाको, भूपर तीरथ भारा ॥ आज गिर० ॥ टेक ॥ तहां बीसजिन मुक्ति पधारे, अवर मुनीश अपारा । आरजभूमिशि-

---

१ इन्द्ररूपी नट । २ गाते हैं । ३ छै राग । ४ कपडे । ५ इन्द्रके हाथोंके नखोंपर । ६ कमर । ७ शीघ्र ही । ८ नेत्र । ९ मोक्षमार्ग ।

स्वामनि सोहै, सुरनरमुनि-मन-प्यारा ॥ आज० गिर० ॥ १ ॥ तहँ थिर योग धार योगीसुर, निज-परतत्त्व विचारा । निज स्वभावमें लीन होयकर, सकल विभाव निवारा ॥ आज गिर० ॥२॥ जाहि जजत भवि भावनतैं जब, भवभवपातक टारा । जिनगुनधार धर्मधन संचो, भवदारिद्र हरतारा ॥ आज गिर० ॥ ३ ॥ ईक नभ नव ईक वर्ष माघवदि, चौदश वासर सारा । माथनाय जुतसाथ दौलने, जय जय शब्द उचारा ॥ आज गिर० ॥ ४ ॥

४०.

आज मैं परम पदारथ पायो, प्रभुचरनन चित लायो । आज० ॥ टेक ॥ अशुभ गये शुभ प्रगट भये हैं, सहजकल्पतरु छायो । आज० ॥ १ ॥ ज्ञानशक्ति तप ऐसी जाकी, चेतनपद दरशायो । आज० ॥ २ ॥ अष्टकर्म रिपु जोधा जीते, शिव अंकूर जमायो । आज० ॥ ३ ॥

४१.

नेमिप्रभूकी श्यामवरन छवि, नैननछाय रही

॥ टेक ॥ मणिमय तीनपीठपर अंबुज, तापर अधर ठही । नेम० ॥ १ ॥ मारमार[1] तपधार जार विधि, केवल ऋद्धि लही । चारतीस अतिशय दुतिमंडित, नवदुग[2]दोष नहीं । नेम० ॥ २ ॥ जाही सुरासुर नमत सतंत[3], मस्तकतें परस मैंही[4] । सुरगुरुवरअम्बुजप्रफुलावन अद्भुत भान सही । नेम० ॥ ३ ॥ धर अनुराग विलोकत जाको, दुरित नशैं सब ही । दौलत महिमा अतुल जासकी कापै जात कही । नेम० ॥ ४ ॥

४२.

अहो नमि जिनप नित नमत शतसुरप[5], कंदर्पगज[6]दर्प[7]नाशन प्रबल पनलपन[8] । अहो० ॥ टेक ॥ नाथ! तुमबानि पयपान जे करत भवि, नशै तिनकी जरामरनजामनतपन । अहो नमि० ॥ १ ॥ अहो शिवभौन तुम चरणचिंतौन जे, करत तिन जरत भावीदुखद[9] भवविपन[10], ॥ हे

१ कामदेवको मारके । २ अष्टादश । ३ निरन्तर । ४ पृथिवी । ५ सौ इन्द्र । ६ कामदेव । ७ गर्व । ८ पन=पांच हैं, लपन=मुख जिसके ऐसा पंचानन अर्थात् सिंह । ९ भविष्यत्‌में दुखदेनेवाले । १० संसाररूपी वन ।

भुवनपाल तुम विशद[1]गुनमाल उर धरे तें लहें टुक, कालमें श्रे[2]यपन । अहो नमि० ॥ २ ॥ अहो गुनतूप[3] तुमरूप चखसहसकरि, लखत सन्तोष प्रापति भयो नाकप[4] न ॥ अज[5] ! अकल[6] ! तज सकल दुखद परिगह कुगह[7], दुसहपरिसह सही धार व्रतसारपन । अहो० ॥ ३ ॥ पाय केवल सकल लोक करवत लख्यो, अख्यो वृष द्विधा सुनि नशत भ्रमतमझपंन ! नीच कीचक कियो मीचतें[10] रहित जिम, दास[11]को पास ले नाश भववास पंन[12] । अहो नमि० ॥ ४ ॥

४३.

प्रभु[13] मोरी ऐसी बुधि कीजिये । रागदोषदावानलसे बच, समतारसमें भीजिये । प्रभु० ॥टेक॥ परमें त्याग अपनपो निजमें, लाग न कबहूं

---

१ स्वच्छ । २ उत्तमता । ३ गुणोंके समूह । ४ इन्द्र । ५ नहीं है आगेंको जन्म जिसका । ६ निष्पाप । ७ खोटे ग्रह । ८ उपदेशा । ९ ढकन । १० मृत्युसे । ११ 'दौलको' ऐसा भी पाठ है । १२ पांचपरावर्त्तनरूप संसार । १३ इस पदके दौलतरामजीकृत होनेमें संदेह है ।

छीजिये। कर्म कर्मफल माहिं न राचत, ज्ञान सुधारस पीजिये। प्रभुमोरी० ॥ १ ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञान चरननिधि, ताकी प्राप्ति करीजिये। मुझकारजके तुम बड़कारन, अरज दौलकी लीजिये। प्रभु मोरी० ॥ २ ॥

४४.

वारी हो वधाई या शुभ साजै। विश्वसेन ऐरोदेवीगृह जिनभवमंगल छाजै। वारी० ॥ टेक॥ सब अमरेश अशेष विभवजुत, नगर नागपुर आये। नाग-दत्त सुरइन्द्रवचनतैं, ऐरावत सज धाये। लखजोजन शतवदन वदनवसु रद प्रतिसर ठहराये। सर-सर सौ-पन-वीस नलिनप्रति, पदम पचीस विराजै। वारी हो० ॥ १ ॥ पदमपदमप्रति अष्टोत्तरशत, ठने सुदल मनहारी। ते सब कोटि सताइसपै मुद, जुत नाचत सुरनारी। नवरसगान ठान काननको, उपजावत सुखभारी। वंकलैलावत लंकलचावत, दुतिलखि

१ न्यून न होवे। २ शान्तिनाथ भगवानकी माता। ३ भगवानके जन्मका उत्सव। ४ सम्पूर्ण। ५ हस्तिनापुर। ६ कुवेर। ७ दाँत।

दामनि लाजै । वारी हो० ॥ २ ॥ गोप[1] गोपतिय[2] जाय मायढिग, करी तास थुति सारी । सुखनिद्रा जननीको कर नमि, अंक[3] लियो जगतारी[4] । लै वसुमंगल द्रव्य दिशसुरीं[5] चलीं अग्रशुभकारी । हरखि हरी[6] चख सहस करी तव, जिनवर निरखनकाजै । वारी हो० ॥ ३ ॥ ता गजेन्द्रपैं प्रथम इन्द्रने, श्रीजिनेन्द्र पधराये । द्वितियैं[7] छत्र दिय तृतिय, तुरिय-हरि[8], मुदधारि चमर ढुराये । शेष[9]शक्र जयशब्द करत नभ, लंघ सुराचल[10] छाये । पांडुशिला जिन थाप नची सचि[11], दुंदुभिकोटिक बाजैं । वारी० ॥ ४ ॥ पुन सुरेशने श्रीजिनेशकोजन्मन्हवन शुभ ठानो । हेमकुंभ सुरहाथहिं हाथन, क्षीरोदधिजल आनो । वदनं[12] उदरअवगाह एक चौ, वसुयोजन परमानो । सहसआठकर करि हरि जिनशिर, ढारत जयधुनि

१ गुप्त रूपसे । २ इन्द्राणी । ३ गोदमें । ४ भगवान । ५ दिक्न्यका देवियाँ । ६ इन्द्र । ७ ऐशान इन्द्र । ८ सानत्कुमार और माहेन्द्र । ९ बाकीके सब इन्द्र । १० सुमेरु । ११ इन्द्राणी । १२ सोनेके कलशोंके मुख एक योजन, उदर चार योजन और गहराई आठ योजन थी ।

गाजै । वारी० ॥ ५ ॥ फिर हरिनारि[1] सिंगार स्वामितन, जजे सुरा जस गाये । पूरवली[2] विधिकर पयान मुद,-ठान पिताघर लाये । मनिमय आंगनमें कनकासन,-पै श्रीजिन पधराये । तांडव नृत्य कियो सुरनायक, शोभा सकल समाजै । वारी० ॥ ६ ॥ फिर हरि जगगुरुपितर[3]-तोष शान्तेश[4] घोष[5] जिन नामा । पुत्रजन्म उत्साह नगरमें, कियो भूप अभिरामा । साध सकल निजनिजनियोग सुर,-असुर गये निजधामा । त्रिपद[6]धारि जिनचारुचरनकी, दौलत करत सदा जै । वारी० ॥ ७ ॥

४६.

हे जिन ! तेरो सुजस उजागर, गावत हैं मुनिजन ज्ञानी । हे जिन० ॥ टेक ॥ दुर्जयमोह महाभट जाने, निजवश कीनें जगप्रानी । सो तुम ध्यानकृपान पानिगहि, ततछिन ताकी थिति

१ इन्द्राणी । २ पूर्वकी । ३ जिन भगवानके पिताकी स्तुतीकरके । ४ शान्तिनाथनाम । ५ घोषणा करके । ६ तीर्थंकरत्व, चक्रवर्तित्व और कामदेवत्व इन तीन पदोंके धारी ।

भानी। हे जिन० ॥ १ ॥ सुत्र अनादि अविद्या-निद्रा, जिन जन निजसुधि विसरानी। है सचेत तिन निजनिधि पाई, श्रवन सुनी जव तुम-वानी। हे जि० ॥ २ ॥ मंगलमय तू जगमें उत्तम, तुही शरन शिवमगदानी। तुवपद-सेवा परम औपधी, जन्मजरामृतगद[1] हानी। हे जिन० ॥ ३ ॥ तुमरे पंजकल्यानकमाहीं, त्रिभुवन मोद-दशा ठानी। विष्णु, विदंवर, जिष्णु, दिगम्बर, वुध, शिव कह ध्यावत ध्यानी। हे जिन० ॥ ४ ॥ सर्व दर्वगुनपरजयपरनति, तुम सुबोधमें नहिं छानी। तातें दौलदास उरआशा, प्रगट करो निजरससानी। हे जिन० ॥ ५ ॥

४६.

हे मन! तेरी को कुटेव यह, करनविषयमें[2] धावै है। हे मन० ॥ टेक ॥ इनहीके वश तू अना-दितैं, निजस्वरूप न लखावै है। पराधीन छिन छीन समाकुल, दुरगतिविपति चखावै है। हे

---

१ जन्ममरणजरारूपी रोग। २ इन्द्रियोंके विपयमें।

मन० ॥ १ ॥ फरस विषयके कारन वारन, गरतैंपरत दुख पावै है। रसना इंद्रीवश झँप जलमें, कंटक कंठ छिदावै है। हे मन० ॥ २ ॥ गंधलोल पंकज मुँद्रितमें अलि निजप्रान खपावै है। नयनविषयवश दीपशिखामें अंग पतंग जरावै है। हे मन० ॥ ३ ॥ करनविषयवश हिरन अरनमें, खलकर प्रान लुनावै है। दौलत तज इनको जिनको भज, यह गुरु शीख सुनावै है। हे० ॥ ४ ॥

४७.

हो तुम शठ अविचारी जियरा, जिनवृष पाय वृथा खोवत हो। हो तुम० ॥ टेक ॥ पी अनादि मदमोह स्वगुननिधि, भूल अचेत नींदसोवत हो। हो तुम० ॥ १ ॥ स्वहितसीखवच सुगुरु पुकारत, क्यों न खोल उरदृग जोवत हो। ज्ञानविसार विषयविष चाखत, सुरतरु जारि कनक

१ हाथी। २ गढेमें पड़कर। ३ मछली। ४ बंदकमलोंमें। ५ कानके विषयसे। ६ वनमें। ७ जिनधर्म। ८ हियेकी आंखें। ९ कल्पवृक्षको जलाकर। १० धत्तूरा।

वोवत हो ॥ हो तुम० ॥ २ ॥ स्वारथ सगे सकल जगकारन, क्यों निजपापभार ढोवत हो। नरभवसुकुल जैनवृप नौका, लह निज क्यों भवजल डोवत हो ॥ हो तुम० ॥ ३ ॥ पुण्यपापफल-वातव्याधिवश, छिनमें हँसत छिनक रोवत हो। संयमसलिल लेय निजउरके, कलिमल क्यों न दौल धौवत हो ॥ हो तुम० ॥ ४ ॥

४८.

हो तुम त्रिभुवनतारी हो जिन जी, मो भवजलधि क्यों न तारत हो ॥ टेक ॥ अंजन कियो निरंजन तातें, अधमउधारविरद धारत हो। हरि वराह मर्कट झट तारे, मेरी वेर ढील पारत हो। हो तुम० ॥ १ ॥ यों वहु अधम उधारे तुम तौ; मैं कहा अधम न मुहि टारत हो। तुमको करनो परत न कछु शिव,-पथ लगाय भव्यनि तारत हो। हो तुम० ॥ २ ॥ तुम छविनिरखत सहज टरै अघ, गुणचिंतत विधि रज झारत हो। दौल न और चहै मो दीजे, जैसी आप भावना रत हो। हो तुम० ॥ ३ ॥

४९.

मान ले या सिख मोरी, झुकै मत भोगन ओरी। मानले० ॥ टेक ॥ भोग भुजंगभोगसम[1] जानो, जिन इनसे रति जोरी। ते अनंत भव भीम[2] भरे दुख, परे अधोगति पौरी[3]; बँधे दृढ पाँतकडोरी[4] ॥ मान० ॥ १ ॥ इनको त्याग विरागी जे जन, भये ज्ञानवृषधोरी। तिन सुख लह्यो अचल अविनाशी, भवफांसी दई तोरी; रमै तिनसँग शिवगौरी। मान० ॥ २ ॥ भोगनकी अभिलाषहरनको, त्रिजग संपदा थोरी। यातैं ज्ञानानंद दौल अब, पियौ पियूष कटोरी; मिटै भवव्याधि कठोरी ॥ मान० ॥ ३ ॥

५०.

छांड़िदे या बुधि भोरी, वृथा तनसे रति जोरी। छांड० ॥ टेक ॥ यह पर है न रहै थिर पोषत, सकल कुमलकी झोरी। यासों ममता कर अनादितें, बँधो कर्मकी डोरी, सहै दुख

---

१ सर्पके फणकी समान। २ भयानक। ३ पौर। ४ पापकी डोरसें।

जलधि हिलोरी ॥ छांड़ि दे या बुधि भोरी; वृथा० ॥ १ ॥ यह जड़ है तू चेतन यौं ही, अपनावत बरजोरी । सम्यक्दर्शन ज्ञान चरण निधि; ये हैं संपत तोरी, सदा विलसौ शिव-गोरी ॥ छांड़ि दे या बुधि भोरी; वृथा० ॥ २ ॥ सुखिया भये सदीव जीव जे, यासें ममता तोरी । दौल सीख यह लीजे पीजे; ज्ञानपियूस कटोरी, मिटै परचाह कठोरी ॥ छांड़ि दे या बुधि भोरी; वृथा० ॥ ३ ॥

८१.

भाखूं हित तेरा; सुनि हो मन मेरा, भाखूं० ॥ टेक ॥ नरनरकादिक चारों गतिमें, भटक्यो तू अधिकानी । परपरनतिमें प्रीतिकरी निज-परनति नाहिं पिछानी; सहे दुख क्यों न घनेरा ॥ ॥ भाखूं० ॥ १ ॥ कुगुरुकुदेवकुपंथपंकफँसि, तैं बहु खेद लहायो । शिवसुख देन जैन जगदीपक, सो तैं कबहुं न पायो; मिट्यो न अज्ञानअँधेरा॥ भाखूं० ॥ २ ॥ दर्शनज्ञानचरन तेरी निधि, सो

विधिठगन[1] ठगी है । पांचों इंद्रिनके विषयनमें, तेरी बुद्धि लगी है, भया इनका तू चेरा ॥ भाखूं० ॥ ३ ॥ तू जगजालविषैं बहु उरझ्यो, अब कर ले सुरझेरा । दौलत नेमिचरनपंकजका, हो तू भ्रमर सेवेरा[2], नशै ज्यों दुख भवकेरा ॥ भाखूं० ॥ ४ ॥

५२.

ऐसा मोही क्यों न अधोगति जावै, जाको जिनवानी न सुहावै । ऐसा० ॥ टेक ॥ वीतरागसे देव छोड़कर, भैरव यक्ष मनावै । कल्पलता दयालुता तजि हिंसा इन्द्रायनि वावै[3] ॥ ऐसा० ॥ १ ॥ रुचै न गुरु निर्ग्रन्थभेष बहु, परिग्रही गुरु भावै । परधन परतियको अभिलाषै, अशनें[4] अशोधित[5] खावै ॥ ऐसा० ॥ २ ॥ परकी विभव देख है सोगी[6], परदुख हरख लहावै । धर्महेतु इक दाम न खरचै, उपँवन लक्ष बहावै[7] ॥ ऐसा० ॥ ३ ॥ जो गृहमें संचय बहु अघ तौ, वनहूमें उठ जावै । अम्बर त्याग कहाय दिगम्बर, वाघ-

१ कर्मरूपी ठगोंने । २ शीघ्र ही । ३ बोवै । ४ भोजन । ५ विनाशोधा हुआ । ६ दुःखी । ७ बाग बनानेमें लाखों रुपये ।

म्बर तन छावै ॥ ऐसा० ॥ ४ ॥ आरँभ तज शठ यंत्रमंत्र करि, जनपै पूज्य मनावै। धाम-वाम तज दासी राखै, बाहिर मढ़ी बनावै ॥ ऐसा० ॥ ५ ॥ नाम धराय जती तपसी मन, विषयनिमें ललचावै। दौलत सो अनंत भव भटकै, औरनको भटकावै ॥ ऐसा० ॥ ६ ॥

६३.

ऐसा योगी क्यों न अभयपद पावै, सो फेर न भवमें आवै। ऐसा० ॥ टेक ॥ संशय-विभ्रम-मोह-विवर्जित, स्वपरस्वरूप लखावै। लख परमातमचेतनको पुनि, कर्मकलंकमिटावै ॥ ऐसा योगी० ॥ १ ॥ भवतनभोगविरक्त[1] होय तन, नग्न सुभेष बनावै। मोहविकार निवार निजातम,-अनुभवमें चित लावै ॥ ऐसा योगी० ॥ २ ॥ त्रस-थावर-वध त्याग सदा परमाददशा छिटकावै। रागादिकवश झूंठ न भाखै, तृणहु न अदत्त[2] गहावै ॥ ऐसा योगी० ॥ ३ ॥ बाहिर नारि त्यागि अंतर चिद्ब्रह्म सुलीन रहावै। परमा-

---

१ संसार और देह भोगोसे विरक्त। २ विना दिया।

किंचन धर्मसार सो, द्विविधप्रसंग[1] वहावै ॥ ऐसा योगी० ॥ ४ ॥ पंचसमिति त्रयगुप्ति पाल व्यवहार-चरनमग धावै । निश्चय सकलकषायरहित है, शुद्धातम थिर थावै ॥ ऐसा योगी० ॥ ५ ॥ कुंकुम पंक दास रिपु तृण मणि, व्यालमाल सम भावै । आरतरौद्र कुध्यान विडारै, धर्मशुकलको ध्यावै ॥ ऐसा योगी० ॥ ६ ॥ जाके सुखसमाजकी महिमा, कहत इन्द्र अकुलावै । दौल तासपद होय दास सो, अविचलऋद्धि लहावै ॥ ऐसा०॥७॥

८४.

लखो जी या जिय भोरेकी वातैं, नित करत अहितहित घातैं । लखोजी० ॥ टेक ॥ जिन गनधर मुनि देशव्रती समकिती सुखी नित जातैं । सो पय ज्ञान न पान करत न, अघात[2] विषय-विष खातैं ॥ लखो० ॥ १ ॥ दुखस्वरूप दुखफै[3]-लद जलदसम[4]; टिकत न छिनक विलातैं । तजत न जगत न भजत पतित नित, रचत न फिरत

---

१ दो प्रकारका परिग्रह । २ तृप्त होता है । ३ दुखरूप फल देनेवाला । ४ बादल ।

तहांतैं ॥ लखो० ॥ २ ॥ देह-गेह-धन-नेह ठान अति, अघसंचत दिनरातैं । कुगति विपतिफलकी न भीत, निश्चिंत प्रमाददशातैं ॥ लखो० ॥ ३ ॥ कबहुं न होय आपनो परद्रव्यादि पृथक चतु-[1]घातैं । पैं अपनाय लहत दुख शठ नभ-[2]हतन चलावत लातैं ॥ लखो० ॥ ४ ॥ शिवगृहद्वार सार नरभव यह, लहि दश दुर्लभतातैं । खोवत ज्यों मनि कागउड़ावन, रोवत रंकपनातैं ॥ लखो० ॥ ५ ॥ चिदानंद निर्द्वंद स्वपद तज, अपद विपद-पंद[3] रातैं । कहत सुशिख गुरु गहत नहीं उर, चहत न सुख समतातैं ॥ लखो० ॥ ६ ॥ जैनबैन सुन भवि बहु भवहर, छूटे द्वंददशातैं । तिनकी सुकथा सुनत न मुनतैं[4] न, आतमबोधकलातैं ॥ लखो० ॥ ७ ॥ जे जन समुझि ज्ञानदृगचारित, पावन पयवर्षातैं । तापविमोह हस्यो तिनको जस, दौल त्रिभौन विख्यातैं ॥ लखो० ॥ ८ ॥

---

१ स्वचतुष्टयसे । २ आकाशके घात करनेको । ३ विपतिस्थानमें लवलीन । ४ मनन नहीं करता ।

५५.

सुनो जिया ये सतगुरुकी बातैं, हित कहत दयाल दयातैं । सुनो० ॥ टेक ॥ यह तन आन अचेतन है तू, चेतन मिलत न यातैं । तदपि पिछान एक आतमको, तजत न हठ शठतातैं ॥ सुनो० ॥ १ ॥ चहुंगति फिरत भरत ममताको, विषय महाविष खातैं । तदपि न तजत न रजत[1] अभागे, दृगव्रतबुद्धिसुधातैं[2] ॥ सुनो० ॥ २ ॥ मात तात सुत भ्रात स्वजन तुझ, साथी स्वारथनाते । तू इनकाज साज गृहको सब, ज्ञानादिक मत घातै ॥ सुनो० ॥ ३ ॥ तन धन भोग सँजोग सुपनसम, बार न लगत विलातैं । ममत न कर भ्रम तज तू भ्राता, अनुभव-ज्ञान-कलातैं ॥ सुनो० ॥ ४ ॥ दुर्लभ नरभव सुथल सुकुल है, जिन उपदेश लहा तैं । दौल तजो मनसों ममता ज्यों, निवड़ो द्वंद दशातैं ॥ सुनो० ॥ ५ ॥

५६.

मोही जीव भरमतमतैं नहिं, वस्तुस्वरूप लखै

१ रंजायमान होता है । २ दर्शनज्ञान चारित्ररूपी अमृतसे ।

है जैसें । मोही० ॥ टेक ॥ जे जे जड़ चेतनकी परनति, ते अनिवार[1] परनवैं वैसें[2] । वृथा दुखी शठ कर विकलप यों, नहिं परिनवैं परिनवैं ऐसें[3] मोही० ॥ १ ॥ अशुचि सरोग समल जड़मूरत, लखत विलात गगनघन जैसें । सो तन ताहि निहार अपनपो, चहत अबाध रहै थिर कैसें ॥ मोही० ॥ २ ॥ सुत-तिय-बंधु-वियोगयोग यों ज्यों सराय जन निकसै[4] पैसें[5] ॥ विलखत हरखत शठ अपने लखि, रोवत हँसत मत्तजन जैसें ॥ मोही० ॥ ३॥ जिन-रवि-वैन-किरन लहि जिन निज, रूप सुभिन्न कियो परमैंसें ॥ सो जगमौल दौलको चिर थित, मोहविलास निकास हृदैसें ॥ मोही० ॥ ४ ॥

८७.

ज्ञानी जीव निवार भरमतम, वस्तुस्वरूप विचारत ऐसें । ज्ञानी० ॥ टेक ॥ सुत तिय बंधु

---

१ जिसका निवारण नहीं हो सकता । २ जैसा परिणमन होना चाहिये वैसा । ३ इसप्रकार नहीं परिणमैं, किन्तु इसप्रकार अपनी इच्छानुसार परिणमै । ४ निकलैं । ५ प्रवेशकरें ।

धनादि प्रगट पर, ये मुझतैं हैं भिन्नप्रदेशैं । इनकी परनति है इन आश्रित, जो इन भाव परनवैं वैसें ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ देह अचेतन चेतन मैं इन, परनति होय एकसी कैसें । पूरनगलन[1] स्वभावधरै तन, मैं अज अचल अमल नभ जैसें ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ पर परिनमन न इष्ट अनिष्ट न, वृथा रागरुष द्वंद्व भयेसें । नसै ज्ञान निज फँसै बंधमें, मुक्त होय समभाव लयेसें ॥ ज्ञानी० ॥३॥ विषयचाहदवदाहनशै नहिं, बिन निज सुधासिंधुमें पैसें । अब जिनवैन सुने श्रवननतें, मिटै विभाव करूं विधि तैसें ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥ ऐसो अवसर कठिन पाय अब, निजहितहेत विलंब करेसें । पछताओ बहु होय सयाने, चेतत दौल छुटो भवभैसें ॥ ज्ञानी० ॥ ५ ॥

५८.

अपनी सुधि भूल आप, आप दुख उपायो, ज्यों शुक नभचाल विसरि नलिनी लटकायो ॥ अपनी० ॥ टेक ॥ चेतन अविरुद्धशुद्ध, दरश

---

१ पूरण होने और गलन होनेरूप स्वभाववालापुद्गल होता है ।

बोधमय विशुद्ध, तजि जड़-रस-फरस-रूप; पुद्ग-
लअपनायो । अपनी० ॥ १ ॥ इन्द्रियसुखदुखमें
नित्त, पाग रागरुखमें चित्त, दायकभवविपति-
वृंद, बंधको बढ़ायो । अपनी० ॥ २ ॥ चाहदाह
दाहै, त्यागौ न ताह चाहै, समतासुधा न गाहै
जिन, निकट जो वतायो । अपनी० ॥ ३ ॥
मानुषभव सुकुल पाय, जिनवरशासन लहाय,
दौल निजस्वभाव भज, अनादि जो न ध्यायो ।
अपनी० ॥ ४ ॥

८९.

जीव ! तू अनादिहीतैं भूल्यो शिवगैलवा[1] ।
जीव० ॥ टेक ॥ मोहमदवार पियो, स्वपद वि-
सार दियो, पर अपनाय लियो, इंद्रिसुखमें र-
चियो, भवतैं न भियो न तजियो मनमैलवा ।
जीव० ॥ १ ॥ मिथ्या ज्ञान आचरन, धरिकर
कुमरन, तीन लोककी धरन, तामें कियो है
फिरन, पायो न शरन न लहायो सुखशैलवा ।

---

[1] मोक्षका मार्ग ।

जीव० ॥ २ ॥ अब नरभव पायो, सुथल सुकुल आयो, जिन उपदेश भायो, दौल झट छिटकायो, परपरनति दुखदायिनी चुरैल[1]वा । जीव० ॥ ३ ॥

६०.

आपा नहिं[2] जाना, तूने कैसा ज्ञानधारी रे ॥ टेक ॥ देहाश्रित करि क्रिया आपको, मानत शिवमगचारी रे । आपा० ॥ १ ॥ निजनिवेद[3]-विन घोर परीसह, विफल कही जिन सारी रे । आपा० ॥ २ ॥ शिवचाहै तो द्विविधकर्मतैं[4], कर निजपरनति न्यारी रे । आपा० ॥ ३ ॥ दौलत जिन निजभाव पिछान्यो, तिन भवविपति विदारी रे । आ० ॥ ४ ॥

६१.

आतमरूप अनूपम अद्भुत, याहि लखें भवसिंधुतरो । आ० ॥ टेल ॥ अल्पकालमें भरत

---

१ चुड़ैल । २ 'न पिछाना' ऐसा भी पाठ है । ३ अपनी आत्माका स्वरूप जानेविना । ४ 'द्विविधधर्म कर' ऐसा भी पाठ है ।

चक्रधर, निज आतमको ध्याय खरो। केवल-ज्ञान पाय भवि बोधे, ततछिन पायो लोकशिरो[1] ॥ आ० ॥ १ ॥ या विनसमुझे द्रव्यलिङ्गिमुनि, उग्र[2] तपनकर भारभरो। नवग्रीवकपर्यन्त जाय चिर, फेर भवार्णवमाहिं[3] परो ॥ आत० ॥ २ ॥ सम्यग्दर्शन ज्ञानचरनतप, येहि जगतमें सार नरो[4]! । पूरव शिवको गये जांहिं अव, फिर जैहैं यह नियत[5] करो ॥ आ० ॥ ३ ॥ कोटिग्र-न्थको सार यही है, येही जिनवानी उचरो। दौल ध्याय अपने आतमको, मुक्तिरमा तव वेग वरो ॥ आ० ॥ ४ ॥

६२.

आप भ्रमविनाश आप आप जान पायो, कर्णधृत सुवर्ण जिमि चितार चैन थायो। आप० ॥ टेक ॥ मेरो तन तनमय तन, मेरो मैं तनको त्रिकाल यों कुबोध नश सुबोधभान जायो ॥ आप० ॥ १ ॥ यह सुजैनवैन ऐन, चिं-

---

१ मोक्षशिखर=सिद्धशिला। २ घोर। ३ भवसमुद्रमें। ४ हे पुरुषो! ५ निश्चय।

तत पुनि पुनि सुनैन[1], प्रगटो अब भेद निज[2], निवेदगुन बढ़ायो । आप० ॥ २ ॥ यों ही चित अचित मिश्र, ज्ञेय ना अहेय हेय, इंधन धनंज[3] जैसे, स्वौमियोग[4] गायो । आप० ॥ ३ ॥ भँमर पोत[5] छुटत झटति[6], बांछित तट निकटत जिमि, मोह रागरुख हर जिय, शिवतट निकटायो । आप० ॥ ४ ॥ विमल सौख्यमय सदीव, मैं हू मैं नहिं अजीव, द्योत होत रज्जुमय, भुजंग भय भगायो । आप० ॥ ५ ॥ यों ही जिनचंद सुगुन, चिंतत परमारथ चुन, दौल भाग जागो जब, अल्पपूर्व आयो । आप० ॥ ६ ॥

६२.

विषँयोंदा[7] मद भानै, ऐसा है कोई वे ॥ टेक ॥ विषय दुःख अर दुखफल तिनको, यों नित चित्त न ठानै । विषयोंदा० ॥ १ ॥ अनुपयोग उपयोग स्वरूपी, तनचेतनको मानै । विषयोंदा०

---

१ सुनयोंसे । २ आत्मज्ञान । ३ अग्नि । ४ उत्तम योग । ५ जहाज । ६ शीघ्र ही । ७ विषयोंका (पंजाबी) ।

॥ २ ॥ वरनादिक रागादि भावतैं, भिन्नरूप तिन जानैं । विषयोंदा० ॥ ३ ॥ स्वपर जान रुपराग हान, निजमें निज परनति सानै । विषयोंदा० ॥ ४ ॥ अंतर वाहरको परिग्रह तजि, दौल वसै शिवथानै । विषयोंदा० ॥ ५ ॥

६४.

और सवै जगद्वन्द मिटावो, लो लावो जिन आगमओरी । और० ॥ टेक ॥ है असार जगद्वंद्व वंधकर, ये कछु गरज न सारत तोरी । कमला[1] चपला[2] यौवन सुरधनु[3], स्वजन पथिकजन क्यों रति जोरी ॥ और० ॥ १ ॥ विषयकपाय दुखद दोनों भव, इनतैं तोर नेहकी डोरी । परद्रव्यनको तू अपनावत, क्यों न तजै ऐसी बुधि भोरी ॥ और० ॥ २ ॥ वीत जाय सागरथिति सुरकी, नरपरजायतनी अति थोरी । अवसरपाय दौल अव चूको, फिर न मिलै मनि सागरवोरी ॥ और० ॥ ३ ॥

---

१ लक्ष्मी । २ विजली । ३ इन्द्रधनुप ।

६५.

और अबै न कुदेव सुहावैं, जिन ! थाके चरनन रति जोरी। और० ॥ टेक ॥ कामकोहवश गहैं अशन असि, अंक[1]निशंक धरैं तिय गोरी। औरनके किम भाव सुधारैं, आप कुभाव-भार-धर-धोरी। और० ॥ १ ॥ तुम विनमोह अकोह-छोह[2]विन, छके शांतरस पीय कटोरी। तुम तज सेय[3] अमेय[4] भरी जो, जानत हो विपदा सब मोरी। और० ॥ २ ॥ तुम तज तिनैं भजै शठ जो सो, दाख न चाखत खात निमोरी। हे जगतार ! उधार दौल को, निकट विकट भवजलधि-हिलोरी[5] ॥ और० ॥ ३ ॥

६६.

कबधौं मिलैं मोहि श्रीगुरु मुनिवर, करि हैं भवदधि पारा हो। कबधौं० ॥ टेर ॥ भोगउदास जोग जिन लीनों, छांड़ि परिग्रहभारा हो। इंद्रियदमन वमन मद कीनो, विषय कषाय निवारा

१ गोदमें। २ क्रोधक्षोभरहित। ३ सेवा। ४ अपरिमाण। ५ भवसमुद्रकी लहरें।

हो ॥ कवधों० ॥ १ ॥ कंचन काचवरावर जिनकें, निंदक वंदक सारा हो । दुर्धरतप तप सम्यक् निज घर, मनवचतनकर धारा हो ॥ कवधों० ॥ २ ॥ ग्रीषम गिरि हिम सरितातीरें, पावस तरुतर ठारा हो । करुणाभीनें चीन त्रसथावर, ईर्यापंथ समारा हो ॥ कवधों० ॥ ३ ॥ मारमार व्रतधार शील दृढ़, मोहमहामल टारा हो । मास छमास उपास वास वन, प्रासुक करत अहारा हो ॥ कवधों० ॥ ४ ॥ आरतरौद्रलेश नहिं जिनके, धर्म शुकल चित धारा हो । ध्यानारूढ़ गूढ़ निजआतम, शुधउपयोग विचारा हो ॥ कवधों० ॥ ५ ॥ आप तरहिं औरनको तारहिं, भवजलसिंधुअपारा हो । दौलत ऐसे जैनजतिनको, नितप्रति धोक हमारा हो ॥ कवधों० ॥ ६ ॥

६७.

कुमति कुनारि नहीं है भली रे, सुमति नारि

---

१ सब । २ 'लीन' ऐसा भी पाठ है । ३ कामदेवको मारकर । ४ धर तप तपि समकित गहि निज चित, करि मनवचन सारा हो । मासमास उपवास वासवन ऐसा भी पाठ है । ५ आर्तध्यान । ६ रौद्रध्यान । ७ धर्मध्यान । ८ शुक्लध्यान ।

सुंदर गुनवाली कुमति० ॥ टेक ॥ वासों विरचि रचौ नित यासों, जो पावो शिवधाम गली रे । वह कुबजा दुखदा यह राधा, बाधाटारन करन रली रे ॥ कुमति० ॥ १ ॥ वह कारी परसों रति ठानत, मानत नाहिं न सीख भली रे । यह गोरी चिद्गुणसहचारिन[1], रमत सदा स्वसमाधि-थली रे ॥ कुमति० ॥ २ ॥ वासँग कुथल कुयोनि वस्यो नित, तहाँ महादुख-बेल फली रे । या सँग रसिक भविनकी निजमें, परिनति दौल भई न चली[2] रे ॥ कुमति० ॥ ३ ॥

६८.

गुरु कहत सीख इमि बारबार, विषसमविषयनको टार टार ॥ गुरु० ॥ टेक ॥ इन सेवत अनादि दुख पायो, जनममरन बहु धारधार । गुरु० ॥ १ ॥ कर्माश्रित बाधाजुतफांसी, बंधबढ़ावन द्वंदकार । गुरु० ॥ २ ॥ ये न इंद्रिके तृप्तिहेतु जिमि, तिस[3] न बुझावत क्षार[4]वार । गुरु०

---

१ ज्ञानगुणसहचारिणी । २ फिर चलायमान न हुई । ३ तृषा प्यास । ४ खारापानी ।

॥ ३ ॥ इनमें सुख कलपना अबुधके, बुधजन मानत दुख प्रचार । गुरु० ॥ ४ ॥ इन तजि ज्ञानपियूप चख्यो तिन, दौल लही भववारपार । गुरु० ॥ ५ ॥

६९.

घड़ि घड़ि पल पल छिन छिन निशदिन, प्रभुजीका सुमरन कर लै रे । घड़ि० ॥ टेक ॥ प्रभुसुमरेतें पाप कटत हैं, जनममरनदुख हर लै रे । घड़ि घड़ि० ॥ १ ॥ मनवचकाय लगाय चरनचित, ज्ञान हिये विच धर लैरे । घड़ि घड़ि० ॥ २ ॥ दौलतराम, धर्मनौका चढ़ि, भव-सागरतें तिर लै रे । घड़ि घड़ि० ॥ ३ ॥

७०.

चिन्मूरतदृग्धारीकी मोहि, रीति लगत है अँटापटी[1] । चिन्मू० ॥ टेक ॥ वाहिर नारकिकृत दुख भोगे, अंतर सुखरस गटागटी । रमत अनेक सुरनिसँग पै तिस, परनतितें नित हटा-हटी[2] ॥ चिन्मू० ॥ १ ॥ ज्ञानविरागशक्तितें

१ अटपटी । २ दूरपना ।

विधिफल[1], भोगत पैं विधि घटा[2]घटी । सदननिवासी तदपि उदासी, तातैं आस्रव छटाछटी ॥ चिन्मू० ॥ २ ॥ जे भवहेतु अबुधके ते तस, करत बन्धकी झटाझटी । नारक पशु तिय पंढ[3] विकलत्रय, प्रकृतिनकी ह्वै कटाकटी ॥ चिन्मू० ॥ ३ ॥ संयम धर न सकै पै संयम, धारनकी उर चटाचटी । तासु सुयशगुनकी दौलतके, लगी रहै नित रटारटी ॥ चिन्मू० ॥ ४ ॥

७१.

चेतन यह बुधि कौन सयानी, कही सुगुरु हितसीख न मानी ॥ टेक ॥ कठिन काक[4]ताली ज्यों पायो, नरभव सुकुल श्रवण जिनवानी । चेतन० ॥ १ ॥ भूमि न होत चांदनीकी ज्यों, त्यों नहिं धनी ज्ञेय[5]को ज्ञानी । वस्तुरूप यों तू यों ही शठ, हटकर पकरत सोंज विरानी ॥ चेतन० ॥ २ ॥ ज्ञानी होय अज्ञान रागरुष,–

१ कर्मफल । २ न्यूनपना । ३ नपुंसक । ४ काकतालीय न्यायसे अर्थात् जैसे ताड़वृक्षसे ताड़फलका टूटना और कागका उसे आकाशमें ही पा लेना कठिन है वैसे । ५ 'वहीरे' ऐसा भी पाठ है ।

कर निज सहज स्वच्छता हानी। इन्द्रिय जड़ तिनविषय अचेतन, तहां अनिष्ट इष्टता ठानी॥ चेतन०॥ ३॥ चाहै सुख दुख ही अवगाहै, अब सुनि विधि जो है सुखदानी। दौल आपकरि आप आपमें, ध्याय लाय लय समरससानी॥ चेतन०॥ ४॥

७२.

चेतन कौन अनीति गही रे, न मानै सुगुरु कही रे। चेतन०॥ जिन विषयनवश बहु दुख पायो, तिनसों प्रीति ठहीरे। चेतन०॥ १॥ चिन्मय है देहादि जड़नसौं, तो मति पागि रही रे। सम्यग्दर्शनज्ञानभाव निज, तिनको गहत नहीं रे॥ चेतन०॥ २॥ जिनवृष पाय विहाय रागरुष, निजहित हेत यहीरे। दौलत जिन यह[1] सीख धरी उर, तिन शिव सहज लही रे॥ चेतन०॥ ३॥

७३.

चेतन तैं यौं ही भ्रम ठान्यों, ज्यों मृग

---

१ 'निजसुधासुरुचि गहि' ऐसा भी पाठ है।

मृगतृष्णा जल जान्यो । चेतन० ॥ टेक ॥ ज्यों निशितममें निरख जेवरी, भुजग मान नर भय उर आन्यो । चेतन० ॥ १ ॥ ज्यों कुध्यान वश महिष मान निज, फँसि नर उरमाहीं अकुलान्यो । त्यों चिर मोह अविद्या पेख्यो, तेरो तैं ही रूप भुलान्यो ॥ चेतन० ॥ २ ॥ तोय तेल ज्यों मेल न तनको, उपज खपजमें[1] सुखदुख मान्यो । पुनि परभावनको करता है, तैं तिनको निज कर्म पिछान्यो ॥ चेतन० ॥ ॥ ३ ॥ नरभव सुथल सुकुल जिनवानी, काल-लब्धिबल योग मिलान्यो । दौल सहज भज उदासीनता, तोष-रोष[2] दुखकोष जु भान्यो[3] ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

७४.

चेतन अब धरि सहजसमाधि, जातें यह विनशै भव व्याधि । चेतन० ॥ टेर ॥ मोह ठग्योरी खायके रे, परको आपा जान । भूल

---

१ विनाशमें । २ रागद्वेष । ३ नष्ट किया ।

निजातम ऋद्धिको तैं, पाये दुःख महान ॥ चेतन० ॥ १ ॥ सादि अनादि निगोद दोयमें, पस्यो कर्मवश जाय । श्वासउसासमझार तहां भव, मरन अठारह थाय ॥ चेतन० ॥ २ ॥ कालअनंत तहाँ यों वीत्यो, जब भइ मंद कषाय । भू जल अ[1]निल अ[2]नल पुन तरु है, काल असंख्य गमाय ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ क्रम-क्रम निकसि कठिन तैं पाई, शंखादिक पर जाय । जल थल खचर होय अघ ठाने, तस वश [3]श्वभ्र लहाय ॥ चेतन० ॥ ४ ॥ तित साग-रलौं वहु दुख पाये, निकस कवहुं नर थाय । गर्भजन्म-शिशु-तरुण-वृद्ध-दुख, सहे कहे नहिं जाय। चेतन० ॥ ५॥ कवहूं किंचित पुण्यपाकतें चउविधि देव कहाय। विषयआश मन त्रास लही तहँ, मरनसमय विललाय ॥ चेतन० ॥ ६ ॥ यों अपार भवखारवारमें भ्रम्यो अनंते काल । दौलत अव निजभाव-नाव चढ़ि, लै भवाब्धिकी पाल ॥ चेतन० ॥ ७ ॥

१ वायुकाय । २ अग्निकाय । ३ नरक ।

७५.

जिंनरागदोषत्यागा वह सतगुरू हमारा । जिनराग० ॥ टेक ॥ तज राजरिद्ध तृणवत निज काज सँभारा । जिनराग० ॥ १ ॥ रहता है वह वनखंडमें, धरि ध्यान कुठारा । जिन मोह महा तरुको, जड़मूल उखारा ॥ जिनराग० ॥ २ ॥ सर्वांग तज परिग्रह, दिगअंबर धारा । अनंतज्ञानगुनसमुद्र, चारित्र भँडारा ॥ जिन-राग० ॥ ३ ॥ शुक्लाग्निको प्रजालके वसुकानन जारा । ऐसे गुरूको दौल है, नमोऽस्तु हमारा ॥ जिनराग० ॥ ४ ॥

७६.

चिदरायगुन सुनो सुनो, प्रशस्त गुरुगिरा । समस्त तज विभाव, हो स्वकीयमें थिरा । चिद० ॥ टेक ॥ निजभावके लखाव विन, भवाब्धिमें परा । जामन मरन जरा त्रिदोष, अग्निमें जरा ॥ चिद० ॥ १ ॥ फिर सादि औ

१ यह पद दौलतरामजीका नहीं मालूम होता, इसका पाठ भी गड़वड़ है ।

अनादि दो, निगोदमें परा । तहँ अंकके असं-
ख्यभाग, ज्ञान ऊवरा ॥ चिद० ॥ २ ॥ तहां
भव अंतर मुहूर्तके, कहे गनेश्वरा । छ्यासठ
सहस त्रिशत छतीस, जन्मधर मरा ॥ चिद०
॥ ३ ॥ यों वशि अनंतकाल फिर, तहांतें
नीसरा । भूजल अनिल अनल प्रतेक, तरुमें
तन धरा ॥ चिद० ॥ ४ ॥ अंधरीर कुंथु कान,
मच्छ अवतरा । जलथल खचर कुनर नरक,
असुर उपज मरा, ॥ चिद० ॥ ५ ॥ अवके
सुथल सुकुल सुसंग, वोध लहि खरा । दौलत
त्रिरतसाध लाध, पद अनुत्तरा ॥ चिद० ॥ ६ ॥

७७.

चित चिंतकैं चिदेश[1] कव, अशेष[2] पर[3] वमूं[4] ।
दुखदा अपार विधि[5] दुचार[6],-की चमूं[7] दमूं ॥
चित चिं० ॥ टेक ॥ तजि पुण्यपाप थाप आप,
आपमें[8] रमूं[9] । कव राग-आग शर्म-वाग[10],-दागनी

---

१ आत्मा । २ सम्पूर्ण । ३ परपदार्थ । ४ वमन कर दूं-छोड़ दूं । ५ कर्म । ६ दो चार अर्थात् आठ । ७ फौज । ८ आत्मामें । ९ रमण करूं । १० कल्याणरूप वागकी जलानेवाली ।

शमूं[1] ॥ चित चिंतकैं० ॥ १ ॥ दृगज्ञानभानतैं[2] मिथ्या, अज्ञानतम दमूं । कब सर्व जीव प्राणि[3]-भूत, सत्त्वसों छमूं ॥ चित चिंतकैं० ॥ २ ॥ जलमल्ललिप्त-कल[4] सुकल[5]-, सुवल्ल[6] परिनमूं । दलकें त्रिशल्लमल्ल[7] कव, अटलपद[8] पमूं ॥ चित चिंतकैं० ॥ ३ ॥ कब ध्याय अज अमरको फिर न, भव-विपिन भमूं । जिन पूर कौल[9] दौलको यह, हेतु हौं नमूं ॥ चितकैं० ॥ ४ ॥

७८.

जिन छवि लखत यह बुधि भयी । जिन० ॥ टेक ॥ मैं न देह चिदंकमय तन, जड़ फरस-रसमयी । जिनछवि० ॥ १ ॥ अशुभशुभफल कर्म दुखसुख, पृथकता सब गयी । रागदोष-विभावचालित, ज्ञानता थिर थयी ॥ जिनछवि० ॥ २ ॥ परिगहन आकुलता दहन, विनशि

---

१ शमन करूं, शांत करूं । २ दर्शन और ज्ञानरूपी सूर्यसे । ३ दशप्राणमयी । ४ जड़ । ५ शरीर । ६ शुक्लध्यानके वलसे । ७ माया, मिथ्यात, निदानरूप तीन शल्यरूपी पहलवानोंको । ८ मोक्षपद । ९ प्रतिज्ञा ।

शमता लयी । दौल पूर्रवअलभ आनँद, लह्यो भवथिति जयी ॥ जिन० ॥ ३ ॥

७९.

जिनवैन सुनत, मोरी भूल भगी । जिनवैन० ॥टेक॥ कर्मस्वभाव भाव चेतनको, भिन्न पिछानन सुमति जगी । जिन० ॥ १ ॥ जिन अनुभूति सहज ज्ञायकता, सो चिर रुष-तुष-मैल-पगी । स्यादवाद-धुनि-निर्मल-जलतैं, विमल भई सम-भाव लगी ॥ जिन० ॥ २ ॥ संशयमोहभरमता विघटी, प्रगटी आतमसोंज सगी । दौल अपू-रव मंगल पायो, शिवसुख लेन होंस उमगी ॥ जिन० ॥ ३ ॥

८०.

जिनवानी जान सुजान रे । जिनवानी० ॥ टेक ॥ लागरही चिरतैं विभावता, ताको कर अवसान रे । जिनवानी० ॥ १ ॥ द्रव्यक्षेत्र अरु कालभावकी, कथनीको पहिचान रे । जाहि पिछाने स्वपरभेद सब, जाने परत निदान रे ।

१ पूर्वमें जिसका लाभ नहीं हुआ ऐसा । २ निजपरणति ।

जिनवानी० ॥ २ ॥ पूरव जिन जानी तिन-हीने, भानी संसृतवान[2] रे । अब जानैं अरु जानैंगे जे, ते पावें शिवथान रे ॥ जिनवानी० ॥ ३ ॥ कह 'तुषमाष' मुनी शिवभूती, पायो केवल-ज्ञान रे । यों लखि दौलत सतत करो भवि, चिद्वचनामृतपान रे ॥ जिनवानी० ॥ ४ ॥

८१.

जम आन अचानक दावैगा, जम आन० ॥ टेक ॥ छिनछिन कटत घटत थित[3] ज्यों जल, अंजुलिको झर जावैगा । जम आन० ॥ १ ॥ जन्म[4] तालतरुतें पर जियफल, कोंलग बीच रहावैगा । क्यों न विचार करै नर आखिर, मरन महीमें आवैगा ॥ जम आन० ॥ २ ॥ सोवत मृत जागत जीवत ही, श्वासा जो थिर थावैगा । जैसें कोऊ छिपै सदासों, कबहूं अवशि पलावैगा[5] ॥ जम आन० ॥ ३ ॥ कहूं कबहुं कैसें हू कोऊ,

---

१ नाश की । २ भ्रमणकी आदत । ३ आयु । ४ जन्मरूपी ताड़वृक्षसे पड़ करके जीवरूपी फल वीचमें कबतक रहेगा ? वह तो नीचे पड़ेगा ही, अर्थात् मरेगा ही । ५ भागैगा ।

अंतक[1]से न बचावैगा । सम्यक्ज्ञानपियूष[2] पियेसों, दौल अमरपद पावैगा ॥ जम आन० ॥ ४ ॥

८२.

छांड़त क्यों नहिंरे, हे नर ! रीति अयानी । वारवार सिख देत सुगुरु यह, तू दे आनाकानी ॥ छांड़त० ॥ टेक ॥ विषय न तजत न भजत बोध व्रत, दुखसुखजाति न जानी । शर्म चहै न लहै शठ ज्यों घृतहेत विलोवत पानी ॥ छांड़त० ॥ १ ॥ तन धन सदन स्वजनजन तुझसों, यह परजाय विरानी । इन परिनमन-विनश-उपजनसों, तैं दुख सुखकर मानी ॥ छांड़त० ॥ २ ॥ इस अज्ञानतैं चिरदुख पाये, तिनकी अकथ कहानी । ताको तज दृग-ज्ञान-चरन- भज, निजपरनति शिवदानी ॥ छांड़त० ॥ ३ ॥ यह दुर्लभ नरभव सुसँग लहि, तत्त्व-लखावन वानी । दौल न कर अब परमें ममता, धर समता सुखदानी ॥ छांड़त० ॥ ४ ॥

---

१ जमराजसे । २ सम्यग्ज्ञानरूपी अमृत ।

८३.

राचि रह्यो परमाहिं तू अपनो रूप न जानै रे । राचि रह्यो० टेक ॥ अविचल चिनमूरत विनमूरत, सुखी होत तस ठानै रे । राचि रह्यो० ॥ १ ॥ तन धन भ्रात तात सुत जननी, तू इनको निज जानै रे । ये पर इनहिं वियोगयोगमें, यों ही सुख दुख मानै रे ॥ राचि० ॥ २ ॥ चाह न पाये पाये तृष्णा, सेवत ज्ञान जघानै रे ॥ विपतिखेत विधिवंधहेत पैं, जान विषय रस खानै रे ॥ राचि० ॥ ३ ॥ नरभव जिनश्रुतश्रवण पाय अब, कर निज सुहित सयानै रे । दौलत आतम-ज्ञान-सुधारस, पीवो सुगुरु बखानै रे ॥ राचि रह्यो० ॥ ४ ॥

८४.

तू काहेको करत रति तनमें, यह अहित-मूल जिम कारासदन[1] । तू काहेको० ॥ टेक ॥ चरमपिहित[2] पलरुधिर[3]-लिप्त मल,-द्वारस्रवै छिन-

---

१ कारागार जहलखाना । २ चमड़ेसे ढकी हुई । ३ मांस ।

छिनमें । तू काहेको० ॥ १ ॥ आयु-निगड़फंसि विपति भरै सो, क्यों न चितारत मनमें । तू काहेको० ॥ २ ॥ सुचरन लाग त्याग अब याको, जो न भ्रमै भववनमें । तू काहेको० ॥ ॥ ३ ॥ दौल देहसों नेह देहको,-हेतु कह्यो ग्रंथ-नमें । तू काहेको० ॥ ४ ॥

८५.

धन धन साधर्मीजन मिलनकी घरी, बरसत भ्रमतापहरन ज्ञानघनझरी ॥ टेक ॥ जाके बिन पाये भवविपति अति भरी । निजपरहित अहि-तकी कछू न सुध परी ॥ धन० ॥ १ ॥ जाके परभाव चित्त सुथिरता करी । संशय भ्रम मोहकी सु वासना टरी ॥ धन० ॥ २ ॥ मिथ्या-गुरुदेवसेव टेव परिहरी । वीतरागदेव सुगुरुसेव उरधरी ॥ धन० ॥ ३ ॥ चारों अनुयोग सुहि-तैदेश दिठपरी । शिवमगके लाहकी सुचाह विस्तरी ॥ धन० ॥ ४ ॥ सम्यक् तरुधरनि येह

---

१ आयुरूपी बेड़ियोंमें । २ हितोपदेश । ३ लाभकी ।

करन[1]-करिहरी । भवजलको तरनि[2]-समर[3]-भुजग-विषजरी ॥ धन० ॥ ५ ॥ पूरवभव या प्रसाद रमनि शिववरी । सेवो अब दौल याहि बात यह खरी ॥ धन० ॥ ६ ॥

८६.

धनि मुनि जिनकी, लगी लौ[4] शिवओरनै[5] । धनि ॥ टेक ॥ सम्यग्दर्शनज्ञानचरन-निधि, धरत हरत भ्रमचोरनै । धनि० ॥ १ ॥ यथाजात[6]मुद्रा-जुत सुंदर, सदन विजन[7] गिरिकोरनै । तृन कंचन अरि स्वजन गिनत सम, निंदन और निहोरनै[8] । धनि० ॥ २ ॥ भवसुखचाह सकल तजि बल सजि, करत द्विविध तप घोरनै ॥ परमविरागभाव पवितैं[9] नित, चूरत करम कठोरनै ॥ धनि० ॥ ३ ॥ छीन शरीर न हीन चिदानन, मोहत मोहझकोरनै । जग-तप-हर

---

१ इंद्रियरूपी हाथियोंको सिंहके समान । २ जहाज । ३ कामदेवरूपी सर्पके लिये विषनाशक जड़ी । ४ लगन । ५ 'नै' विभक्ति सब जगह 'को' के अर्थमें है । ६ नग्न दिगम्बर । ७ निर्जन । ८ प्रार्थना करनेको । ९ वज्रसे ।

भवि-कुमुद-निशाकर[1] मोदन दौल चकोरनै ॥ धनि ० ॥ ४ ॥

८७.

धनि मुनि जिन यह, भाव पिछाना। धनि० ॥ टेक ॥ तनव्यय वांछित प्रापति मानी, पुण्य-उदय दुख जाना। धनि० ॥ १ ॥ एकविहारि सकल ईश्वरता[2], त्याग महोत्सव माना। सब सुखको परिहार सार सुख, जानि रागरुष-भाना ॥ धनि० ॥ २ ॥ चित्स्वभावको चिंत्य प्रान निज, विमल-ज्ञानदृगसाना[3] । दौल कौन सुख जान लह्यो तिन, करो शांतिरसपाना ॥ धनि० ॥ ३ ॥

८८.

धनि मुनि निज आतमहित कीना। भव असार तन अशुचि विषय विष, जान महाव्रत लीना ॥ धनि मुनि जिन आतमहित० ॥ टेक ॥ एकाविहारी परिगहछारी-परिसहसहत

---

१ भव्यरूपी कुमोदनीको चन्द्रमा। २ ऐश्वर्य। ३ सम्यग्ज्ञान, सम्यग्दर्शनसहित।

अरीना । पूरबतन तपसाधन मान न, लाज गनी परवीना ॥ धनि मुनि० ॥ १ ॥ शून्य सदन गिर गहन गुफामें, पदमासन आसीना । परभावनतैं भिन्न आपपद, ध्यावत मोहविहीना ॥ धनि मुनि० ॥ २ ॥ स्वपरभेद जिनकी बुधि निजमें, पागी बाह्य लगीना । दौल तास पद-वारिजरजने[1], किस[2] अँघ[3] करे न छीना ॥ धन मुनि० ॥ ३ ॥

८९.

निपट अयाना, तैं आपा न जाना, नाहक भरम भुलाना बे । निपट० ॥ टेक ॥ पीय अनादि मोहमद मोह्यो, परपदमें निज माना बे । निपट० ॥ १ ॥ चेतन चिह्न भिन्न जड़तासों, ज्ञानदरशरस-साना वे । तनमें छिप्यो लिप्यो न तदपि ज्यों, जलमें कँजदल[4] माना बे ॥ निपट० ॥ २ ॥ सकलभाव निजनिजपरनति-मय, कोइ न होय बिराना बे । तू दुखिया पर-

---

१ चरणरूपी कमलोंकी धूलिने । २ किसके । ३ पाप । ४ कमलपत्र ।

कृत्य मानि ज्यों, नभताड़न[1]-श्रमठाना वे ॥ निपट० ॥ ३ ॥ अजगनमें[2] हरि[3] भूल अपनपो, भयो दीन हैराना वे । दौल सुगुरुधुनि सुनि निजमें निज, पाय लह्यो सुखथाना वे ॥ निपट० ॥ ४ ॥

९०.

निजहितकारज करना भाई ! निजहित कारज करना ॥ टेक ॥ जनममरनदुख पावत जातें, सो विधिवंध[4] कतरना । निज० ॥ १ ॥ ज्ञानदरस अरु राग फरस रस, निजपरचिन्ह भ्रमरना । संधिभेद बुधिछैनीतैं[5] कर, निज गहि पर परिहरना ॥ निजहित० ॥ २ ॥ परिग्रही[6] अपराधी शंकै, त्यागी अभय विचरना । त्यों परचाह वंध दुखदायक, त्यागत सब सुख भरना ॥ निजहित० ॥ ३ ॥ जो भवभ्रमन न चाहे तो अब, सुगुरुसीख उर धरना । दौलत स्वरस

१ आकाशको पीटने जैसा । २ बकरोंमें । ३ सिंह । ४ कर्मबन्ध । ५ बुद्धिरूपी छैनीसे निज और परका संधिभेद करना । ६ परिग्रहका धारी तथा परकी वस्तु ग्रहणकरनेवाला चोर ।

सुधारस चाखो, जो विनसै भवमरना ॥ निजहित० ॥ ४ ॥

९१.

मनवचतन करि शुद्ध भजो जिन, दाव[1] भला पाया । अवसर फेर मिलै नहिं ऐसा, यों सतगुरु गाया ॥ मनवच० ॥ टेक ॥ वस्यो अनादिनिगोद निकसि फिर, थावर देह धरी । काल असंख्य अकाज गमायो, नेकु न समुझि परी ॥ मनवच० ॥ १ ॥ चिंतामनि दुर्लभ लहिये ज्यों, त्रसपरजाय लहीं । लट पिपील अलिआदि जन्ममें, लह्यो न ज्ञान कहीं ॥ मनवच० ॥ २ ॥ पंचेंद्रिय पशु भयो कष्टतैं, तहाँ न बोध लह्यो । स्वपरविवेकरहित विन संयम, निशदिन भार बह्यो ॥ मनवच० ॥ ३ ॥ चौपथ चलत रतन लहिये ज्यों, मनुषदेह पाई । सुकुल जैनवृष सतसंगति यह, अतिदुर्लभ भाई ॥ मनवच० ॥ ४ ॥ यों दुर्लभ नरदेह कुधी[2] जे, विषयनसँग खोवैं । ते नर मूढ अजान सुधारस, पाय पांव

१ मौका । २ मूर्ख ।

धोवैं ॥ मनवच० ॥ ५ ॥ दुर्लभनरभव पाय सुधी जे, जैनधर्म सेवैं । दौलत ते अनंत अविनाशी, सुख शिवका वेवैं[1] ॥ मनवचतन करि० ॥ ६ ॥

९२.

मोहिड़ा रे, जिय! हितकारी न सीख सम्हारै । भववनभ्रमत दुखी लखि याको, सुगुरु दयालु उचारै ॥ मोहि० ॥ टेक ॥ विषय भुजंगम संग न छोड़त, जो अनंतभव मारै । ज्ञान विराग पियूष न पीवत, जो भवव्याधि विड़ारै॥ मोहि० ॥ १ ॥ जाके संग दुरैं अपने गुन, शिवपद अंतर पारै । ता तनको अपनाय आप चिन,-मूरतको न निहारै ॥ मोहि० ॥ २ ॥ सुत दारा धन काज साज अघ, आपन काज विगारै । करत आपको अहित आपकर, ले कृपान जलदारै[2] ॥ मोहि० ॥ ३ ॥ सही निगोद नरककी वेदन, वे दिन नाहिं चितारै । दौल गई सो

---

१ जानै अनुभव करै । २ तलवार लेकर जलको काटता है ।

गई अब हू नर, धर दृग-चरन सम्हारै ॥ मोहिड़ा० ॥ ४ ॥

९३.

मेरे कब ह्वै वा दिनकी सुघरी । मेरे० ॥ टेक ॥ तन विनवसन असनविन वनमें, निवसों नासादृष्टि धरी । मेरे० ॥ १ ॥ पुण्यपापपरसों कब विरचों, परचों निजनिधि चिर-विसरी । तज उपाधि सजि सहजसमाधी, सहों [1]घाम-हिम-मेघ-झरी ॥ मेरे० ॥ २ ॥ कब थिरजोग धरों ऐसो मोहि, [2]उपल जान मृग खाज हरी । ध्यान-कमान तान [3]अनुभव-शर, छेदों किहि दिन मोह अरी ॥ मेरे० ॥ ३ ॥ कब तृनकंचन एक गनों अरु, मनिजड़ि[4]तालय शैल[5]दरी । दौलत सतगुरुचरन-सेव जो, पुरवो आश यहै हमरी ॥ मेरे० ॥ ४ ॥

९४.

लाल कैसे जावोगे, असरनसरन कृपाल-

---

१ धूप-शीत-वर्षा । २ पत्थर । ३ अनुभवरूपी वाण । ४ रत्न-जड़ित महल । ५ पर्वतकी कंदरा ।

लाल० ॥ टेक ॥ इक दिन सरस वसंतसमयमें, केशवकी सब नारी। प्रभुप्रदच्छनारूप खड़ी है, कहत नेमिपर वारी। लाल० ॥ १ ॥ कुंकुम लै मुख मलत रुकमनी, रँग छिरकत गांधारी। सतभामा प्रभुओर जोर कर, छोरत है पिचकारी ॥ लाल० ॥ २ ॥ व्याह कबूल[1] करो तौ छूटौ, इतनी अरज हमारी। ओंकार कहकर प्रभु मुलके, छाँड़ दिये जगतारी ॥ लाल० ॥ ३ ॥ पुलकितवदन मदनपितु-भामिनि[2], निज निज सदन सिधारी। दौलत जादववंशव्योम-शशि[3], जयो जगतहितकारी ॥ लाल० ॥ ४ ॥

९५.

शिवपुरकी डगर[4] समरससों भरी, सो विषय-विरस-रचि चिरविसरी। शिव० ॥ टेक ॥ सम्यकदरश-बोध-व्रतमय भव,—दुखदावानल-मेघ-

---

१ स्वीकार। २ मगनप्रति—ऐसा भी पाठ है। मदनपितुभामिनि—मदन अर्थात् प्रद्युम्न कामदेवके पिता श्रीकृष्णकी स्त्रियें। ३ 'जादववंशव्योममणि' ऐसा भी पाठ है। जदुवंशरूपी आकाशके चन्द्रमा नेमिनाथ भगवान्। ४ मार्ग।

झरी । शिवपुर० ॥ १ ॥ ताहि न पाय तपाय देह बहु, जनममरन करि विपति भरी । काल पाय जिनधुनि सुनि मैं जन, ताहि लहूं सोइ धन्य घरी ॥ शिव० ॥ २ ॥ ते जन धनि या माहिं चरत नित, तिन कीरति सुरपति उचरी । विषयचाह भवराह त्याग अब, दौल हरो रज-रहसिअरी[1] ॥ शिवपुर० ॥ ३ ॥

९६.

तोहि समझायो सौ सौ बार, जिया तोहि समझायो० ॥ टेक ॥ देख सुगुरुकी परहितमें रति, हितउपदेश सुनायो । सो सौ बार० ॥ १ ॥ विषयभुजंग सेय सुख पायो, पुनि तिनसों लपटायो । स्वपदविसार रच्यौ परपदमें, मदरत[2] ज्यों बोरायो । सौ सौ बार० ॥ २ ॥ तन धन स्वजन नहीं हैं तेरे, नाहक नेह लगायो । क्यों न तजै भ्रम चाख समामृत[3], जो नित संतसुहायो ॥ सौ सौ बार० ॥ ३ ॥ अब हू समझ

---

१ चारघातिया कर्म । २ शराबी—मद्यप । ३ समता रूपी अमृत ।

कठिन यह नरभव, जिंन[1] वृषें[2] विना गमायो। ते विलखें मनि डार उदधिमें, दौलत को पछ-तायो॥ सौ सौ०॥ ४॥

९७.

न मानत यह जिय निपट अनारी। सि-ख देत सुगुरु हितकारी॥ न मानत०॥ टेक॥ कुमतिकुनारिसंग रति मानत, सुमतिसुनारि विसारी। न मानत०॥ १॥ नरपरजाय सुरेश चेंहैं सो, चखि विषविषय विगारी। त्याग अ-नाकुल ज्ञान चाह पर[3],-आकुलता विसतारी॥ न मानत०॥ २॥ अपनी भूल आप समता-निधि, भवदुख भरत भिखारी। परद्रव्यनकी परनतिको शठ, वृथा बनत करतारी[4]॥ न मानत०॥ ३॥ जिस कपाय-दव जरत तहां अभि,-लापछटा घृत डारी। दुखसों डरै करै दुखकारन,-तैं नित प्रीति करारी[5]॥ न मानत० ॥ ४॥ अतिदुर्लभ जिनवैन श्रवनकरि, संशय-

१ जिन्होंने। २ धर्म। ३ पुद्गलसम्बंधी। ४ कर्त्ता। ५ गाढ़ी।

मोहनिवारी । दौल स्वपर-हित-अहित
होवहु शिवमगचारी ॥ न मानत० ॥ ५ ॥

९८.

हम तो कबहूं न हित उपजाये ।
सुदेव-सुगुरु-सुसंगहित, कारन पाय गमाये ।
हम तो० ॥ टेक ॥ ज्यों शिशु नाचत आप
मांचत[1], लखनहार बौराये । त्यों श्रुत[2]बांचत
न राचत, औरनको समुझाये ॥ हम तो० ॥ १ ॥
सुजस-लाह[3]की चाह न तज निज, प्रभुता
हरखाये । विषय तजे न रंजे[4] निजपदमें, परप-
दअपद लुभाये ॥ हम तो० ॥ २ ॥
जिन-जाप[5] न कीन्हों, सुमनचाप[6]-तप-ताये । वे
तन तनको कहत भिन्न पर, देह सनेही थाये
हम तो० ॥ ३ ॥ यह चिर भूल भई हमरी अब
कहा होत पछताये । दौल अजौं भवभोग
मत, यों गुरु वचन सुनाये ॥ हम तो० ॥ ४ ॥

---

१ मग्न होते । २ शास्त्र पढ़ते । ३ सुयशके लाभकी । ४ रचे-मग्न
हुए । ५ जिनदेवका जाप । ६ सुमनचाप-कामदेवकी तपनमें तप्त ।

९९.

हम तो कबहूं न निजगुन भाँये[1] । तन निज मान जान तनदुखसुख,-में बिलखे हरखाये । हम तो० ॥ टेक ॥ तनको गरन मरन लखि तनको, धरन मान हम जाँये[2] । या भ्रमभौंर परे भवजल चिर, चहुंगति विपत लहाये ॥ हम तो० ॥ १ ॥ दरशबोधव्रतसुधा न चाख्यो, विविध विषय-विष खाये । सुगुरु दयाल सीख दइ पुनि पुनि, सुनि सुनि उर नहिं लाये ॥ हम तो० ॥ २ ॥ बहिरातमता तजी न अन्तर,-दृष्टि न है निज ध्याये । धाम-काम-धन-रामाकी नित, आश-हुताश-जलाये[3] ॥ हम तो० ॥ ३ ॥ अचल अनूप शुद्ध चिद्रूपी, सब सुखमय मुनि गाये । दौल चिदानँद स्वगुन मगन जे, ते जिय सुखिया थाये ॥ हम तो० ॥ ४ ॥

१००.

हम तो कबहूं न निज घर आये । परघर

१ भावना की । २ उत्पन्न हुए । ३ आशारूपी अग्निमें ।

फिरत बहुत दिन बीते, नाम अनेक धराये ॥ हम तो० ॥ टेक ॥ परपद निजपद मानि मगन है, परपरनति लपटाये । शुद्ध बुद्ध सुखकंद मनोहर, चेतनभाव न भाये ॥ हम तो० ॥ १ ॥ नर पशु देव नरक निज जान्यो, परजय-बुद्धि लहाये । अमल अखंड अतुल अविनाशी, आतमगुन नहिं गाये ॥ हम तो० ॥ २ ॥ यह बहु भूल भई हमरी फिर, कहा काज पछताये । दौल तजो अजहूँ विषयनको, सतगुरु वचन सुनाये ॥ हम तो० ॥ ३ ॥

१०१.

मानत क्यों नहिं रे, हे नर! सीख सयानी। भयो अचेत मोह-मद पीके, अपनी सुधि विसरानी ॥ टेक ॥ दुखी अनादि कुबोध अव्रततैं, फिर तिनसों रति ठानी । ज्ञानसुधा निजभाव न चाख्यो, परपरनति मति सानी ॥ मानत० ॥ १ ॥ भव असारता लखै न क्यो जहँ, नृप है कृमि[1] विट[2]-थानी । सधन निधन नृप दास

१ कीट । २ विष्ठाके स्थानमें ।

स्वजन रिपु, दुखिया हेरिसे मानी ॥ मानत० ॥ २ ॥ देह येह गेद-गेह नेह इस, है वहु विपति-निशानी । जड़ मलीन छिनछीन करमकृत,-वंधन शिवसुखहानी ॥ मानत० ॥ ३ ॥ चाह-ज्वलन इंधन-विधि-वन-घन, आकुलता कुल-खानी । ज्ञान-सुधासर-शोपनरवि ये, विपय अमित मृतुदानी ॥ मानत० ॥ ४ ॥ यों लखि भव-तन-भोग-विरचिकरि, निजहित सुन जिनवानी । तज रुपराग दौल अव अवसर, यह जिनचंद्र वखानी ॥ मानत० ॥ ५ ॥

१०२.

जानत क्यों नहिं रे, हे नर आतमज्ञानी । जानत० ॥ टेक ॥ रागदोप पुद्गलकी संपति, निहचै शुद्धनिशानी । जानत० ॥ १ ॥ जाय नरकपशुनरसुरगतिमें, यह परजाय विरानी । सिद्धसरूप सदा अविनाशी, मानत विरले प्रानी ॥ जानत० ॥ २ ॥ कियो न काहू हरै न

---

१ कृष्णनारायण सरीखे । २ रोगका घर । ३ मृत्यु ।

कोई, गुरु-शिख कौन कहानी । जनममरनमल-रहित विमल है, कीचविना जिमि पानी ॥ जानत० ॥ ३ ॥ सारपदारथ है तिहुँजगमें, नहिं क्रोधी नहिं मानी । दौलत सो घटमाहिं विराजै, लखि हूजे शिवथानी, जानत० ॥ ४ ॥

१०३.

हे हितबांछक प्रानी रे, कर यह रीति सयानी । हे हित० ॥ टेक ॥ श्रीजिनचरनचितार धार गुन, परम विराग विज्ञानी । हे हित० ॥ १ ॥ हरन भैयामय[1] स्वपरदयामय, सरधो वृष[2] सुखदानी । दुविध उपाधि बाध शिवसाधक, सुगुरु भजो गुणथानी ॥ हे० ॥ २ ॥ मोह-तिमिर-हर मिहर[3] भजो श्रुत, स्यात्पद जास निशानी । सप्ततत्त्व नव अर्थ विचारहु, जो बरने जिनबानी ॥ हे हित० ॥ ३ ॥ निजपर भिन्न पिछान मान पुनि, होहु आप सरधानी । जो इनको विशेष जानन सो, ज्ञायकता मुनि मानी

१ डर और रोग । २ धर्म । ३ सूर्य ।

॥ हे हित० ॥ ४ ॥ फिर व्रत समिति गुपति सजि, अरु तज प्रवृत्ति शुभास्रवदानी। शुद्ध स्वरूपाचरन लीन ह्वै, दौल वरो शिवरानी ॥ हे हित० ॥ ५ ॥

१०४.

हे नर ! भ्रमनींद क्यों न, छाँड़त दुखदाई। सोवत चिरकाल सोंज, आपनी ठगाई। हे नर० ॥ टेक ॥ मूरख[1] अघ कर्म कहा, भेदै नहिं मर्म लहा, लागै दुखज्वालकी न, देहकै तताई ॥ हे नर० ॥ १ ॥ जमके रव बाजते, सुभैरव अति गाजते, अनेक प्रान त्यागते, सुनै कहा न भाई हे नर० ॥ २ ॥ परको अपनाय आप, रूपको भुलाय हाय, करनविषय दारु जार, चाहदौं बढ़ाई ॥ हे नर० ॥ ३ ॥ अब सुन जिनवान, राग द्वेषको जघान, मोक्षरूप निज पिछान दौल, भज विरागताई ॥ हे नर० ॥ ४ ॥

---

१ मुग्दर अघ करम खान, भेदै नहिं मरमथान' ऐसा भी पाठ है।

१०५.

प्रभु थारी आज महिमा जानी, प्रभु थारी० ॥ टेक ॥ अबलौं मोह महामद पिय मैं, तुमरी सुधि विसरानी । भाग जगे तुम शांति छवी लखि, जड़ता नींद विलानी ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ जगविजयी दुखदाय रागरुष, तुम तिनकी थिति भानी । शान्तिसुधासागर गुन आगर, परमविराग विज्ञानी । प्रभु० ॥ २ ॥ समवसरन अतिशय कमलाजुत, पै निर्ग्रन्थ निदानी । क्रोधविना दुठ मोहविदारक, त्रिभुवनपूज्य अमानी । प्रभु० ॥ ३ ॥ एकस्वरूप सकलज्ञेयाकृत, जग-उदास जग-ज्ञानी । शत्रुमित्र सबमें तुम सम हो, जो दुखसुख फल यानी ॥ ४ ॥ परम ब्रह्मचारी है प्यारी, तुम हेरी शिवरानी । है कृतकृत्य तदपि तुम शिवमग, उपदेशक अगवानी ॥ ५ ॥ भई कृपा तुमरी तुमतैं, भक्ति सु मुक्तिनिशानी । है दयाल अब देहु दौलको, जो तुमने कृति ठानी ॥ ६ ॥

१०६.

तुम सुनियो श्रीजिननाथ, अरज इक मेरी
जी । तुम० ॥ टेक ॥ तुम विन हेत जगत उ-
पकारी, वसु कर्मन मोहि कियो दुखारी, ज्ञा-
नादिक निधि हरी हमारी; द्यावो सो ममकेरी
जी ॥ तुम सुनि० ॥ १ ॥ मैं निज भूलि तिनहि
सँग लाग्यो, तिन कृत करन-विषय-रस पाग्यो,
तातैं जन्म-जरा-दव-दाग्यो, कर समता सम
नेरी जी ॥ तुम सु० ॥ २ ॥ वे अनेक प्रभु मैं
जु अकेला; चहुँगति विपतिमाहिं मोहि पेला,
भाग जगे तुमसों भयो भेला, तुम हो न्याव-
निवेरी जी ॥ तुम सु० ॥ ३ ॥ तुम दयाल बे-
हाल हमारो, जगतपाल निज विरद समारो,
ढील न कीजे वेग निवारो, दौल-तनी अवफेरी
जी ॥ तुम सु० ॥ ४ ॥

१०७.

अरे जिया जग धोखेकी टाटी । अरे० ॥
टेक ॥ झूठा उद्यम लोक करत हैं, जिसमें
निशदिन घाटी । अरे० ॥ १ ॥ जान बूझके

अन्ध बने हैं, आंखन बांधी पाटी । अरे० ॥२॥ निकल जांयगे प्राण छिनकमें, पड़ी रहैगी माटी । अरे० ॥ ३ ॥ दौलतराम समझ मन्न अपने, दिलकी खोल कपाटी । अरे ॥ ४ ॥

१०८.

जय[1] वीर जिनवीर जिनवीर जिनचंद, कलु-षनिकंद मुनिहृदसुखकंद । जय वीर० ॥ टेक ॥ सिद्धारथनंद त्रिभुवनको दिनेन्दचन्द, जा वच-किरन भ्रम तिमिरनिकंद । जय वीर ॥ १ ॥ जाके पदअरविन्द सेवत सुरेंद्रवृंद, जाके गुन रटत फटत भवफंद । जय वीर० ॥ २ ॥ जाकी शान्तिमुद्रा निरखत हरखत रिखि, जाके अनु-भवत लहत चिदानन्द । जय वीर० ॥३॥ जाके घातिकर्म विघटत प्रघटत भये, अनन्त दरस बोध-वीरज अनन्द । जय वीर० ॥ ४ ॥ लोका-लोकज्ञाता पै स्वभावरत राता प्रभु, जगको कु-शलदाता त्राता पै अद्वंद । जय वीर० ॥ ५ ॥

---

१ इस भजनके प्रत्येक चरणके अन्तमें "है" लगानेसे इकतीसा कवित्त बन जाता है ।

जाकी महिमा अपार गणी न सके उचार, दौलत नमत सुख चहत अमंद ॥ जय वीर० ॥ ६ ॥

जकड़ी १०९.

अब मन मेरा वे सीखवचन सुन मेरा । भजि जिनवरपद वे, जो विनशै दुख तेरा ॥ विनशै दुख तेरा भैववनकेरा; मनवचतन जिनचरन भजो । पंचैकरन वश राख सुज्ञानी, मिथ्यामतमग दौर तजो ॥ मिथ्यामतमग-पगि अनादितें, तैं चहुंगति कीन्हा फेरा । अब हू चेत अचेत होय मत, सीखवचन सुनि मन मेरा ॥ १ ॥ इस भववनमें वे, तैं साता नहिं पाई । वसुविधिवश है वे, तैं निज सुधि विसराई ॥ तैं निज सुधि विसराई भाई, तातैं विमल न बोध लहा । परपरनतिमें मगन भयो तू, जन्म-जरा-मृत-दाह दहा ॥ जिनमत सारसरोवरकूं अब,—गाहि लागि निजचिंतनमें । तो दुखदाह नशै सब नातर, फेर बसै इस भवव-

१ संसाररूपी वनका । २ पांच इन्द्रियां । ३ आठ कर्मोंके वश होकर ।

नमें ॥ २ ॥ इस तनमें तूं बे, क्या गुन देख लुभाया । महा अपावन बे, सतगुरु याहि व-ताया ॥ सतगुरु याहि अपावन गाया, मलमूत्रादिकका गेहा । कृमिकुल-कलित लखत घिन आवै, यासों क्या कीजे नेहा ? ॥ यह तन पाय लगाय आपनी, परनति शिवमगसाधनमें । तो दुखदंद नशै सब तेरा, यही सार है इस तनमें ॥ ३ ॥ भोग भले न सही, रोगशोकके दानी । शुभगति रोकन बे, दुर्गतिपथअगवानी ॥ दुर्गतिपथअगवानी हैं जे, जिनकी लगन लगी इनसों । तिन नानाविधि विपति सही है, विमुख भया निजसुख तिनसों ॥ कुंजर[1] झख[2] अलि[3] शलभ[4] हिरन इन, एकअक्षवश[5] मृत्यु लही । यातें देख समझ मनमाहीं, भवमें भोग भले न सही ॥ ४ ॥ काज सरै तब बे, जब निजपद आराधै । नशै भवावलि[6] बे, निराबाधपद लाधै ॥ निराबाधपद लाधै तब तोहि, केवल दर्शन ज्ञान

१ हाथी । २ मछली । ३ भौंरा–भ्रमर । ४ पतंग । ५ एक एक इंद्रियके वशसे । ६ भवोंका समूह ।

जहाँ । सुख अनन्त अतिइन्द्रियमंडित, वीरज अचल अनंत तहाँ ॥ २ ॥ ऐसा पद चाहै तो भज निज, बारबार अब को उचरै । दौल मुख्यउपचार रतनत्रय, जो सेवै तो काज सरै ॥ ५ ॥

जकड़ी ११०.

वृषभादि जिनेश्वर ध्याऊं, शारद अंबा चित लाऊं । द्विविधि-परिग्रह-परिहारी, गुरु नमहुं स्व-परहितकारी ॥ हितकार तारक देव श्रुत गुरु, परख निजउर लाइये । दुखदाय कुपथविहाय शिवसुख,—दाय जिनवृष ध्याइये ॥ चिरतैं कु-मग पगि मोहठगकर, ठग्यो भव-कानन पर्यो । व्यालीसद्विकलख जौनिमें, जरमरनजौमन-दव जर्यो ॥ १ ॥ जब मोहरिपु दीन्हीं घुमरिया, तसुवश निगोदमें परिया । तहाँ स्वास एकके माहीं, अष्टादश मरन लहाहीं ॥ लहि मरन अन्तमुहूर्तमें, छ्यासठसहस शततीन ही । षट-

१ "जिन" भी पाठ है । २ संसाररूपी वन । ३ चौरासी-लाख योनि । ४ वृद्धावस्था, मृत्यु, और जन्मरूपी अग्निमें जला ।

तीस काल अनंत यों दुख, सहे उपमाही नहीं ॥ कबहूं लही वर आयु छिति-जल, पवन-पावक-तरुतणी । तसु भेद किंचित् कहूं सो मुनि, कह्यो जो गौतमगणी ॥ २ ॥ पृथिवी द्वय भेद बखाना, मृदु माटी कठिन पखाना । मृदु द्वादशसहस बरसकी, पाहन बाईस सहसकी ॥ पुनि सहस सात कही उदक[2] त्रय, सहसवर्ष समीरकी । दिन तीन पावक दशसहस तरु, प्रमित नाश सुपीरकी ॥ विनघात सूच्छम देहधारी, घातजुत गुरुतन लह्यो । तहँ खनन तापन जलन व्यंजन, छेद भेदन दुख सह्यो ॥ ३ ॥ शंखादि दुइंद्री प्रानी, थिति द्वादशवर्ष बखानी । यूकादि[3] तिइंद्री हैं जे, वासर उनचास जियें ते ॥ जीवैं छमास अलीप्रमुख[4], व्यालीस-सहस उरगतनी । खगकी बहत्तरसहस नवपूर्वांग सरीसृपकी[5] भनी ॥ नर मत्स्य पूरबकोटकी थिति, करमभूमि बखानिये । जलचर विकल

१ पृथ्वी । २ पानी । ३ जूआंआदि । ४ भ्रमरआदि । ५ सर्पविशेष ।

विन भोगंभूनर, पशु त्रिपल्य प्रमानिये ॥ ४ ॥
अघवशकर नरकवसेरा, भुगतै तहँ कष्ट घनेरा ।
छेदे तिलतिल तन सारा, छेपै द्रेहपूतिमँझारा ॥
मंझार वज्रानिल पचावैं, धरहिं शूली ऊपरैं ।
सींचै ज़ु खारे वारिसों दुठ, कहैं व्रण नीके करैं॥
वैतरणिसरिता समल जल अति, दुखद तरु सैंवलतने । अति भीम वन असिक्रांतसम दल, लगत दुख देवैं घनें ॥ ५ ॥ तिस भूमें हिम गरमाई, सुरगिरिसम अस गल जाई । तामें थिति सिंधुतनी है, यों दुखद नरक अवनी है॥
अवनी तहाँकीतें निकसि, कवहूं जनम पायो नरो । सर्वांग संकुचित अति अपावन, जठर जननीके परो ॥ तहँ अधोमुख जननी रसांश,-थकी जियो नवमास लों । ता पीरमें कोउ सीर नाहीं, सहै आप निकास लों ॥ ६ ॥
जनमत जो संकट पायो, रसनातैं जात न गा-यो । लहि वालपनें दुख भारी, तरुनापो लयो

१ भोगभूमिया मनुष्य और पशु । २ दुर्गंधिके भरे तालाव । ३ फोड़ । ४ तलवारकी धार । ५ पत्ते । ६ लोहा । ७ पृथिवी ।

दुखकारी ॥ दुखकारि इष्टवियोग अशुभ, सँयोग सोग सरोगता । परसेव[1] ग्रीषम सीत पावस, सहै दुख अति भोगता । काहू कुतिय[2] काहू कुबांधव, कहुँ सुता व्यभिचारिणी । किसहू विसन-रत[3] पुत्र दुष्ट,—कलत्र[4] कोऊ परऋणी ॥७॥ वृद्धापनके दुख जेते, लखिये सब नयननतैं ते । मुख लाल[5] बहै तन हालै, विन शक्ति न वसन सँभालै ॥ न सँभाल जाके देहकी तो, कहो वृषकी[6] का कथा ? तब ही अचानक आन जम गह, मनुज जन्म गयो वृथा ॥ काहू जनम शुभठान किंचित, लह्यो पद चहुंदेवको[7] । अभियोग[8] किल्विष[9] नाम पायो, सह्यो दुख परसेवको ॥ ८ ॥ तहँ देख महत सुरऋद्धी, झूर्‌यो विषयनकरि गृद्धी । कबहूं परिवार नसानो, शोकाकुल है विललानो ॥ विललाय अति जब म-

---

१ दूसरोंकी सेवा, नोकरी । २–४ दुष्टस्त्री । ३ व्यसनी । ५ लाला लार । ६ धर्मकी । ७ चार प्रकारके देवे । ८–९ आभियोग और किल्विष देवोंमें एक प्रकारके नीचे सेवकोंके समान देव होते हैं ।

रन निकस्यो, सह्यो संकट मानसी । सुरविभव दुखद लगी जवै तव, लखी माल मैलान सी ॥ तवही जु सुर उपदेशहित समु,-झायियो समुझ्यो न त्यों । मिथ्यात्वजुत च्युत कुगति पाई, लहै फिर सो स्वपद क्यों? ॥९॥ यों चिरभव अटवी गाही, किंचित साता न लहाही । जिनकथित धरम नहिं जान्यो, परमाहिं अपनपो मान्यो ॥ मान्यो न सम्यक त्रयातम, आतम अनातममें फँस्यो । मिथ्याचरन दृग्ज्ञान रंज्यो, जाय नवग्रीवक व-स्यो ॥ पै लह्यो नहिं जिनकथित शिवमग, वृथा भ्रम भूल्यो जिया । चिद्‌भावके दरसाव विन सव, गये अहेले तप किया ॥ १० ॥ अव अद्‌भुत पुण्य उपायो, कुल जात विमल तू पायो । यातैं सुन सीख सयाने, विषयनसों रति मत ठाने ॥ ठाने कहा रति विषयमें ये, विषम विषधरसम लखो । यह देह मरत अनंत इनको, त्याग आतमरस चखो ॥ या रसरसिकजन वसे शिव अव, वसें पुनि वसि हैं सही । दौ-

---

१ माला । २ मुरझानी हुई । ३ व्यर्थ । ४ सर्प ।

लत स्वरचि परविरचि सतगुरु,-शीख नित उर
धर यही ॥ ११ ॥

होली १११.

ज्ञानी ऐसी होली मचाई० ॥ टेक ॥ राग
कियो विपरीत विपन घर, कुमति कुसौति सु-
हाई। धार दिगंबर कीन्ह सु संवर, निज-पर-
भेद लखाई। घात विषयनिकी बचाई ॥ ज्ञानी
ऐसी० ॥ १ ॥ कुमति सखा भजि ध्यानभेद
सम, तनमें तान उड़ाई। कुंभक ताल मृदंगसों
पूरक, रेचक बीन बजाई। लगन अनुभवसों
लगाई ॥ ज्ञानी ऐसी० ॥ २ ॥ कर्मबलीता रूप
नाम अरि, वेद सुइन्द्रि गनाई। दे तप अग्नि
भस्स करि तिनको, धूल अघाति उड़ाई। करी
शिव तियकी मिलाई ॥ ज्ञानी ऐसी० ॥ ३ ॥
ज्ञानको फाग भागवश आवै, लाख करौ चतु-
राई। सो गुरु दीनदयाल कृपाकरि, दौलत
तोहि बताई। नहीं चित्तसे विसराई ॥ ज्ञानी
ऐसी होली मचाई ॥ ४ ॥

११२.

मेरो मन ऐसी खेलत होरी ॥ टेक ॥ मन मिरदंग साजकरि त्यारी, तनको तमूरा वनोरी। सुमति सुरंग सरंगी वजाई, ताल दोउ कर जोरी। राग पांचों पद कोरी ॥ मेरो मन० ॥ १ ॥ समकृति रूप नीर भर झारी, करुना केशर घोरी। ज्ञानमई लेकर पिचकारी, दोउ करमाहिं सम्होरी। इन्द्रि पांचों सखि वोरी ॥ मेरो मन० ॥ २ ॥ चतुर दानको है गुलाल सो भरि भरि मूठि चलोरी। तपमें बांकी भरि निज झोरी, यशको अवीर उड़ोरी। रंग जिनधाम मचोरी ॥ मेरो मन० ॥ ३ ॥ दौल वाल खेलें अस होरी, भवभव दुःख टलोरी। शरना ले इक श्रीजिनको री, जगमें लाज हो तोरी। मिलै फगुआ शिवगौरी ॥ मेरो मन० ॥ ४ ॥

११३.

निरखत जिनचंद री माई ॥ टेक ॥ प्रभु-दुति देख मंद भयौ निशिपति, आन सु पग लिपटाई। प्रभु सुचंद वह मंद होत है, जिन

लखि सूर छिपाई । सीत अदभुत सो वताई ॥ निरखत जिन० ॥ १ ॥ अंबर शुभ्र निजंतर दीसै, तत्त्वमित्र सरसाई । फैलि रही जग धर्म जुन्हाई, चोरन चार लखाई । गिरा अम्रत जो गनाई ॥ निरखत जिन० ॥ २ ॥ भये प्रफुल्लित भव्य कुमुदमन, मिथ्यातम सो नसाई । दूर भये भवताप सवनके, बुध अंबुधसों वढ़ाई । मदन चकवेकी जुदाई ॥ निरखत जिन० ॥ ३ ॥ श्रीजिनचंद बंद अब दौलत, चितकर चंद लगाई । कर्मबंध निर्बंध होत हैं, नागसुदमनि लसाई । होत निर्विष सरपाई ॥ निरखत जिन० ॥ ४ ॥

११४.

जिया तुम चालो अपने देश, शिवपुर थारो शुभथान । जिया० ॥ टेक ॥ लख चौरासीमें बहु भटके, लह्यो न सुखरो लेश ॥ जिया० ॥ १ ॥ मिथ्यारूप धरे बहुतेरे, भटक्यो बहुत विदेश ॥ जिया० ॥ २ ॥ विषयादिक बहुते

दुख पाये, भुगतो बहुत कलेश ॥ जिया० ॥३॥ भयो तिरजंच नारकी नरसुर, करिकरि नाना भेष ॥ जिया० ॥ ४ ॥ दौलतराम तोड़ जग-नाता, सुनो सुगुरुउपदेश ॥ जिया० ॥ ५ ॥

११८.

जय जय जग-भरम-तिमर,-हरन जिन धुनि ॥ टेक ॥ या विन समुझे अजौं न, सौंज निज मुनी । यह लखि हम निजपर अवि,-वेकता लुनी ॥ जय जय० ॥ १ ॥ याको गनराज अंग, पूर्वमय चुनी । सोई कही है कुंदकुंद, प्रमुख वहुमुनी ॥ जय जय० ॥ २ ॥ जे चर जड़ भये पीय, मोह वारुनी । तत्त्व पाय चेते जिन, थिर सुचित सुनी ॥ जय जय० ॥ ३ ॥ कर्ममल प-खारने हि, विमलसुरधुनी । तज विलंब अंब करो, दौल उर पुनी ॥ जय जय० ॥ ४ ॥

११९.

अव मोहि जानि परी, भवोदधि तारनको है जैन ॥ टेक ॥ मोहतिमरतें सदा कालके, छाय रहे मेरे नैन । ताके नाशन हेत लियो मैं,

अंजन जैन सु एन ॥ अब० ॥ १ ॥ मिथ्यामती भेषकों लेकर, भाषत हैं जो बैन । सो वे वैन असार लखेमें, ज्यों पानीके फैन ॥ अब मो० ॥ २ ॥ मिथ्यामती बेल जग फैली, सो दुख फलकी दैन । सतगुरु भक्तिकुठार हाथ लै, छेद लियो अति चैन ॥ अब० ॥ ३ ॥ जा विन जीव सदैव कालतें, ना विधि सुखन (?) लहै न । अशरनशरन अभय दौलत अब, भजो रैनदिन जैन ॥ अब० ॥ ४ ॥

११७.

सुन जिन वैन, श्रवन सुख पायो ॥ टेक ॥ नस्यो तत्त्व दुर अभिनिवेशतम, स्याद उजास कहायौ । चिर विसस्यो लह्यो आतम रैन ॥ श्रवण० ॥ १ ॥ दह्यौ अनादि असंजम दवतें, लहि व्रत सुधा सिरायौ । धीर धरी मन जीतन मैन (?) ॥ श्रवन सुख० ॥ २ ॥ भरो विभाव अभाव सकल अब, सकलरूप चित लायो । दास लह्यौ अब अविचल चैन, श्रवन सुख० ॥ ३ ॥

वामा घर बजत बधाई, चलि देखि री माई ॥ टेक ॥ सुगुनरास जग-आस-भरन तिन, जने पार्श्व जिनराई। श्री ह्री धृति कीरति बुधि लछमी, हर्षत अंग न माई ॥ चलि० ॥ १ ॥ वरन वरन मनि चूर सची सब, पूरत चौक सुहाई। हाहा हूहू नारद तुंवर, गावत श्रुत सुखदाई ॥ चलि० ॥ तांडव नृत्य नटत हरिनट तिन, नख नख सुरीं नचाई। किन्नर कर धर वीन बजावत, दृगमनहर छवि छाई ॥ चलि० ॥ ३ ॥ दौल तासु प्रभुकी महिमा सुर,-गुरुपै कहिय न जाई। जाके जन्म समय नरकनमें, नारकि साता पाई ॥ चलि० ॥ ४ ॥

११८.

जय श्री ऋषभ जिनेन्द्रा। नाश तो करौ स्वामी मेरे दुखदंदा ॥ मातु मरुदेवी प्यारे, पिता नाभिके दुलारे, वंश तो इक्ष्वाक जैसे नभवीच चंदा ॥ जय श्री० ॥ १ ॥ कनक वरन तन, मोहत भविक जन, रवि शशि कोटि लाजैं,

लाजै मकरन्दा ॥ जयश्री० ॥ २ ॥ दोष तो अठारा नासे, गुन छियालीस भासे, अष्टकर्म काट स्वामी, भये निरफंदा ॥ जयश्री० ॥ ३ ॥ चार ज्ञानधारी गनी, पार नाहिं पावें मुनी, दौलत नमत सुख चाहत अमंदा ॥ जय श्री० ॥ ४ ॥

११९.

मत कीज्यो जी यारी, ये भोग भुजग[1] सम जानके, मत कीज्यो० ॥ टेक ॥ भुजग डसत इकवार नसत है, ये अनंत मृतुकारी[2] । त्रिसना तृषा बढ़ै इन सेयें, ज्यों पीये जल खारी ॥ मत कीज्यो जी० ॥ १ ॥ रोग वियोग शोक वनको घन[3]; समता[4]-लताकुठारी । केहरि[5] करी[6] अरी[7] न देत ज्यों, त्यों ये दें दुख भारी ॥ मत कीज्यो० ॥ २ ॥ इनमें रचे देव तरु थाये, पाये श्वभ्र[8] मुरारी[9] । जे विरचे[10] ते सुरपतिअरचे, परचे सुख अविकारी ॥ मत कीज्यो० ॥ ३ ॥ पराधीन

---

१ सर्प । २ मृत्युके करनेवाले । ३ मेघ । ४ समतारूपीवेलके काटनेके कुल्हाडी । ५ सिंह । ६ हाथी । ७ दुशमन । ८ नरक । ९ नारायण । १० वैरागी हुए ।

छिनमाहिं छीन है, पापबंधकरतारी ॥ इन्हैं गिनैं सुख आकमाहिं तिन, आमतनी बुधि धारी ॥ मत कीज्यो० ॥ ४ ॥ मीन मतंग[1] पतंग भृंग[2] मृग, इनवश भये दुखारी ॥ सेवत ज्यों किंपाक[3] ललित, परिपाक समय दुखकारी ॥ मत कीज्यो जी० ॥ ५ ॥ सुरपति नरपति खगपतिहूकी, भोग न आस निवारी, दौल त्याग अब भज विराग सुख, ज्यों पावै शिवनारी ॥ मत कीज्यो जी० ॥ ६ ॥

१२०.

सुधि लीज्यो जी म्हारी, मोहि भवदुखदुखिया जानके, सुधि० ॥ टेक ॥ तीनलोकस्वामी नामी तुम, त्रिभुवनके दुखहारी । गनधरादि तुव शरनलई लख, लीनी सरन तिहारी ॥ सुधली० ॥ १ ॥ जो विधि अरी करी हमरी गति, सो तुम जानत सारी । याद किये दुख होत हिये ज्यों, लागत कोट कटारी ॥ सुधलीज्यो० ॥ २ ॥ लब्धिअपर्यापतनिगोदमें एक उ-

१ हाथी । २ भ्रमर । ३ इन्द्रायणका फल ।

सासमँझारी । जनममरन नवदुगुन[1] विथाकी; कथा न जात उचारी ॥ सुध लीज्यो० ॥ ३ ॥ भू[2] जल ज्वलन[3] पवन प्रतेक तरु, विकलत्रयतन-धारी । पंचेंद्री पशु नारक नर सुर विपति भरी भयकारी ॥ सुधलीज्यो० ॥ ४ ॥ मोह महारिपु नेक न सुखमय, होन दई सुधि थारी । सो दुठ मंद भयो भागनतैं, पाये तुम जगतारी ॥ ॥ सुध लीज्यो० ॥ ५ ॥ यदपि विरागि तदपि तुम शिवमग, सहजप्रगटकरतारी । ज्यों रवि-किरन सहजमगदर्शक, यह निमित्ति अनिवारी । सुध ली० ॥ ६ ॥ नाग छाग गज बाघ भील दुठ, तारे अधम उधारी । सीसनवाय पुकारत अबके, दौल अधमकी बारी ॥ सुधली० ॥ ७ ॥

१२१.

मत राचो धीधारी[4], भव रंभथंभसम[5] जानके । मत राचो ॥ टेक ॥ इंद्रजालको ख्याल मोह ठग, विभ्रमपास पसारी । चहुँगति विपतिमयी

१ अठारहबारकी । २ पृथ्वीकाय । ३ अग्निकाय । ४ बुद्धि-मानो ! ५ केलेके खंभे समान ।

जामें जन, भ्रमत भरत दुख भारी ॥ मत० ॥१॥ रामा[1] मा, मा वामा, सुत पितु, सुता श्वसा[2], अवतारी । को अचंभ जहां आप आपके पुत्र दशा विस्तारी ॥ मत राचो० ॥२॥ घोर नरक दुख ओर न छोर न लेश न सुख विस्तारी । सुरनर प्रचुर विषयजुर जारे, को सुखिया संसारी ॥ मत राचो० ॥ ३ ॥ मंडल[3] है आँखंडल छिनमें, नृप कृमि[5], सधन भिखारी । जा सुत विरह मरी है वाघिनि, ता सुत देह विदारी ॥ मत राचो० ॥ ४ ॥ शिशु न हिताहितज्ञान तरुन उर, मदनदहन[6] परजारी । वृद्ध भये विकलांगी थाये, कौन दशा सुखकारी ? ॥ मत राचो० ॥ ५ ॥ यों असार लख छार भव्य झट, भये मोखमगचारी । यातैं होउ उदास दौल अव, भज जिनपति जगतारी ॥ मत० ॥ ६ ॥

१२२.

नित पीज्यो धीधारी, जिनवानि[7] सुधासम[8]

---

१ स्त्री । २ बहिन । ३ कुत्ता । ४ देव । ५ लट । ६ कामाग्नि । ७ जैनशास्त्रोंको । ८ अमृतसमान ।

जानके, नित पी० ॥ टेक ॥ वीरमुखारविंदतैं[1] प्रगटी, जन्मजरा-गद[2] टारी । गौतमादिगुरु-उर-घट व्यापी, परम सुरुचिकरतारी ॥ नित० ॥ १ ॥ सलिलसमान[3] कलिलमलगंजन[4] बुधमन-रंजनहारी । भंजन विभ्रमधूलिप्रभंजन, मिथ्या-जलदनिवारी ॥ नित पी० ॥ २ ॥ कल्यानकतरु[5] उपवनधरिनी, तरनी[6] भवजलतारी । बंध[7]विदारन पैनी छैनी[8], मुक्तिनसैनी सम्हारी ॥ नित पी० ॥ ३ ॥ स्वपरस्वरूप प्रकाशनको यह, भानुकला अविकारी । मुनि-मन-कुमुदिनि-मोदन-शशिभा[9], शमसुखसुमनसुबारी[10] ॥ नि० ॥४॥ जाको सेवत बेवत[11] निजपद, नशत अविद्या सारी । तीनलोकपति[12] पूजत जाको, जान त्रिजगहितकारी ॥

---

१ महावीरस्वामीके मुखकमलसे । २ रोग । ३ जलकी समान । ४ पापरूपी मैलको नष्ट करनेवाली । ५ " मंगलतरुहिं उपावन धरनी" ऐसा भी पाठ है । ६ नौका । ७ कर्मबंध । ८ तीखी छैणी । ९ मुनियोंकी मनरूपी कुमोदनीको प्रफुल्लित करनेकेलिये चंद्रमाकी रोशनी । १० समता-रूपी सुख ही हुआ पुष्प, उसकेलिये अच्छी वाटिका । ११ जानते वा अनुभवते हैं । १२ तीन भुवनके राजा इन्द्रादिक ।

नित० ॥ ५ ॥ कोटि जीभसों महिमा जाकी, कहि न सके पविधारी[1] । दौल अल्पमति केम कहै यह, अधमउधारनहारी ॥ नि० ॥ ६ ॥

१२३.

मत कीज्यो जी यारी, घिनगेह[2] देह जड़ जानके, मत की० ॥ टेक ॥ मात-तात-रज-वीरजसों यह, उपजी मलफुलवारी । अस्थिमाल-पल-नसाजालकी[3], लाल लाल जलक्यारी ॥ मत की० ॥ १ ॥ कर्मकुरंगथलीपुतली[4] यह, मूत्र-पुरीष[5]भँडारी । चर्ममँड़ी रिपुकर्मघड़ी धन, धर्म-चुरावनहारी ॥ मत कीज्यो० ॥ २ ॥ जे जे पावन वस्तु जगतमें, ते इन सर्व विगारी । स्वेद[6]-मेद[7]कफक्लेद[8]मयी वहु, मदगदव्यालपिटारी[9] ॥ मत की० ॥ ३ ॥ जा संयोग रोगभव[10] तोलों, जा वियोग शिवकारी । बुध तासों न ममत्व करैं यह, मूढ़मतिनको प्यारी ॥ मत की० ॥ ४ ॥

---

१ वज्रधारी इन्द्र । २ घृणाका घर । ३ हाड़ माँस नसोंके समूहकी । ४ कर्मरूपी हिरनोंको फँसानेवाली जगहपर पुतलीके समान । ५ विष्टा । ६ पसीना । ७ चरबी । ८ दुःख । ९ मदरोगरूपी सांपके लिये पिटारी । १० संसाररूपीरोग ।

जिन पोषी ते भये सदोषी, तिन पाये दुख भारी । जिन तप ठान ध्यानकर शोपी[1], तिन परनी शिवनारी ॥ मत की० ॥ ५ ॥ सुरधनु[2] शरदजलद[3] जलबुदबुद, त्यों झट विनशनहारी। यातैं भिन्न जान निज चेतन, दौल होहु शर्म-धारी ॥ मत की० ॥ ६ ॥

१२४.

जाऊं कहां तज शरन तिहारे ॥ टेक ॥ चूक अनादितनी या हमरी, माफ करो करुणा गुन धारे ॥ १ ॥ डूबत हों भवसागरमें अब, तुम विनको मुह वार निकारे ॥ २ ॥ तुम सम देव अवर नहिं कोई, तातैं हम गह हाथ पसारे ॥ ३ ॥ मोसम अधम अनेक उधारे, वरनत हैं श्रुत शास्त्र अपारे ॥ ४ ॥ "दौलत" को भव-पार करो अब, आयो है शरनागत थारे ॥ ५॥

समास ।

---
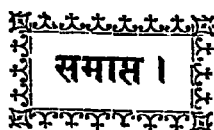
१ क्षीण की । २ इन्द्रधनुष्य । ३ शरदऋतुके वादल । ४ समताके धारी ।

श्रीवीतरागाय नमः

जैनपदसंग्रह द्वितीयभाग।

अर्थात्

पण्डित भागचन्द्रजीकृत पदोंका संग्रह।

जिसे

श्रीजैनग्रन्थरत्नाकरकार्यालयबम्बईने

मुम्बयीस्थ

निर्णयसागर प्रेसमें छपाकर.

प्रकाशित किया।

श्रीवीर नि० सं० २४३४।

प्रथमवार १००० प्रति] [मूल्य ।) आने।

प्रस्तावना ।

पाठक महाशय! पूरे एक वर्षके पीछे हम अपनी प्रतिज्ञाको पूर्ण कर सके । अर्थात् जैनपदसंग्रह प्रथमभाग प्रकाशित करनेके एक वर्ष पश्चात् यह दूसरा भाग आपके सम्मुख उपस्थित करनेमें समर्थ हुए । इस भागमें ईशागढ़निवासी कविवर भागचन्द्रजीके बनाये हुए पदोंका संग्रह है । उक्त कविवरके बनाये हुए और भी अनेक भजन सुने जाते हैं, परन्तु उनके प्राप्त करनेका कोई साधन न होनेसे हमको इतनेहीसे संतोष करना पड़ा है । दानवीर शेठ माणिकचन्द्रजीके पुस्तकालयमें एक पदोंकी पोथी है, उसीपरसे यह भाग तयार किया गया है । दूसरी पुस्तकके अभावमें इसके संशोधन करनेमें बहुत परिश्रम किया गया है, इतनेपर भी अनेक स्थान अशुद्ध और भ्रमपूर्ण रह गये हैं । आशा है कि आगामी संस्करणमें यह त्रुटि दूर हो जावेगी । किसी पदमें अशुद्धि जान पड़े और उनका पाठान्तर स्मरण हो, तो सज्जन पाठकोंको उसकी सूचना देनी चाहिये । वह सहर्ष साभार स्वीकार की जावेगी । इसके सिवाय जो महाशय कविवर भागचन्द्रजीके इन पदोंके अतिरिक्त अन्य भजन विनती आदि भेजनेकी कृपा करेंगे, उनके हम बहुत कृतज्ञ होंगे, और दूसरा संस्करण छपने पर उन्हें प्रत्येक पदपर एक २ पुस्तक भेटमें भेज देंगे । परन्तु पुस्तकके लोभसे कोई महाशय किसी दूसरे कविके बदले " भागचन्द्र " की छाप डालकर भेजनेकी कृपा न करें ।

हमारी इच्छा थी कि पहले भागके समान इसे भी टिप्पणीसहित प्रकाशित करें, परन्तु संशोधनमें अन्य पुस्तकोंकी सहायता न मिल सकनेके कारण ऐसा न किया जा सका । हो सका तो आगमी संस्करणमें टिप्पणी लगा दी जावेगी ।

मूल प्रतिमें रागोंके नाम जिसप्रकार लिखे थे हमने उसीके अनुसार

ज्योंके त्यों प्रकाशित किये हैं। यदि कुछ भूल हो, तो पाठकोंको सूचित करना चाहिये क्योंकि हम इसविषयमें अनभिज्ञ हैं।

कविवर भागचन्द्रजी बडे भारी विद्वान् और कवि हो गये हैं। आपके साक्षात दर्शन करनेवाले अब भी बहुतसे सज्जन जीते जागते हैं। आप ईशागढके रहनेवाले थे। प्रतापगढ (मालवा) और लश्करमें आप बहुत दिन तक रहे हैं। भाषाके सिवाय आप संस्कृतके भी अच्छे कवि थे। आपके बनाये हुए संस्कृत महावीराष्टकसे जैनसमाज भलीभांति परिचित है। ज्ञानसूर्योदय नाटक, उपदेशसिद्धान्तरत्नमाला, अमितगतिश्रावकाचार, प्रमाणपरीक्षा[1], धर्मपरीक्षा और नेमिनाथपुराणादि अनेक संस्कृत ग्रन्थोंका आपने भाषानुवाद किया था, जो प्रायः सर्वत्र प्रसिद्ध हैं। आपके जन्मका तथा देहान्तका समय हमको ठीक२ मालूम नहीं है। हो सका तो आगामी संस्करणमें आपका संक्षिप्त जीवनचरित्र भी प्रकाशित करनेका प्रयत्न किया जावेगा।

पदसंग्रहका तीसरा भाग शीघ्र ही प्रकाशित होगा। जिसमें पं० द्यानतरायजीके पदोंका संग्रह होगा। इति शम्

मुंबई.
ता. २६-१-०८. } प्रकाशक।

---

१ प्रमाणपरीक्षा संवत् १९१३ में बनाई गई थी।

ओंनमः सिद्धेभ्यः ।

जैनपदसंग्रह द्वितीयभाग

अर्थात्

पंडितवर्य भागचन्द्रजीकृत पदोंका संग्रह ।

१.

राग ठुमरी ।

सन्त निरन्तर चिन्तत ऐसें, आतमरूप अबाधित ज्ञानी ॥ टेक ॥ रागादिक तो देहाश्रित हैं, इनतें होत न मेरी हानी । दहन दहत ज्यों दहन न तदगत, गगन दहन ताकी विधि ठानी ॥ १ ॥ वरणादिक विकार पुदगलके, इनमें नहिं चैतन्य निशानो । यद्यपि एक क्षेत्रअवगाही, तद्यपि लक्षण भिन्न पिछानी ॥ २ ॥ मैं सर्वांगपूर्ण ज्ञायक रस, लवण खिल्लवत लीला ठानी । मिलौ निराकुल स्वाद न यावत, तावत परपरनति हित मानी ॥ ३ ॥ भागचन्द निरद्वन्द निरामय, मूरति निश्चय सिद्धसमानी । नित अकलंक अवंक शंक विन, निर्म्मल पंक विना जिमि पानी ॥ सन्त निरन्तर चि० ॥ ४ ॥

२.

धन धन जैनी साधु अबाधित, तत्वज्ञानविलासी हो ॥ टेक ॥ दर्शन-बोधमई निजमूरति, जिनकों अपनी भासी हो । त्यागी अन्य समस्त वस्तुमें, अहंबुद्धि दुखदा सी

हो ॥ १ ॥ जिन अशुभोपयोगकी परनति, सत्तासहित विनाशी हो। होय कदाच शुभोपयोग तो, तहँ भी रहत उदासी हो ॥ २ ॥ छेदत जे अनादि दुखदायक, दुविधि बंधकी फाँसी हो। मोह क्षोभ रहित जिन परनति, विमल मयंक-कला सी हो ॥ ३ ॥ विषय-चाह-दव-दाह खुजावन, साम्य सुधारस-रासी हो। भागचन्द ज्ञानानंदी पद, साधत सदा हुलासी हो ॥ धन० ॥ ४ ॥

३.

यही इक धर्ममूल है मीता! निज समकितसार-सहीता। यही० ॥ टेक ॥ समकित सहित नरकपदवासा, खासा बुधजन गीता। तहँतें निकसि होय तीर्थंकर, सुरगन जजत सप्रीता ॥ १ ॥ स्वर्गवास हू नीको नाहीं, विन समकित अविनीता। तहँतें चय एकेंद्री उपजत, भ्रमत सदा भयभीता ॥ २ ॥ खेत वहुत जोते हु बीज विन, रहित धान्यसों रीता। सिद्धि न लहत कोटि तपहूतें, वृथा कलेश सहीता ॥ ३ ॥ समकित अतुल अखंड सुधारस, जिन पुरुषननें पीता। भागचन्द ते अजर अमर भये, तिनहीनें जग जीता ॥ यही इक धर्म० ॥ ४ ॥

४.

राग ठुमरी।

जीवनके परिनामनिकी यह, अति विचित्रता देखहु ज्ञानी ॥ टेक ॥ नित्य निगोदमाहिंतैं कढ़िकर, नर परजाय पाय सुखदानी। समकित लहि अंतर्मुहूर्तमें, केवल

पाय वरैं शिवरानी ॥ २ ॥ मुनि एकादश गुणथानक चढि, गिरत तहांतें चितभ्रम ठानी । भ्रमत अर्धपुद्गलप्रावर्तन, किंचित् ऊन काल परमानी ॥ २ ॥ निज परिनामनिकी सँभालमें, तातें गाफिल मत व्है प्रानी । बंध मोक्ष परिनामनिहीसों, कहत सदा श्रीजिनवरवानी ॥ ॥ ३ ॥ सकल उपाधिनिमित भावनिसों, भिन्न सु निज परनतिको छानी । ताहि जानि रुचि ठानि होहु थिर, भागचन्द यह सीख सयानी ॥ जीवनके पर० ॥ ४ ॥

५.

परनति सब जीवनकी, तीन भाँति वरनी ।
एक पुण्य एक पाप, एक रागहरनी ॥ परनति० ॥ टेक ॥
तामें शुभ अशुभ अंध, दोय करैं कर्मबंध,
वीतराग परनति ही, भवसमुद्रतरनी ॥ १ ॥
जावत शुद्धोपयोग, पावत नाहीं मनोग,
तावत ही करन जोग, कही पुण्य करनी ॥ २ ॥
त्याग शुभ क्रियाकलाप, करो मत कदाच पाप,
शुभमें न मगन होय, शुद्धता विसरनी ॥ ३ ॥
ऊंच ऊंच दशा धारि, चित प्रमादको विडारि,
ऊंचली दशातें मति, गिरो अधो धरनी ॥ ४ ॥
भागचन्द या प्रकार, जीव लहै सुख अपार,
याके निरधार स्याद,- वादकी उचरनी ॥ परनति० ॥ ५ ॥

६.

जीव ! तू भ्रमत सदीव अकेला । सँग साथी कोई नहिं

तेरा ॥टेक॥ अपना सुखदुख आप हि भुगतै, होत कुटुंब न भेला । स्वार्थ भयैं सब विछुरि जात हैं, विघट जात ज्यों मेला ॥ १ ॥ रक्षक कोइ न पूरन व्है जब, आयु अंतकी वेला । फूटत पारि बँधत नहिं जैसै, दुद्धर जलको ठेला ॥ ॥ २ ॥ तन धन जोवन विनशि जात ज्यों, इन्द्रजालका खेला । भागचन्द इमि लख करि भाई, हो सतगुरुका चेला ॥ जीव तू भ्रमत० ॥ ३ ॥

७.

आकुलरहित होय इमि निशदिन, कीजे तत्त्वविचारा हो । को मैं कहा रूप है मेरा, पर है कौन प्रकारा हो ॥ टेक ॥ १ ॥ को भव-कारण वंध कहा को, आस्रवरोकन-हारा हो । खिपत कर्मबंधन काहेसों, थानक कौन हमारा हो ॥ २ ॥ इमि अभ्यास कियें पावत है, परमानंद अपारा हो । भागचंद यह सार जान करि, कीजे वारंवारा हो ॥ आकुलरहित होय० ॥ ३ ॥

८.

राग भैरव ।

सुन्दर दशलच्छन वृष, सेय सदा भाई ।
जासतैं ततच्छन जन, होय विश्वराई ॥ टेक ॥
क्रोधको निरोध शांत, सुधाको नितांत शोध,
मानको तजौ भजौ स्वभाव कोमलाई ॥ १ ॥
छल बल तजि सदा विमलभाव सरलताई भजि,
सर्व जीव चैन दैन, वैन कह सुहाई ॥ २ ॥

ज्ञान तीर्थ स्नान दान, ध्यान भान हृदय आन,
दया-चरन धारि करन-विषय सब विहाई ॥ ३ ॥
आलस हरि द्वादश तप, धारि शुद्ध मानस करि,
खेहगेह देह जानि, तजौ नेहताई ॥ ४ ॥
अंतरंग बाह्य संग, त्यागि आत्मरंग पागि,
शीलमाल अति विशाल, पहिर शोभनाई ॥ ५ ॥
यह वृष-सोपान-राज, मोक्षधाम चढ़न काज।
तनसुख (?) निज गुनसमाज, केवली बताई ॥ सुन्दर०॥६॥

९.

प्रभाती।

षोड़शकारन सुहृदय, धारन कर भाई!
जिनतें जगतारन जिन, होय विश्वराई ॥ टेक ॥
निर्मल श्रद्धान ठान, शंकादिक मल जघान,
देवादिक विनय सरल,-भावतें कराई ॥ १ ॥
शील निरतिचार धार, मारको सदैव मार,
अंतरंग पूर्ण ज्ञान, रागको विंधाई ॥ २ ॥
यथाशक्ति द्वादश तप, तपो शुद्ध मानस कर,
आर्त रौद्र ध्यान त्यागि, धर्म शुक्ल ध्याई ॥ ३ ॥
यथाशक्ति वैयावृत, धार अष्टमान टार,
भक्ति श्रीजिनेन्द्रकी, सदैव चित्त लाई ॥ ४ ॥
आरज आचारजके, वंदि पाद-वारिजकों,
भक्ति उपाध्यायकी, निधाय सौख्यदाई ॥ ५ ॥

प्रवचनकी भक्ति जतनसेति बुद्धि धरो नित्य,
आवश्यक क्रियामें न, हानि कर कदाई ॥ ६ ॥
धर्मकी प्रभावना सु, शर्मकर वढावना सु,
जिनप्रणीत सूत्रमाहिं, प्रीति कर अघाई ॥ ७ ॥
ऐसे जो भावत चित, कलुपता वहावत तसु,
चरनकमल ध्यावत बुध, भागचंद गाई ॥ पोड़श० ॥ ८ ॥

१०.

प्रभाती ।

श्रीजिनवर दरश आज, करत सौख्य पाया ।
अष्ट प्रातिहार्यसहित, पाय शांति काया ॥ टेक ॥
वृक्ष है अशोक जहां, भ्रमर गान गाया ।
सुन्दर मन्दार-पहुप,-वृष्टि होत आया ॥ १ ॥
ज्ञानामृत भरी बानि, खिरै भ्रम नसाया ।
विमल चमर ढोरत हरि, हृदय भक्ति लाया ॥ २ ॥
सिंहासन प्रभाचक्र, वालजग सुहाया ।
देव दुंदुभी विशाल, जहां सुर बजाया ॥ ४ ॥
मुक्ताफल माल सहित, छत्र तीन छाया ।
भागचन्द अद्भुत छवि, कही नहीं जाया ॥ श्रीजिन० ॥ ५ ॥

११.

राग ठुमरी ।

वीतराग जिन महिमा थारी, वरन सकै को जन त्रिभुवनमें ॥ वीतराग० ॥ टेक ॥ तुमरे अतट चतुष्टय प्रगट्यो, निःशेषावरनच्छय छिनमें । मेघ पटल विघटनतैं प्रगटत,

जिमि मार्तंड प्रकाश गगनमें ॥ वीतराग० ॥ १ ॥ अप्रमेय ज्ञेयनके ज्ञायक, नहि परिनमत तदपि ज्ञेयनमें । देखत नयन अनेकरूप जिमि, मिलत नही पुनि निज विपयनमें ॥ वीतराग० ॥२॥ निज उपयोग आपनै स्वामी, गाल दिया निश्चल आपनमें । है असमर्थ वाह्य निकसनको, लवन घुला जैसें जीवनमें ॥ वीतराग० ॥ ३ ॥ तुमरे भक्त परम सुख पावत, परत अभक्त अनंत दुखनमें । जैसो मुख देखो तैसौ व्है, भासत जिम निर्मल दरपनमें ॥ वीतराग० ॥ ४ ॥ तुम कषाय विन परम शांत हो, तदपि दक्ष कर्मारिहतनमें । जैसे अतिशीतल तुषार पुनि, जार देत द्रुम भारि गहनमें ॥ वीतराग० ॥ ५ ॥ अव तुम रूप जथारथ पायो, अव इच्छा नहिं अन कुमतनमें । भागचन्द अमृतरस पीकर, फिर को चाहै विष निज मनमें ॥ वीतराग० ॥ ६ ॥

१२.

राग ठुमरी ।

बुधजन पक्षपात तज देखो, साँचा देव कौन है इनमें ॥ बुधजन० ॥ टेक ॥ ब्रह्मा दंड कमंडलधारी, स्वांत भ्रांत वश सुरनारिनमें । मृगछाला माला मौंजी पुनि, विषयासक्त निवास नलिनमें ॥ बुधजन०॥ १ ॥ शंभू खट्वाअंगसहित पुनि, गिरिजा भोगमगन निशदिनमें । हस्त कपाल

---

१ जीवन शब्दका अर्थ जल भी होता है ।

व्याल भूषन पुनि, रुंडमाल तन भस्म मलिनमें ॥बुधजन०॥ ॥ २ ॥ विष्णु चक्रधर मदनवानवश, लज्जा तजि रमता गोपिनमें । क्रोधानल ज्वाजल्यमान पुनि, तिनके होत प्रचंड अरिनमें ॥ बुधजन० ॥ ३ ॥ श्रीअरहंत परम वैरागी, दूपन लेश प्रवेश न जिनमें । भागचंद इनको स्वरूप यह, अव कहो पूज्यपनो है किनमें ? ॥ बुध० ॥४॥

१३.

अति संक्लेश विशुद्ध शुद्ध पुनि, त्रिविध जीव परिनाम वखाने ॥ अति० ॥ टेक ॥ तीव्र कपाय उदयतैं भावित, दर्वित हिंसादिक अघ ठाने । सो संक्लेश भावफल नरकादिक गति दुख भोगत असहाने ॥ अति सं० ॥ १ ॥ शुध उपयोग कारननमें जो, रागकपाय मंद उदयाने । सो विशुद्ध तसु फल इंद्रादिक, विभव समाज सकल परमाने ॥ अति सं० ॥ २ ॥ परकारन मोहादिकतैं च्युत, दरसन ज्ञान चरन रस पाने । सो है शुद्ध भाव तसु फलतैं, पहुँचत परमानंद ठिकाने ॥ अति संक्ले० ॥ ३ ॥ इनमें जुगल बंधके कारन, परद्रव्याश्रित हेयप्रमाने । 'भागचंद' स्वसमय निज हित लखि, तामैं रम रहिये भ्रम हाने ॥ अति० ॥ ४ ॥

१४.

उग्रसेन गृह व्याहन आये, समदविजयके लाला ये ॥ उग्रसेन० ॥ टेक ॥ अशरन पशु आक्रंदन लखिकै, करुना भाव उपाये । जगत विभूति भूति सम तजिकै, अधिक

विराग बढ़ाये ॥ उग्रसेन० ॥ १ ॥ मुद्रा नगन धारि तंद्रा विन, आत्मब्रह्मरुचि लाये । ऊर्जयंतगिरि शिखरोपरि चढ़ि, शुचि थानकर्में थाये ॥ उग्रसेन० ॥ २ ॥ पंचमुष्टि कच लुंच मुंच रज, सिद्धनको शिर नाये । धवल ध्यान पावक ज्वालातैं, करम कलंक जलाये ॥ उग्र० ॥ ॥ ३ ॥ वस्तु समस्त हस्तरेखावत, जुगपत ही दरसाये । निरवशेष विध्वस्त कर्मकर, शिवपुरकाज सिधाये ॥ उग्रसेन० ॥ ४ ॥ अव्याबाध अगाध बोधमयतत्रानंद सुहाये । जगभूपन दूपनविन स्वामी, भागचंद गुन गाये ॥ उग्रसेन० ॥ ५ ॥

१५.

राग चर्चरी ।

सांची तो गंगा यह वीतरागवानी, अविच्छन्न धारा निज धर्मकी कहानी ॥ सांची० ॥ टेक ॥ जामें अति ही विमल अगाध ज्ञानपानी, जहां नहीं संशयादि पंककी निशानी ॥ सांची ॥ १ ॥ सप्तभंग जहँ तरंग उछलत सुखदानी, संतचित मरालवृंद रमैं नित्य ज्ञानी ॥ सांची० ॥ २ ॥ जाके अवगाहनतैं शुद्ध होय प्रानी, भागचंद निहचै घटमाहिं या प्रमानी ॥ सांची ॥ २ ॥

१६.

राग प्रभाती ।

प्रभु तुम मूरत दृगसों निरखै हरखै मोरो जीयरा ॥ प्रभु तुम० ॥ टेक ॥ भुजत कपायानल पुनि उपजै, ज्ञानसुधा-

रस सीयरा ॥ प्रभु तुम० ॥ १ ॥ वीतरागता प्रगट होत है, शिवथल दीसै नीयरा ॥ प्रभु तुम० ॥ २ ॥ भागचंद तुम चरन कमलमें, वसत संतजन हीयरा ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

१७.

राग प्रभाती ।

अरे हो जियरा धर्ममें चित्त लगाय रे ॥ अरे हो० ॥ टेक ॥ विषय विषसम जान भौंदू, वृथा क्यों लुभयाय रे । अरे हो० ॥ १ ॥ संग भार विषाद तोकौं, करत क्या नहिं भाय रे । रोग-उरग-निवास-वामी, कहा नहिं यह काय रे ॥ अरे हो० ॥ २ ॥ काल हरिकी गर्जना क्या, तोहि सुन न पराय रे । आपदा भर नित्य तोकौं, कहा नहिं दुख दायरे ॥ अरे हो० ॥ ३ ॥ याद तोहि कहा नहीं दुख, नरकके असहाय रे । नदी वैतरनी जहां जिय, परै अति बिललाय रे ॥ अरे हो० ॥ ४ ॥ तन धनादिक घनपटल, सम, छिनकमांहिं बिलाय रे । भागचंद सुजान इमि जदु-कुल-तिलक गुन गाय रे ॥ अरे हो० ॥ ५ ॥

१८.

श्रीजिनवरपद ध्यावैं जो नर, श्रीजिनवर पद ध्यावैं ॥ टेक ॥ तिनकी कर्मकालिमा विनशै, परम ब्रह्म हो जावैं । उपल अग्नि संजोग पाय जिमि, कंचन विमल कहावैं ॥ श्रीजिनवर० ॥ १ ॥ चन्द्रोज्वल जस तिनको जगमें, पंडित जन नित गावैं । जैसे कमलसुगंध दशोंदिश, पवन सहज फैलावैं ॥ श्रीजिनवर० ॥ २ ॥ तिनहिं मिलनको

मुक्ति सुंदरी, चित अभिलाषा ल्यावै। कूपिमें तृण जिम सहज ऊपजै, त्यौं स्वर्गादिक पावै ॥ श्रीजिनवर० ॥ ३ ॥ जनमजरामृत दावानल ये, भाव सलिलतैं भुजावैं। भागचन्द कहाँ ताईं वरनै, तिनहिं इंद्र शिर नावैं ॥ श्री-जिनवर० ॥ ४ ॥

१९.

राग विलावल।

सुमर सदा मन आतमराम, सुमर सदा मन आतम-राम ॥ टेक ॥ स्वजन कुटुंवी जन तू पोषै, तिनको होय सदैव गुलाम। सो तो हैं स्वारथके साथी, अंतकाल नहिं आवत काम ॥ सुमर सदा० ॥ १ ॥ जिमि मरीचिकामें मृग भटकै, परत सो जव ग्रीपम अति घाम। तैसे तू भव-माहीं भटकै, धरत न इक छिनहू विसराम ॥ सुमर० ॥२॥ करत न ग्लानि अवै भोगनमें, धरत न वीतराग परिनाम। फिर किमि नरकमाहिं दुख सहसी, जहाँ सुख लेश न आठौं जाम ॥ सुमर० ॥ ३ ॥ तातैं आकुलता अव तजिकै, थिर व्है वैठो अपने धाम। भागचंद वसि ज्ञान नगरमें, तजि रागादिक ठग सव ग्राम ॥ सुमर० ॥ ४ ॥

२०.

राग सारंग।

श्रीमुनि राजत समता संग। कायोत्सर्ग समायत अंग॥ टेक ॥ करतैं नहिं कछु कारज तातैं, आलम्बित भुज कीन अभंग। गमन काज कछु हू नहिं तातैं, गति तजि छाके

निज रसरंग ॥ श्रीमुनि० ॥ १ ॥ लोचनतैं लखिवौ कछु नाहीं, तातैं नासा दृग अचलंग । सुनिवे जोग रह्यो कछु नाहीं, तातैं प्राप्त इकंत सुचंग ॥ श्रीमुनि० ॥ २ ॥ तहँ मध्यान्हमाहिं निज ऊपर, आयो उग्र प्रताप पतंग । कैधौं ज्ञान पवनवल प्रज्वलित, ध्यानानलसों उछलि फुलिंग ॥ श्रीमु० ॥ ३ ॥ चित्त निराकुल अतुल उठत जहँ, परमानंद पियूषतरंग । भागचंद ऐसे श्रीगुरुपद, वंदत मिलत स्वपद उत्तंग ॥ श्रीमुनि० ॥ ४ ॥

२१.

राग गौरी ।

आतम अनुभव आवै जव निज, आतम अनुभव आवै । और कछू न सुहावै, जव निज० ॥ टेक ॥ रस नीरस हो जात ततच्छिन, अच्छ विषय नहिं भावै ॥ आतम० ॥ ॥ १ ॥ गोष्टी कथा कुतुहल विघटै, पुद्गलप्रीति नसावै ॥ आतम० ॥ २ ॥ राग दोष जुग चपल पक्षजुत, मन पक्षी मर जावै ॥ आतम० ॥ ३ ॥ ज्ञानानन्द सुधारस उमगै, घट अंतर न समावै ॥ आतम० ॥ भागचन्द ऐसे अनुभवके हाथ जोरि सिर नावै ॥ आतम० ॥ ४ ॥

२२.

राग ईमन ।

महिमा है अगम जिनागमकी ॥ टेक ॥ जाहि सुनत जड़ भिन्न पिछानी, हम चिन्मूरति आतमकी ॥ महिमा० ॥ १ ॥ रागादिक दुखकारन जानें, त्याग बुद्धि दीनी भ्रमकी । ज्ञान

ज्योति जागी घर अंतर, रुचि वाढ़ी पुनि शमदमकी ॥ ॥ महि० ॥ २ ॥ कर्म बंधकी भई निरजरा, कारण परंपरा क्रमकी । भागचन्द शिवलालच लागो, पहुँच नहीं है जहँ जमकी ॥ महिमा० ॥ ३ ॥

२३.

राग ईमन ।

धन धन श्रीश्रेयांसकुमार । तीर्थदान करतार ॥ टेक ॥ प्रभु लखि जाहि पूर्वश्रुत आई, चित हरपाय उदार । नवधा भक्ति समेत ईक्षुरस, प्रासुक दियो अहार ॥ धन० ॥ ॥ १ ॥ रतनवृष्टि सुरगन तव कीनी, अमित अमोघ सुधार । कलपवृक्ष पहुपनकी वर्षा, जहँ अलि करत गुँजार ॥ धन० ॥ २ ॥ सुरदुंदुभि सुन्दर अति बाजी, मन्द सुगंधि वयार । धन धन यह दाता इमि नभमें, चहुँदिशि होत उचार ॥ धन० ॥ ३ ॥ जस ताको अमरी नित गावत, चन्द्रोज्ज्वल अविकार । भागचन्द लघुमति क्या वरनै, सो तो पुन्य अपार ॥ धन० ॥ ४ ॥

२४.

ऐसे जैनी मुनिमहाराज, सदा उर मो वसो ॥ टेक ॥ जिन समस्त परद्रव्यनिमाहीं, अहंबुद्धि तजि दीनी । गुन अनंत ज्ञानादिक मम पुनि, स्वानुभूति लखि लीनी ॥ ॥ ऐसे० ॥ १ ॥ जे निजबुद्धिपूर्व रागादिक, सकल विभाव निवारैं । पुनि अबुद्धिपूर्वकनाशनको, अपनें शक्ति सम्हारैं ॥ ऐसे० ॥ २ ॥ कर्म शुभाशुभ बंध उद मर्पहयी

विषाद न राखैं । सम्यगदर्शनज्ञानचरनतप, भावसुधा-रस चाखैं ॥ ऐसे० ॥ ३ ॥ परकी इच्छा तजि निजवल सजि, पूरव कर्म खिरावैं । सकल कर्मतैं भिन्न अवस्था, सुखमय लखि चित चावैं ॥ ऐसो० ॥ ४ ॥ उदासीन शुद्धोपयोगरता सबके दृष्टा ज्ञाता । बाहिजरूप नगन समताकर, भागचन्द सुखदाता ॥ ऐसो० ॥ ५ ॥

२५.

राग जंगला ।

तुम गुनमनिनिधि हौ अरहंत ॥ टेक ॥ पार न पावत तुमरो गनपति, चार ज्ञान धरि संत ॥ तुम गुन० ॥ १ ॥ ज्ञानकोप सब दोष रहित तुम, अलख अमूर्ति अचिंत ॥ ॥ तुम गुन० ॥२॥ हरिगन अरचत तुम पदवारिज, परमेष्टी भगवंत ॥ तुम गुन० ॥ ३ ॥ भागचन्दके घटमंदिरमें, वसहु सदा जयवंत ॥ तुम गुन० ॥ ४ ॥

२६.

राग जंगला ।

शांति वरन मुनिराई वर लखि । उत्तर गुनगन सहित (मूल गुन सुभग) वरात सुहाई ॥ टेक ॥ तप रथपै आरूढ़ अनूपम, धरम सुमंगलदाई ॥ शांतिवरन० ॥ १ ॥ शिवरम-नीको पानिग्रहण करि, ज्ञानानन्द उपाई ॥ शांति वरन० ॥ २ ॥ भागचन्द ऐसे बनराको, हाथ जोर सिरनाई ॥ शांति वरन० ॥ ३ ॥

२७.

राग जंगला ।

म्हाकैं जिनमूरति हृदय वसी वसी ॥ टेक ॥ यद्यपि करुनारसमय तद्यपि, मोह शत्रु हनि असी असी ॥म्हा०॥ ॥ १ ॥ भामंडल ताको अति निर्मल, निःकलंक जिमि ससी ससी ॥ म्हाकैं० ॥ २ ॥ लखत होत अति शीतल मति जिमि, सुधा जलधिमें धसी धसी ॥ म्हाकैं० ॥ ३ ॥ भागचन्द जिस ध्यानमंत्रसों, ममता नागिन नसी नसी ॥ म्हाकैं० ॥ ४ ॥

२८.

राग खमाच ।

ज्ञानी मुनि छै ऐसे स्वामी गुनरास ॥ टेक ॥ जिनके शैलनगर मंदिर पुनि, गिरिकंदर सुखवास ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ निःकलंक परजंक शिला पुनि, दीप मृगांक उजास ॥ज्ञा०॥ ॥ २ ॥ मृग किंकर करुना वनिता पुनि, शील सलिल तपग्रास ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ भागचन्द ते हैं गुरु हमरे, तिनहीके हम दास ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥

२९.

राग खमाच ।

श्रीगुरु है उपगारी ऐसे वीतराग गुनधारी वे ॥ टेक ॥ स्वानुभूति रमनी सँग कीड़ैं, ज्ञानसंपदा भारी वे ॥ श्री गुरु० ॥ १ ॥ ध्यान पींजरामें जिन रोको, चित खग चंचल-

चारी वे ॥ श्रीगुरु छै० ॥ २ ॥ तिनके चरनसरोरुह ध्यावै, भागचन्द अघटारी वे ॥ श्रीगुरु० ॥ ३ ॥

३०.

राग खमाच ।

सारौ दिन निरफल खोयवौ करै छै । नरभव लहिकर प्रानी विनज्ञान, सारौ दिन नि० ॥ टेक ॥ परसंपति लखि निजचितमाहीं, विरथा मूरख रोयवौ करै छै ॥ सारो० ॥ १ ॥ कामानलतैं जरत सदा ही, सुन्दर कामिनी जोयवो करै छै ॥ सारो० ॥ २ ॥ जिनमत तीर्थस्थान न ठानै, जलसों पुद्गल धोयवो करै छै ॥ सारो० ॥ ३ ॥ भागचन्द इमि धर्म विना शठ, मोहनींदमें सोयवो करै छै ॥ सारो० ॥ ४ ॥

३१.

राग परज ।

सम आराम विहारी, साधुजन सम आराम विहारी ॥ ॥ टेक ॥ एक कल्पतरु पुष्पन सेती, जजत भक्ति विस्तारी ॥ एक कंठविच सर्प नाखिया, क्रोध दर्पजुत भारी ॥ राखत एक वृत्ति दोउनमें, सबहीके उपगारी ॥ समआरा० ॥ १ ॥ सारंगी हरिबाल चुखावै, पुनि मराल मंजारी । व्याघ्रबाल-करि सहित नन्दिनी, व्याल नकुलकी नारी ॥ तिनके चरन कमल आश्रयतैं, अरिता सकल निवारी ॥ सम आ० ॥ २ ॥ अक्षय अतुल प्रमोद विधायक, ताकौ धाम अपारी । काम धरा विव गढ़ी सो चिरतैं, आतमनिधि अविकारी ॥ खनत

ताहि लै कर करमें जे,तीक्षण बुद्धि कुदारी ॥ समआराम० ३
निज शुद्धोपयोगरस चाखत, परममता न लगारी । निज
सरधान ज्ञान चरनात्मक, निश्चय शिवमगचारी ॥
भागचंद ऐसे श्रीपति प्रति, फिर फिर ढोक हमारी
॥ समआरामवि० ॥४॥

३२.

राग सोरठ ।

इष्टजिन केवली म्हाकै इष्टजिन केवली, जिन सकल कलि-
मल दली ॥ टेक ॥ शान्ति छवि जिनकी विमल जिमि, चन्द्र-
दुति मंडली । संत-जन-मनके-कि-तर्पन सघन घनपटली ॥
॥ इष्टजिन के० ॥ १ ॥ स्यात्पदांकित धुनि सुजिनकी,
वदनतें निकली । वस्तुतत्त्वप्रकाशिनी जिमि, भानु किर-
नावली ॥ इष्टजिन० ॥ २ ॥ जासुपद अरविंदकी, मकरंद
अति निरमली । ताहि घ्रान करै नमित हर,-मुकुट-दुति-
मनि अली ॥ इष्टजिन० ॥ ३ ॥ जाहि जजत विराग उप-
जत, मोहनिद्रा टली । ज्ञानलोचनतैं प्रगट लखि, धरत
शिवपटगली ॥ इष्टजिन० ॥ ४ ॥ जासु गुन नहिं पार
पावत, बुद्धि ऋद्धि बली । भागचंद सु अलपमति जन,-की
तहां क्या चली ॥ इष्टजिन० ॥ ५ ॥

३३.

राग सोरठ ।

स्वामी मोह अपनो जानि तारौ, या विनती अब चित
धारौ ॥ टेक ॥ जगत उजागर करुनासागर, नागर नाम

तिहारौं ॥ स्वामी मोह० ॥ १ ॥ भव अटवीमें भटकत भटकत, अब मैं अति ही हारौं । स्वामी मोह० ॥ २ ॥ भागचन्द स्वच्छन्द ज्ञानमय, सुख अनंत विस्तारौं ॥ स्वामी मोह० ॥ ३ ॥

३४.

राग सोरठ देशी ।

थांकी तो वानीमें हो, निज स्वपरप्रकाशक ज्ञान ॥ टेक ॥ एकीभाव भये जड़ चेतन, तिनकी करत पिछान ॥ थांकी तो० ॥ १ ॥ सकल पदार्थ प्रकाशत जामें, मुकुर तुल्य अमलान ॥ थांकी तो० ॥२॥ जग चूड़ामनि शिव भये ते ही, तिन कीनों सरधान ॥ थांकी तो० ॥ ३ ॥ भागचंद बुधजन ताहीको, निशदिन करत बखान ॥ थांकी तो० ॥४॥

३५.

राग सोरठ मल्हारमें ।

गिरिवनवासी मुनिराज, मन बसिया म्हारैं हो ॥ टेक ॥ कारनविन उपगारी जगके, तारन-तरन-जिहाज ॥ गिरिवन० ॥१॥ जनम-जरामृत-गद-गंजनको, करत विवेक इलाज ॥ गिरिवन० ॥ २ ॥ एकाकी जिमि रहित केसरी, निरभय स्वगुन समाज ॥ ३ ॥ निर्भूपन निर्वसन निराकुल, सजि रत्नत्रय साज ॥ गिरिवन० ॥ ४ ॥ ध्यानाध्ययनमाहिं तत्पर नित, भागचन्द शिवकाज ॥ गिरिवन० ॥५॥

३६.

राग सोरठ।

म्हांकै घट जिनधुनि अब प्रगटी। जागृत दशा भई अब मेरी, सुप्त दशा विघटी। जगरचना दीसत अब मोकों, जैसी रँहटघटी ॥ म्हांकै घट० ॥ १ ॥ विभ्रम तिमिर-हरन निज दृगकी, जैसी अँजनवटी। तातैं स्वानु-भूति प्रापतितैं परपरनति सब हटी ॥ म्हांकै घट० ॥ २ ॥ ताके विन जो अवगम चाहै, सो तो शठ कपटी। तातैं भागचन्द निशिवासर, इक ताहीको रटी ॥ म्हांकै घट०॥३॥

३७.

राग सोरठ।

आवै न भोगनमें तोहि गिलान ॥ टेक ॥ तीरथनाथ भोग तजि दीनें, तिनतैं मन भय आन। तू तिनतैं कहुँ डर-पत नाहीं, दीसत अति बलवान॥ आवै न० ॥१॥ इन्द्रिय-तृप्ति काज तू भोगै, विषय महा अघखान। सो जैसे घृत-धारा डारै, पावकज्वाल बुझान ॥ आवै न० ॥ २ ॥ जे सुख तो तीछन दुखदाई, ज्यों मधुलिप्त-कृपान। तातैं भागचन्द इनको तजि, आतमस्वरूप पिछान॥ आवै न०॥३॥

३८.

राग सोरठ।

स्वामीजी तुम गुन अपरंपार, चन्द्रोज्ज्वल अविकार ॥ टेक ॥ जबै तुम गर्भमाहिं आये, तबै सब सुरगन मिलि आये। रतन नगरीमें बरपाये, अमित अमोघ सुढार ॥ स्वामी

जी० ॥ १ ॥ जन्म प्रभु तुमने जब लीना, न्हवन मंदिरपै हरि कीना। भक्ति करि सची सहित भीना, बोला जयजय-कार ॥ स्वामीजी० ॥ २ ॥ जगत छनभंगुर जब जाना, भये तब नगनवृत्ती वाना। स्तवन लौकांतिकसुर ठाना, त्याग राजको भार ॥ स्वामीजी० ॥ ३ ॥ घातिया प्रकृति जबै नासी, चराचर वस्तु सबै भासी। धर्मकी वृष्टि करी खासी, केवलज्ञान भँडार ॥ स्वामीजी० ॥ ४ ॥ अघाती प्रकृति सुविघटाई, मुक्तिकान्ता तब ही पाई। निराकुल आनँद असहाई, तीनलोकसरदार ॥ स्वामीजी० ॥ ५ ॥ पार गनधर हू नहिं पावै, कहां लगि भागचन्द गावै। तुम्हारे चरनांबुज ध्यावै, भवसागरसों तार ॥ स्वामीजी० ॥ ६ ॥

३९.

राग मल्हार।

मान न कीजिये हो परवीन ॥ टेक ॥ जाय पलाय चंचला कमला, तिष्टै दो दिन तीन। धनजोबन छनभंगुर सब ही, होत सुछिन छिन छीन ॥मान न०॥१॥ भरत नरेन्द्र खंड-खट-नायक, तेहु भये मदहीन। तेरी बात कहा है भाई, तू तो सहज हि दीन ॥ मान न० ॥ २ ॥ भागचन्द मार्दव-रससागर, माहिं होहु लवलीन। तातैं जगतजालमें फिर कहुं, जनम न होय नवीन ॥ मान न० ॥ ३ ॥

४०.

राग मल्हार।

अरे हो अज्ञानी, तूने कठिन मनुपभव पायो ॥टेक॥

लोचनरहित मनुपके करमें, ज्यों बटेर खग आयो ॥ अरे हो० ॥ १ ॥ सो तू खोवत विषयनमाहीं, धरम नहीं चित लायो ॥ अरे हो० ॥ २ ॥ भागचन्द उपदेश मान अब, जो श्रीगुरु फरमायो ॥ अरे हो० ॥ ३ ॥

४१

राग मल्हार ।

बरसत ज्ञान सुनीर हो, श्रीजिनमुखघनसों ॥ टेक ॥ शीतल होत सुबुद्धिमेदिनी, मिटत भवातप-पीर ॥ बरसत० ॥ १ ॥ स्यादवाद नयदामिनि दमकै, होत निनाद गँभीर ॥ बरसत० ॥ २ ॥ करुनानदी बहै चहुं दिशितें, भरी सो दोई तीर ॥ बरसत० ॥ ३ ॥ भागचन्द अनुभवमंदिरको, तजत न संत सुधीर ॥ बरसत ॥४॥

४२.

राग मल्हार ।

मेघघटासम श्रीजिनबानी ॥ टेक ॥ स्यात्पद चपला चमकत जामें, बरसत ज्ञान सुपानी ॥ मेघघटा० ॥ १ ॥ धरमसस्य जातें बहु बाढ़ें, शिवआनँदफलदानी ॥ मेघ घटा० ॥ २ ॥ मोहन धूल दबी सब यातें, क्रोधानल सुबुझानी ॥ मेघघटा० ॥ ३ ॥ भागचन्द बुधजन केकीकुल, लखि हरखैं चितज्ञानी ॥ मेघ० ॥ ४ ॥

४३.

राग धनाश्री ।

प्रभू थांकों लखि ममचित हरषायो ॥ टेक ॥ सुंदर चिंता-

रतन अमोलक, रंकपुरुष जिमि पायो ॥ प्रभू० ॥ १ ॥ निर्मलरूप भयो अब मेरो, भक्तिनदीजल न्हायो ॥ प्रभू थांको० ॥ २ ॥ भागचन्द अब मम करतलमें, अविचल शिवथल आयो ॥ प्रभू० ॥ ३ ॥

४४.

राग मल्हार।

प्रभू म्हांकी सुधि, करुना करि लीजे ॥ टेक ॥ मेरे इक अवलम्बन तुम ही, अब न विलम्ब करीजे ॥ प्रभू० ॥ १ ॥ अन्य कुदेव तजे सब मैंने, तिनतैं निजगुन छीजे ॥ प्रभू० ॥ २ ॥ भागचन्द तुम शरन लियो है, अब निश्चलपद दीजे ॥ प्रभू० ॥ ३ ॥

४५.

राग कलिंगड़ा।

ऐसे साधू सुगुरु कब मिल हैं ॥ टेक ॥ आप तरैं अरु परको तारैं, निष्प्रेही निरमल हैं ॥ ऐसे० ॥ १ ॥ तिल-तुषमात्र संग नहिं जाकै, ज्ञान-ध्यान-गुन-बल हैं ॥ ऐसे साधू० ॥ २ ॥ शान्तदिगम्बर मुद्रा जिनकी, मन्दिरतुल्य अचल हैं ॥ ऐसे० ॥ ३ ॥ भागचन्द तिनको नित चाहै, ज्यों कमलनिको अल है ॥ ऐसे० ॥ ४ ॥

४६.

राग कहरवा कलिंगड़ा।

केवल जोति सुजागी जी, जब श्रीजिनवरके ॥ टेक ॥ लोकालोक विलोकत जैसे, हस्तामल बड़भागी जी ॥ के० ॥

॥ १ ॥ हरि-चूड़ामनिशिखा सहज ही, नम्र भूमितैं लागी जी ॥ केवल० ॥ २ ॥ समवसरन रचना सुर कीन्हीं, देखत भ्रम जन त्यागी जी ॥ केवल० ॥ ३ ॥ भक्तिसहित अरचा तब कीन्हीं, परम धरम अनुरागी जी ॥ केवल० ॥ ॥४॥ दिव्यध्वनि सुनि सभा दुवादश, आनँदरसमें पागी जी ॥ केवल० ॥ ५ ॥ भागचंद प्रभुभक्ति चहत हैं, और कछू नहिं मांगी जी ॥ केवल० ॥ ६ ॥

४७.

ख्याल ।

विन काम ध्यानमुद्राभिराम, तुम हो जगनायकजी ॥ टेक ॥ यद्यपि वीतरागमय तद्यपि, हो शिवदायक जी ॥ विन काम० ॥ १ ॥ रागी देव आप ही दुखिया, सो क्या लायक जी ॥ विन काम० ॥ २ ॥ दुर्जय मोह शत्रु हनवेंको, तुम वच शायकजी ॥ विन काम० ॥ ३ ॥ तुम भवमोचन ज्ञानसुलोचन, केवलक्षायकजी ॥ विन काम० ॥ ४ ॥ भागचन्द भागनतैं प्रापति, तुम सब ज्ञायकजी ॥ विन काम० ॥ ५ ॥

४८.

राग काफी ।

अहो यह उपदेशमाहीं, खूब चित्त लगावना । होयगा कल्यानतेरा, सुख अनंत बढ़ावना ॥ टेक ॥ रहित दूपन विश्वभूपन, देव जिनपति ध्यावना । गगनवत निर्मल अचल मुनि, तिनहिं शीस नवावना ॥ अहो० ॥१॥ धर्म अनुकंपा

प्रधान, न जीव कोइ सतावना । सप्ततत्त्वपरीक्षना करि, हृदय श्रद्धा लावना ॥ अहो० ॥ २ ॥ पुद्गलादिकतैं पृथक्, चैतन्य ब्रह्म लखावना । या विधि विमल सम्यक्त धरि, शंकादि पंक बहावना ॥ अहो० ॥ ३ ॥ रुचैं भव्यनको वचन जे, शठनको न सुहावना । चन्द्र लखि जिमि कुमुद विकसै, उपल नहिं विकसावना ॥ अहो० ॥ ४ ॥ भागचंद विभाव तजि, अनुभव स्वभावित भावना । या विन शरन्य न अन्य जगता-रन्यमें कहुँ पावना ॥ अहो० ॥ ५ ॥

४९.

राग काफी ।

ऐसे विमल भाव जब पावै, तब हम नरभव सुफल-कहावै ॥ टेक ॥ दरशबोधमय निजआतम लखि, परद्रव्यनिको नहिं अपनावै । मोह-राग-रुष अहित जान तजि, झटित दूर तिनको छुटकावै ॥ ऐसे० ॥ १ ॥ कर्म शुभाशुभबंध उदयमें, हर्ष विषाद चित्त नहिं ल्यावै । निज-हित-हेत विराग ज्ञान लखि, तिनसों अधिक प्रीति उपजावै ॥ ऐसे० ॥ २ ॥ विषयचाह तजि आत्मवीर्य सजि, दुखदायक विधिबंध खिरावै । भागचन्द शिवसुख सब सुखमय, आकुलता विन लखि चित चावै ॥ ऐसे० ॥ ३ ॥

५०.

राग काफी ।

प्रभूपै यह वरदान सुपाऊं, फिर जगकीचबीच नहिं आऊं ॥ टेक ॥ जल गंधाक्षत पुष्प सुमोदक, दीप धूप फल

सुन्दर ल्याऊं । आनँदजनक कनकभाजन धरि, अर्घ अनर्घ बनाय चढ़ाऊं ॥ प्रभू पै० ॥ १ ॥ आगमके अभ्या-समाहिं पुनि, चित्त एकाग्र सदैव लगाऊं । संतनकी संगति तजिके मैं, अंत कहूं इक छिन नहिं जाऊं ॥ प्रभूपै० ॥२॥ दोषवादमें मौन रहूं फिर, पुण्यपुरुषगुन निशिदिन गाऊं । मिष्ट स्पष्ट सबहिसों भाषों, वीतराग निज भाव बढ़ाऊं ॥ प्रभूपै० ॥ ३ ॥ बाहिजदृष्टि ऐंचके अन्तर, परमानन्दस्वरूप लखाऊं । भागचन्द शिवप्राप्त न जौ-लौं, तौं लौं तुम चरनांबुज ध्याऊं ॥ प्रभूपै० ॥ ४ ॥

५१.

लावनी ।

धन्य धन्य है घड़ी आजकी, जिनधुनि श्रवन परी । तत्त्वप्रतीत भई अब मेरे, मिथ्यादृष्टि टरी ॥ टेक ॥ जड़तें भिन्न लखी चिन्मूरति, चेतन स्वरस भरी । अहंकार ममकार बुद्धि पुनि, परमें सब परिहरी ॥ धन्य० ॥ १ ॥ पापपुन्य विधिबंध अवस्था, भासी अतिदुखभरी । वीतराग विज्ञानभावमय, परिनत अति विस्तरी ॥ धन्य० ॥ ॥ २ ॥ चाह-दाह विनसी बरसी पुनि, समतामेघझरी । बाढ़ी प्रीति निराकुल पदसों, भागचन्द हमरी ॥धन्य०॥३॥

५२.

लावनी ।

सफल है धन्य धन्य वा घरी, जब ऐसी अति निर्मल होसी, परमदशा हमरी ॥ टेक ॥ धारि दिगंबरदीक्षा सुंदर,

त्याग परिग्रह अरी । वनवासी कर पात्र परीषह, सहि हों धीर धरी ॥ सफल० ॥ १ ॥ दुर्धर तप निर्भर नित तप हों, मोह कुवृक्ष करी । पंचाचारक्रिया आचर हों, सकल सार सुथरी ॥ सफल० ॥ २ ॥ विभ्रमतापहरन झरसी निज, अनुभव-मेघ-झरी । परम शान्त भावनकी तातैं, होसी वृद्धि खरी ॥ सफल० ॥ ३ ॥ त्रेसठिप्रकृति भंग जब होसी, जुत त्रिभंग सगरी । तब केवलदर्शनविबोध सुख, वीर्यकला पसरी ॥ सफल० ॥ ४ ॥ लखि हो सकल द्रव्य गुनपर्जय, परनति अति गहरी । भागचन्द जब सहजहि मिल है, अचल मुकति नगरी ॥ सफल० ॥५॥

५३.

राग सोरठ ।

जे दिन तुम विवेक विन खोये ॥ टेक ॥ मोह वारुणी पी अनादितैं, परपदमें चिर सोये । सुखकरंड चितपिंड आपपद, गुन अनंत नहिं जोये । जे दिन० ॥ १ ॥ होय बहिर्मुख ठानि राग रुख, कर्म बीज बहु बोये । तसु फल सुख दुख सामिग्री लखि, चितमें हरषे रोये ॥ जे दिन० ॥ ॥ २ ॥ धवल ध्यान शुचि सलिलपूरतें, आस्रव मल नहिं धोये । परद्रव्यनिकी चाह न रोकी, विविध परिग्रह ढोये ॥ जे दिन० ॥ ३ ॥ अब निजमें निज जान नियत तहां, निज परिनाम समोये । यह शिवमारग समरससागर, भागचन्द हित तो ये ॥ जे दिन० ॥ ४ ॥

५४.

राग दादरा।

धनि ते प्रानी, जिनकें तत्वारथ श्रद्धान ॥ टेक ॥ रहित सप्त भय तत्वारथमें, चित्त न संशय आन। कर्म कर्ममलकी नहिं इच्छा, परमें धरत न ग्लानि ॥ धनि० ॥ १ ॥ सकल भावमें मूढ़दृष्टितजि, करत साम्यरसपान। आतम धर्म बढावें वा, परदोष न उचरैं वान ॥ धनि० ॥ २ ॥ निज स्वभाव वा जैनधर्ममें, निजपरथिरता दान रत्नत्रय महिमा प्रगटावै, प्रीतिस्वरूप महान ॥ धनि० ॥ ॥ ३ ॥ ये वसु अंगसहित निर्मल यह, समकित निज गुन जान। भागचंद शिवमहल चढ़नको, अचल प्रथम सोपान ॥ धनि० ॥ ४ ॥

५५.

राग जोड़ा।

ज्ञानी जीवनके भय होय, न या परकार ॥ टेक ॥ इह भव परभव अन्य न मेरो, ज्ञानलोक मम सार। मैं वेदक इक ज्ञानभावको, नहिं परवेदनहार ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ निज सुभावको नाश न तातैं, चहिये नहिं रखवार। परमगुप्त निजरूप सहज ही, परकी तहँ न सँचार ॥ ज्ञानी० ॥ ॥ २ ॥ चितस्वभाव निज प्रान तासको, कोइ नहीं हरतार। मैं चितपिंड अखंड न तातैं, अकस्मात भयभार ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ होय निशंक स्वरूप अनुभवै, जिनके

यह निरधार। मैं सो मैं पर सो मैं नाहीं, भागचंद भ्रम डार ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥

५६.

राग जोड़ा।

मैं तुम शरन लियो, तुम सांचे प्रभु अरहंत ॥टेक॥तुमरे दर्शन ज्ञान मुकरमें, दरशज्ञान झलकंत। अतुल निराकुल सुख आस्वादन, वीरज अरज (?) अनंत ॥ मैं तुम० ॥ १ ॥ रागद्वेष विभाव नाश भये, परम समरसी संत। पद देवाधिदेव पायो किय, दोष क्षुधादिक अंत ॥ मैं तुम० ॥ २ ॥ ? भूषन वसन शस्त्र कामादिक, करन विकार अनंत। तिन विन तुम परमौदारिक तन, मुद्रा सम शोभंत ॥ मैं तुम० ॥ ॥ ३ ॥ तुम वानीतैं धर्मतीर्थ जग, माहिं त्रिकाल चलंत। निजकल्याणहेतु इन्द्रादिक, तुम पदसेव करंत ॥ मैं तुम० ॥ ४ ॥ तुम गुन अनुभवतैं निज पर गुन, दरसत अगम अचिंत। भागचंद निजरूपप्राप्ति अब, पावैं हम भगवंत ॥ मैं तुम० ॥ ५ ॥

५७.

राग गौरी।

आतम अनुभव आवै जब निज, आतम अनुभव आवै। और कछू न सुहावै जब निज, आतम अनुभव आवै ॥ टेक ॥ जिनआज्ञाअनुसार प्रथम ही, तत्त्वप्रतीति अनावै। वरनादिक रागादिकतैं निज, चिन्न भिन्न फिर ध्यावै ॥ आतम० ॥ १ ॥ मतिज्ञान फरसादि

विषय तजि आतम सम्मुख धावै । नय प्रमान निक्षेप सकल श्रुत, ज्ञानविकल्प नसावै ॥ आतम० ॥ २ ॥ ? चिदहं शुद्धोऽहं इत्यादिक, आपमाहिं बुध आवै । तन पै वज्रपात गिरतैं हू, नेकु न चित्त डुलावै ॥आतम०॥ ॥ ३ ॥ स्वसंवेद आनंद बढ़ै अति, वचन कह्यो नहिं जावै । देखन जानन चरन तीन विच, इक स्वरूप लहरावै ॥ आतम० ॥ ४ ॥ चितकर्ता चित कर्मभाव चित, परनति क्रिया कहावै । साधक साध्य ध्यान ध्येयादिक, भेद कछू न दिखावै ॥ आतम० ॥ ५ ॥ आतमप्रदेश अदृष्ट तदपि, रसस्वाद प्रगट दरसावै । ज्यों मिश्री दीसत न अंधको, सपरस मिष्ट चखावै ॥ आतम० ॥ ६ ॥ जिन जीवनके, संसृत पारावार पार निकटावै । भागचंद ते सार अमोलक, परम रतन वर पावै ॥ आतम० ॥ ७ ॥

५८.

राग दादरा ।

चेतन निज भ्रमतें भ्रमत रहै ॥ टेक ॥ आप अभंग तथापि अंगके संग महा दुख (पुंज) वहै । लोहपिंड संगति पावक ज्यों, दुर्धर घनकी चोट सहै ॥ चेतन० ॥ १ ॥ नामकर्मके उदय-प्राप्त नर, नरकादिक परजाय धरै । तामें मान अपनपौ विरथा, जन्म जरा मृतु पाय डरै ॥ चेतन० ॥ २ ॥ कर्ता होय रागरुप ठानै, परको साक्षी रहत न यहै । व्याप्य सु व्यापक भाव विना किमि, परको करता होत न यहै ॥ चे०॥

॥ ३ ॥ जब भ्रमनींद त्याग निजमें निज, हित हेत सम्हारत है। वीतराग सर्वज्ञ होत तब, भागचन्द हितसीख कहै ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

५९.

दोहा।

विश्वभावव्यापी तदपि, एक विमल चिद्रूप।
ज्ञानानंदमयी सदा, जयवंतौ जिनभूप ॥

छन्द चाल।

सफली मम लोचनद्वंद्व। देखत तुमको जिनचंद।
मम तनमन शीतल एम। अम्रतरस सींचत जेम ॥
तुम बोध अमोघ अपारा। दर्शन पुनि सर्व निहारा ॥
आनंद अतिन्द्रिय राजै। बल अतुल स्वरूप न त्याजै ॥
इत्यादिक स्वगुन अनन्ता। अन्तर्लक्ष्मी भगवंता।
बाहिज विभूति बहु सोहै। बरनन समर्थ कवि को है ॥
तुम वृच्छ अशोक सुस्वच्छ। सब शोकहरनको दच्छ ॥
तहां चंचरीक गुंजारैं। मानों तुम स्तोत्र उचारैं ॥
शुभ रत्नमयूख विचित्र। सिंहासन शोभ पवित्र ॥
तहां वीतराग छवि सोहै। तुम अंतरीछ मनमोहै।
वर कुन्दकुन्द अवदात। चामरव्रज सर्व सुहात ॥
तुम ऊपर मघवा ढारै। धर भक्ति भाव अघ टारै।
मुक्ताफल माल समेत। तुम ऊर्द्ध छत्रत्रय सेत ॥
मानों तारान्वित चन्द। त्रय मूर्ति धरी दुति वृन्द ॥
शुभ दिव्य पटह बहु बाजैं। अतिशय जुत अधिक विराजैं।

तुमरो जस घोकैं मानौं । त्रैलोक्यनाथ यह जानौं ॥
हरिचन्दन सुमन सुहाये । दशदिशि सुगंधि महकाये ॥
अलिपुंज विगुंजत जामैं । शुभ वृष्टि होत तुम सामैं ॥१०॥
भामंडल दीप्ति अखंड । छिप जात कोट मार्तंड ॥
जग लोचनको सुखकारी । मिथ्यातमपटल निवारी ॥
तुमरी दिव्यध्वनि गाजै । विन इच्छा भविहित काजै ॥
जीवादिक तत्त्वप्रकाशी । भ्रमतमहर सूर्यकलासी ॥
इत्यादि विभूति अनंत । वाहिज अतिशय अरहंत ।
देखत मन भ्रमतम भागा । हित अहित ज्ञान उर जागा ॥
तुम सव लायक उपगारी । मैं दीन दुखी संसारी ॥
तातैं सुनिये यह अरजी । तुम शरन लियो जिनवरजी ॥
मैं जीवद्रव्य विन अंग । लागो अनादि विधि संग ॥
ता निमित पाय दुख पाये । हम मिथ्यातादि महा ये ।
निज गुन कवहूं नहिं भाये । सव परपदार्थ अपनाये ।
रति अरति करी सुखदुखमें । व्है करि निजधर्म विमुख मैं १६
पर-चाह-दाह नित दाहौ । नहिं शांत सुधा अवगाहौ ॥
पशु नारक नर सुरगतमें । चिर भ्रमत भयो भ्रममतमें ॥१७॥
कीनें वहु जामन मरना । नहिं पायो सांचो शरना ।
अव भाग उदय मो आयो । तुम दर्शन निर्मल पायो ॥१८॥
मन शांत भयो उर मेरो । वाढ़ो उछाह शिवकेरो ॥
परविषयरहित आनन्द । निज रस चाखो निरद्वन्द ॥१९॥
मुझ काजतनें कारज हो । तुम देव तरन तारन हो ॥
तातैं ऐसी अव कीजे । तुम चरन भक्ति मोह दीजे ॥२०॥

दृग–ज्ञान–चरन परिपूर। पाऊं निश्चय भवचूर॥
दुखदायक विषय कषाय। इनमें परनति नहिं जाय॥२१॥
सुरराज समाज न चाहों। आतम समाधि अवगाहों।
पर इच्छा मो मनमानी। पूरो सब केवलज्ञानी॥ २२॥

दोहा।

गनपति पार न पावहीं, तुम गुनजलधि विशाल।
भागचन्द तुव भक्ति ही, करै हमैं वाचाल॥ २३॥

६०.

गीतिका।

तुम परम पावन देख जिन, अरि–रज–रहस्य विनाशनं। तुम ज्ञान–दृग–जलवीच त्रिभुवन, कमलवत प्रतिभासनं॥ आनंद निजज अनंत अन्य, अचिंत संतत परनये। बल अतुल कलित स्वभावतैं नहिं, खलित गुन अमिलित थये॥ १॥ सब राग रुष हनि परम श्रवन स्वभाव घन निर्मल दशा। इच्छारहित भवहित खिरत, वच सुनत ही भ्रमतम नशा। एकान्त–गहन–सुदहन स्यातपद, बहन मय निजपर दया। जाके प्रसाद विषाद विन, मुनिजन सपदि शिव-पद लहा॥ २॥ भूषन वसन सुमनादिविन तन, ध्यान-मय मुद्रा दिपै। नासाग्र नयन सुपलक हलय न, तेज लखि खगगन छिपै॥ पुनि वदन निरखत प्रशम जल, वरखत सुहरखत उर धरा। बुधि स्वपर परखत पुन्यआकर, कलिकलिल दुरखत जरा॥ ३॥ इत्यादि वहिरंतर असा-धारन, सुविभवनिधान जी। इन्द्रादिवंद पदारविंद, अनिंद

तुम भगवान जी ॥ मैं चिर दुखी परचाहतैं, तुम धर्म नियत न उर धरो ॥ परदेवसेव करी बहुत, नहिं काज एक तहां सरो ॥ ४ ॥ अब भागचन्द उदय भयो, मैं शरन आयो तुम तने । इक दीजिये वरदान तुम जस, स्वपद दायक बुध भने ॥ परमाहिं इष्ट-अनिष्ट-मति तजि, मगन निज गुनमें रहों । दृग-ज्ञान-चर संपूर्ण पाऊं, भागचंद न पर चहों ॥ ५ ॥

६१.

राग दीपचन्दी।

कीजिये कृपा मोह दीजिये स्वपद, मैं तो तेरो ही शरन लीनों है नाथ जी ॥ टेक ॥ दूर करो यह मोह शत्रुको, फिरत सदा जो मेरे साथ जी ॥ कीजिये० ॥ १ ॥ तुमरे वचन कर्मगद-मोचन, संजीवन औषधी क्वाथ जी ॥ ॥ कीजि० ॥ २ ॥ तुमरे चरन कमल बुध ध्यावत, नावत हैं पुनि निजमाथ जी ॥ कीजि० ॥ ३ ॥ भागचंद मैं दास तिहारो, ठाड़ो जोरें जुगल हाथ जी ॥ कीजि० ॥ ४ ॥

६२.

राग दीपचन्दी।

निज कारज काहे न सारै रे, भूले प्रानी ॥ टेक ॥ परिग्रह भारथकी कहा नाहीं, आरत होत तिहारै रे ॥ निज० ॥ १ ॥ रोगी नर तेरी वपुको कहा, तिस दिन नाहीं जारै रे ॥ निज का० ॥ २ ॥ क्रूरकृतांत सिंह कहा जगमें, जीवनको न पछारै रे ॥ निज का० ॥ ३ ॥ करनविषय विष-

भोजनवत कहा, अंत विरसता न धारै रे ॥ निज० ॥ ४ ॥ भागचन्द भवअंधकूपमें, धर्म रतन काहे डारै रे ॥ ॥ निज का० ॥ ५ ॥

६३.

हरी तेरी मति नर कौनें हरी । तजि चिन्तामन कांच ग्रहत शठ ॥ टेक ॥ विषय कषाय रुचत तोकौं नित, जे दुखकरन अरी । हरी तेरी० ॥ १ ॥ सांचे मित्र सुहितकर श्रीगुरु, तिनकी सुधि विसरी । हरी तेरी० ॥ २ ॥ परपरनतिमें आपो मानत, जो अति विपति भरी । हरी तेरी० ॥ ॥ ३ ॥ भागचन्द जिनराज भजन कहुं, करत न एक घरी । हरी तेरी० ॥ ४ ॥

६४.

सुमर मन समवसरन सुखदाई । अशरन शरन धनदकृत प्रभुको ॥ टेक ॥ मानस्तंभ सरोवर सुंदर, विमल सलिलजुत खाई । पुष्पवाटिका तुंगकोट पुनि, नाट्यशाल मनभाई ॥ सुमर मन० ॥ १ ॥ उपवन जुगल विशाल वेदिका, धुजपंकति लहकाई । हाटक कोट कल्पतरुवन पुनि, द्वादश सभा वरनि नहिं जाई ॥ सुमर० ॥ २ ॥ तहँ त्रिपीठपर देव स्वयंभू, राजत श्रीजिनराई । जाहि पुरंदरजुत वृन्दारक-वृन्द सु वंदत आई । भागचन्द इमि ध्यावत ते जन, पावत जगठकुराई ॥ सुमर मन० ॥ ३ ॥

६५.

सोई है सांचा महादेव हमारा । जाके नाहीं रागरोष

गद, मोहादिक विस्तारा ॥ टेक ॥ जाके अंग न भस्म लिप्त है, नहिं रुंडनकृत हारा। भूषण व्याल न भाल चन्द्र नहिं, शीस जटा नहिं धारा ॥ सोई है० ॥ १ ॥ जाके गीत न नृत्य न मृत्यु न, बैलतनो न सवारा। नहिं कोपीन न काम कामिनी, नहिं धन धान्य पसारा ॥ सोई है० ॥ २॥ सो तो प्रगट समस्त वस्तुको, देखन जाननहारा। भागचन्द ताहीको ध्यावत, पूजत बारंवारा ॥ सोई है० ॥ ३॥

६६.

समझाओ जी आज कोई करुनाधरन, आये थे व्याहिन काज वे तो भये, हैं विरागी पशूदया लख लख ॥ टेक ॥ विमल चरन पागी, करन विषय त्यागी, उननें परम ज्ञानानंद चख चख ॥ समझायो० ॥ १ ॥ सुभग मुकति नारी, उनहिं लगी प्यारी, हमसों नेह कछू नहीं रख रख ॥ समझायो० ॥ २ ॥ वे त्रिभुवनस्वामी, मदनरहित नामी, उनके अमर पूजे पद नख नख ॥ समझायो० ॥ ३॥ भागचन्द मैं तो तलफत अति जैसे, जलसों तुरत न्यारी जक झख झख ॥ समझायो० ॥ ४ ॥

६७.

गिरनारीपै ध्यान लगाया, चल सखि नेमिचन्द मुनिराया ॥ टेक ॥ संग भुजंग रंग उन लखि तजि, शत्रु अनंग भगाया। बाल ब्रह्मचारी व्रतधारी, शिवनारी चित लाया ॥ गिरनारी० ॥ १ ॥ मुद्रा नगन मोहनिद्रा बिन, नासादृग मन भाया। आसन धन्य अनन्य वन्य चित, पुष्ट(?)

थूल सम थाया ॥ गिरनारी० ॥ २ ॥ जाहि पुरन्दर पूजन आये, सुन्दर पुन्य उपाया। भागचन्द सम प्राननाथ सो, और न मोह सुहाया ॥ गिरनारी० ॥ ३ ॥

६८.

राग दीपचन्दी परज।

नाथ भये ब्रह्मचारी, सखी घर मैं न रहोंगी ॥ टेक ॥ पाणिग्रहण काज प्रभु आये, सहित समाज अपारी। ततछिन ही वैराग भये हैं, पशुकरुना उर धारी ॥ नाथ०॥ ॥ १ ॥ एक सहस्रअष्टलच्छनजुत, वा छविकी वलिहारी। ज्ञानानंद मगन निशिवासर, हमरी सुरत विसारी ॥ नाथ० ॥ २ ॥ मैं भी जिनदीक्षा धरि हों अब, जाकर श्रीगिरनारी। भागचन्द इमि भनत सखिनसों, उग्रसेनकी कुमारी ॥ नाथ० ॥ ३ ॥

६९.

राग दीपचन्दी कानेर।

जानके सुज्ञानी, जैनवानीकी सरधा लाइये ॥ टेक ॥ जा विन काल अनंते भ्रमता, सुख न मिलै कहुं प्रानी ॥ ॥ जानके० ॥ १ ॥ स्वपर विवेक अखंड मिलत है, जाहीके सरधानी ॥ जानके० ॥ २ ॥ अखिलप्रमानसिद्ध अविरुद्धत, स्यात्पद शुद्ध निशानी ॥ जानके० ॥ ३ ॥ भागचन्द सत्यारथ जानी, परमधरमरजधानी ॥ जानके० ॥ ४ ॥

७०.

राग दीपचन्दी धनाश्री ।

तू स्वरूप जाने विन दुखी, तेरी शक्ति न हलकी वे ॥ टेक ॥ रागादिक वर्णादिक रचना, सोहै सब पुद्गलकी वे ॥ तू स्व० ॥ १ ॥ अष्ट गुनातम तेरी मूरति, सो केवल-में झलकी वे ॥ तू स्व० ॥ २ ॥ जगी अनादि कालिमा तेरे, दुस्त्यज मोहन मलकी वे ॥ तू स्व० ॥ ३ ॥ मोह नसैं भासत है मूरत, पँक नसैं ज्यों जलकी वे ॥ तू स्व० ॥ ४ ॥ भागचन्द सो मिलत ज्ञानसों, स्फूर्ति अखंड स्वबलकी वे ॥ तू स्व० ॥ ५ ॥

७१.

राग दीपचन्दी ।

महिमा जिनमतकी, कोई वरन सकै बुधिवान ॥ टेक ॥ काल अनंत भ्रमत जिय जा विन, पावत नाहिं निज थान ॥ परमानन्दधाम भये तेही, तिन कीनों सरधान ॥ महिमा० ॥ ॥ १ ॥ भव मरुथलमें ग्रीषमरितु रवि, तपत जीव अति प्रान । ताको यह अति शीतल सुंदर, धारा सदन समान ॥ महिमा० ॥ २ ॥ प्रथम कुमत वनमें हम भूले, कीनी नाहिं पिछान । भागचन्द अब याको सेवत, परम पदा-रथ जान ॥ महिमा० ॥ ३ ॥

७२.

राग दीपचन्दी सोरठ ।

प्रानी समकित ही शिवपंथा । या विन निर्फल सब

ग्रंथा ॥ टेक ॥ जा विन बाह्यक्रिया तप कोटिक, सकल वृथा है रंथा ॥ प्रानी० ॥ १ ॥ हयजुतरथ भी सारथ विन जिमि, चलत नहीं ऋजु पंथा ॥ प्रानी० ॥ २ ॥ भागचंद सरधानी नर भये, शिवलछमीके कंथा ॥ प्रानी० ॥ ३ ॥

७३.

राग दीपचन्दी।

तेरे ज्ञानावरनदा परदा, तातैं सूझत नहिं भेद स्वपरदा ॥ टेक ॥ ज्ञान विना भवदुख भोगै तू, पंछी जिमि विन परदा ॥ तेरे० ॥ १ ॥ देहादिकमें आपौ मानत, विभ्रममदवश परदा ॥ तेरे० ॥ २ ॥ भागचन्द भव विनसै वासी, होय त्रिलोक उपरदा ॥ तेरे० ॥ ३ ॥

७४.

राग दीपचन्दी खम्माचकी।

जैनमन्दिर हमको लागै प्यारा ॥ टेक ॥ कैंधौं व्याह मुकति मंगल ग्रह, तोरनादि जुत लसत अपारा ॥ जैन० ॥ ॥ १ ॥ धर्मकेतु सुखहेत देत गुन, अक्षय पुन्य रतनभंडारा ॥ जैन० ॥ २ ॥ कहुं पूजन कहुं भजन होत हैं, कहुं बरसत पुन श्रुतरसधारा ॥ जैन० ॥ ३ ॥ ध्यानारूढ़ विराजत हैं जहां, वीतराग प्रतिविम्ब उदारा ॥ जैन० ॥ ४ ॥ भागचन्द तहां चलिये भाई, तजिकै गृहकारज अघ भारा ॥ जैन० ॥ ५ ॥

७५.

राग दीपचन्दी।

जिनमन्दिर चल भाई, शिव-तिय-व्याह सुमंगलग्रह-वत ॥ टेक ॥ जन धर्मिष्ट समाज सकल तहाँ, तिष्टत मोद चढ़ाई । अमल धर्मआभूषनमंडित, एकसों एक सवाई ॥ जिनमंदिर० ॥ १ ॥ धर्म ध्यान निर्धूम हुताशन, कुंड प्रचंड बनाई । होमत कर्महविष्य सुपंडित, श्रुतधुनि मंत्र पढ़ाई ॥ जिनमंदिर० ॥ २ ॥ मनिमय तोरनादि जुत शोभत, केतुमाल लहकाई । जिनगुन पढ़न मधुर सुर छावत, बुधजन गीत सुहाई ॥ जिनमंदिर० ॥ ३ ॥ वीन मृदंग रंगजुत बाजत, शोभा वरनि न जाई । भागचंद वर लख हरपत मन, दूलह श्रीजिनराई ॥ जिन-मंदिर० ॥ ४ ॥

७६

भववनमें, नहीं भूलिये भाई । कर निज थलकी याद ॥ टेक ॥ नर परजाय पाय अति सुंदर, त्यागहु सकल प्रमाद । श्रीजिनधर्म सेय शिव पावत, आतम जासु प्रसाद ॥ भववनमें० ॥ १ ॥ अबके चूकत ठीक न पड़सी, पासी अधिक विषाद । सहसी नरक वेदना पुनि तहां, सुणसी कौन फिराद ॥ भववनमें० ॥ २ ॥ भागचन्द श्रीगुरु शिक्षा बिन, भटका काल अनाद । तू कर्ता तूही फल भोगत, कौन करै बकवाद ॥ भववनमें० ॥ ३ ॥

७७

जे सहज होरीके खिलारी, तिन जीवनकी वलिहारी ॥ टेक ॥ शांतभाव कुंकुम रस चन्दन, भर समता पिचकारी। उड़त गुलाल निर्जरा संवर, अंवर पहरैं भारी ॥ जे सहज० ॥ १ ॥ सम्यकदर्शनादि सँग लेकै, परम सखा सुखकारी। भींज रहे निज ध्यान रंगमें, सुमति सखी प्रियनारी ॥ जे सहज० ॥ २ ॥ कर स्नान ज्ञान जलमें पुनि, विमल भये शिवचारी। भागचन्द तिन प्रति नित वंदन, भावसमेत हमारी ॥ जे सहज ॥ ३ ॥

७८.

राग दीपचन्दी सोरठकी।

लखिकै स्वामी रूपको, मेरा मन भया चंगा जी ॥ टेक ॥ विभ्रम नष्ट गरुड़ लखि जैसे, भगत भुजंगा जी ॥ लखिकै० ॥ १ ॥ शीतल भाव भये जब न्हायो, भक्ति सुगंगा जी ॥ लखिकै० ॥ २ ॥ भागचन्द अब मेरे लागो, निजरसरंगा जी ॥ लखिकै० ॥ ३ ॥

७९.

राग दीपचन्दी ईमन।

स्वामीरूप अनूप विशाल, मन मेरे वसा ॥ टेक ॥ हरिगन चमरवृन्द ढोरत तहाँ, उज्जल जेम मराल ॥ स्वामीरूप० ॥ १ ॥ छत्रत्रय ऊपर राजत पुनि, सहित सुमुक्तामाल ॥ स्वामीरूप० ॥ २ ॥ भागचन्द ऐसे प्रभुजीको, नावत नित्य त्रिकाल ॥ स्वामीरूप० ॥ ३ ॥

८०

राग दीपचन्दी।

करौं रे भाई, तत्त्वारथ सरधान। नरभव सुकुल सुछेत्र पायके॥ टेक॥ देखन जाननहार आप लखि, देहादिक परमान॥ करौं रे भाई०॥ १॥ मोह रागरुष अहित जान तजि, बंधहु विधि दुखदान॥ करौं रे भाई०॥ २॥ निज स्वरूपमें मगन होय कर, लगनविषय दो भान॥ करौं रे भाई०॥ ३॥ भागचंद साधक ह्वै साधो, साध्य स्वपद अमलान॥ करौं रे भाई०॥ ४॥

८१.

आनन्दाश्रु वहैं लोचनतैं, तातैं आनन न्हाया। गद्गद स्पष्ट वचनजुत निर्मल, मिष्टगान सुरगाया॥ टेक॥ भव वनमें बहु भ्रमन कियो तहाँ, दुख दावानल ताया। अब तुम भक्तिसुधारस वापी,-में अवगाह कराया॥ आनन्दा०॥ १॥ तुम वपुदर्पनमें मैंने अब, आत्मस्वरूप लखाया। सर्व कषाय नष्ट भये अब ही, विभ्रम दुष्ट भगाया॥ आनन्दा०॥ २॥ कल्पवृक्ष मैंने निज गृहके, आंगनमांझ उगाया। स्वर्ग विमोक्ष विलास वास पुनि, मम करतलमें आया॥ आनन्दा०॥ ३॥ कलिमल पंक सकल अब मैंने, चितसे दूर बहाया। भागचन्द तुम चरनाम्बुजको, भक्तिसहित सिर नाया॥ आनन्दा०॥ ४॥

८२.

राग दीपचन्दी परज ।

महाराज श्रीजिनवर जी, आज मैंने प्रभुदरशन पाये ॥ टेक ॥ तुमरे ज्ञान द्रव्य गुन पर्जय, निज चित गुन दरशाये । निज लच्छनतैं सकल विलच्छन, ततछिन पर द्दग आये ॥ महाराज० ॥ १ ॥ अप्रशस्त संक्लेशभाव अघ,-कारन ध्वस्त कराये । राग प्रशस्त उदयतैं निर्मल, पुन्य समस्त कमाये ॥ महाराज० ॥ २ ॥ विषय कषाय अताप नस्यो सब, साम्य सरोवर न्हाये । रुचि भई तुम समान होवेकी, भागचन्द गुन गाये ॥ महाराज० ॥ ३ ॥

८३.

राग दीपचन्दी जोड़ी ।

जिन स्वपरहिताहित चीना, जीव तेही हैं सांचे जैनी ॥ टेक ॥ जिन बुधछैनी पैनीतैं जड़, रूप निराला कीना, परतैं विरच आपसे राचे, सकल विभाव विहीना ॥ जिन० ॥ ॥ १ ॥ पुन्य पाप विधि बंध उदयमें, प्रमुदित होत न दीना । सम्यकदर्शन ज्ञान चरन निज, भाव सुधारस भीना ॥ जिन० ॥ २ ॥ विषयचाह तजि निज वीरज सजि, करत पूर्वविधि छीना । भागचन्द साधक ह्वै साधत, साध्य स्वपद स्वाधीना ॥ जिन० ॥ ३ ॥

८४.

राग दीपचन्दी ।

यह मोह उदय दुख पावै, जगजीव अज्ञानी ॥ टेक ॥

निज चेतनस्वरूप नहिं जानै, परपदार्थ अपनावै। पर परिनमन नहीं निज आश्रित, यह तहँ अति अकुलावै ॥ यह० ॥ १ ॥ इष्ट जानि रागादिक सेवैं, ते विधिबंध वढ़ावैं। निजहितहेत भाव चित सम्यक्-दर्शनादि नहिं ध्यावैं ॥ यह० ॥ २ ॥ इन्द्रियतृप्ति करनके काजैं, विषय अनेक मिलावैं। ते न मिलैं तव खेद खिन्न व्है, समसुख हृदय न ल्यावैं ॥ यह० ॥ ३ ॥ सकल कर्मछय लच्छन लच्छित, मोच्छदशा नहिं चावैं। भागचन्द ऐसे भ्रमसेती, काल अनंत गमावै ॥ यह मोह० ॥ ४ ॥

८५.

प्रेम अव त्यागहु पुद्गलका। अहितमूल यह जान सुधीजन ॥ टेक ॥ कृमि-कुल-कलित स्रवत नव द्वारन, यह पुतला मलका। काकादिक भखते जु न होता, चाम-तना खलका ॥ प्रेम० ॥ १ ॥ काल-व्याल-मुख थित इसका नहिं, हैं विश्वास पलका। क्षणिकमात्रमें विघट जात है, जिमि वुद्बुद जलका ॥ प्रेम० ॥ २ ॥ भागचन्द क्या सार जानके, तू या सँग ललका। तातैं चित अनुभव कर जो तू, इच्छुक शिवफलका ॥ प्रेम० ॥ ३ ॥

८६.

सहज अवाध समाध धाम तहाँ, चेतन सुमति खेलैं होरी ॥ टेक ॥ निजगुनचंदनमिश्रित सुरभित, निर्मल कुंकुम रस घोरी। समता पिचकारी अति प्यारी, भर जु चलावत चहुँओरी ॥ सहज० ॥ १ ॥ शुभ संवर सुअवीर

अडंबर, लावत भरभर कर जोरी । उड़त गुलाल निर्जरा निर्भर, दुखदायक भवथिति टोरी ॥ सहज० ॥ २ ॥ परमानंद मृदंगादिक धुनि, विमल विरागभावधोरी । भागचंद दृग-ज्ञान-चरनमय, परिनत अनुभव रँग बोरी ॥ सहज० ॥ ३ ॥

८७.

सत्ता रंगभूमिमें, नटत ब्रह्म नटराय ॥ टेक ॥ रत्नत्रय आभूषणमंडित, शोभा अगम अथाय । सहज सखा निःशंकादिक गुन, अतुल समाज बढ़ाय ॥ सत्ता रंग० ॥ ॥ १ ॥ समता वीन मधुररस बोलै, ध्यान मृदंग बजाय। नदत निर्जरा नाद अनूपम, नूपुर संवर ल्याय ॥ सत्ता रंग० ॥ २ ॥ लय निज-रूप-मगनता ल्यावत, नृत्य सुज्ञान कराय । समरस गीतालापन पुनि जो, दुर्लभ जगमहँ आय ॥ सत्ता रंग० ॥ ३ ॥ भागचन्द आपहि रीझत तहाँ, परम समाधि लगाय । तहाँ कृतकृत्य सु होत मोक्षनिधि, अतुल इनामहिं पाय ॥ सत्ता० ॥ ४ ॥

इति श्रीभागचन्द्रपदावली समाप्ता ।

श्रीवीतरागाय नमः।

पदसंग्रह–तृतीयभाग।

अर्थात्

आगरानिवासी कविवर भूधरदासजीकृत पदविनतियोंका संग्रह।

जिसे

श्रीजैनग्रन्थरत्नाकरकार्यालयके मालिकने

बम्बईके

निर्णयसागरप्रेसमें बाळकृष्ण रामचंद्र घाणेकरके

प्रबंधसे छपाया।

श्रीवीरनिर्वाण सं० २४३५। ईस्वी सन् १९०९।

प्रथमावृत्ति] [न्योछावर ५ आने।

प्रस्तावना ।

लीजिये, पाठक ! आज पदसंग्रहका यह तीसरा भाग भी उपस्थित है । इसमें कविवर भूधरदासजीके सब मिलाकर ८० पदों तथा विनतियोंका संग्रह है । यह संग्रह हमको अपने एक मित्रके द्वारा प्राप्त हुआ है । उन्होंने इसे भूधरविलासपरसे उतारकर भेजा है । उनके कथनके अनुसार भूधरदासजीके इनके सिवाय और पद विनतियां नहीं है, परन्तु हमारी समझमें यह कथन ठीक नहीं है । हमको स्वयं तीन चार पद और दो तीन विनतियां उक्त संग्रहके सिवाय मिल गई थीं, जिन्हें हमने इसमें शामिल कर दी हैं । हमारी समझमें भूधरदासजीके बहुतसे पद ऐसे होंगे, जो इस संग्रहमें नहीं आये होंगे, और वे यदि हमारे पाठक सहायता करें, तो एकत्र हो सकते हैं । जो सज्जन ऐसे पदोंको हमारे पास भेजनेकी कृपा करेंगे, उनका हम बहुत बड़ा आभार मानेंगे ।

दूसरी शुद्ध प्रतिके अभावसे हमको इस पुस्तकके संशोधनमें बहुत परिश्रम करना पड़ा है, तौभी जैसा चाहिये वैसा संतोषके योग्य संशोधन नहीं हुआ है । बहुतसे स्थान भ्रमयुक्त रह गये हैं । पाठकोंको यदि किसी पदका शुद्ध पाठ आता हो, तो सूचित कर देवें, जिससे कि दूसरी बार छपाने समय उसका संशोधन हो जावे ।

कविवर भूधरदासजी विक्रमकी अठारहवीं सदीमें हो गये हैं । उन्होंने अपना पार्श्वपुराण नामक प्रसिद्ध ग्रन्थ संवत् १७८९ में पूर्ण किया था । पार्श्वपुराण, भूधरजैनशतक, और भूधरविलास

ये तीन ही ग्रन्थ अभीतक आपके बनाये हुए प्रसिद्ध हैं। इन ग्रन्थोंके पढनेसे आपकी सरल सरस और हृदयग्राही कविताका सहज ही अनुभव हो सकता है। पहले दो ग्रन्थ हमारे यहां छप चुके हैं और तीसरे भूधरविलासमेंका एक अंश यह प्रकाशित किया जाता है।

पदसंग्रह का चौथा भाग जिसमें कविवर द्यानतरायजीके पदोंका संग्रह है छप रहा है। पांचवें छट्ठे भाग भी तयार करनेका प्रबन्ध हो रहा है। अलमतिविस्तरेण—८–६–०९ ई०।

सरस्वतीसेवक—

नाथूराम प्रेमी।

श्रीजिनाय नमः ।

पदसंग्रह–तृतीयभाग ।

अर्थात्

कविवर भूधरदासजीकृत भजनोंका संग्रह ।

१. राग सोरठ ।

लगी लौं नाभिनंदनसौं । जपत जेम चकोर चकई, चन्द भरताकौं ॥ लगी लौं० ॥ १ ॥ जाउ तन धन जाउ जोवन, प्रान जाउ न क्यौं । एक प्रभुकी भक्ति मेरे, रहो ज्योंकी त्यौं ॥ २ ॥ लगी लौं० ॥ और देव अनेक सेये, कछु न पायो हौं । ज्ञान खोयो गांठिको, धन करत कुंवनिज ज्यौं ॥३॥ लगी लौं० ॥ पुत्र मित्र कलत्र ये सब सगे अपनी गौं । नरककूपउद्धरन श्रीजिन, समझ भूधर यौं ॥ ४ ॥ लगी लौं० ॥

१ बुरा व्यापार. २ गरज.

२. राग गौरी।

अजितजिनेसुर अघहरणं । अघहरणं अशरणशरणं ॥ टेक ॥ निरखत नैन तनक नहिं त्रपते, आनँदजनक कनकवरणं ॥ अजित० ॥१॥ करुना भींजे वायक[1] जिनके, गणनायक उर आभरणं । मोह महारिपु घायक[2], सायक[3], सुखदायक दुखछयकरणं ॥ अजित० ॥ २ ॥ परमातम प्रभु पतितउधारन, वारणलच्छन[4] पगधरणं । मनमथ[5]मारण विपतिविदारण, शिवकारण तारण तरणं ॥ अजित० ॥३॥ भवआतापनिकन्दन चन्दन, जगवंदन वांछाभरणं । जय जिनराज जगत वंदत जस, जन भूधर वंदत चरणं ॥ अजित० ॥ ४ ॥

३. राग काफी।

सीमंधरस्वामी, मैं चरननका चेरा ॥ टेक ॥ इस संसार असारमें कोई, और न रच्छक[6] मेरा ॥ सीमंधर० ॥१॥ लख चौरासी जोनिमें मैं, फिरि

---

१ वचन. २ नाश करनेवाला. ३. वाण. ४ हाथीका चिन्ह. ५ काम. ६ रक्षक.

फिरि कीनौं फेरा। तुम महिमा जानी नहीं प्रभु, देख्या दुःख घनेरा ॥ सीमंधर० ॥२॥ भाग उदयतैं पाइया अब, कीजे नाथ निवेरा। वेगि दया करि दीजिये मुझे, अविचलथान वसेरा ॥ सीमंधर० ॥ ३ ॥ नाम लिये अघ ना रहै ज्यों, ऊगें भान अँधेरा। भूधर चिन्ता क्या रही ऐसा, समरथ साहिब तेरा ॥ सीमंधर० ॥ ४ ॥

४. राग सोरठ।

वा पुरके वारणैं जाऊं ॥ टेक ॥ जम्बूद्वीप विदेहमें, पूरब दिश सोहै हो। पुंडरीकिनी नाम है, नर सुर मन मोहै हो ॥ वा पुर० ॥ १ ॥ सीमंधर शिवके धनी, जहँ आप विराजै हो। बारह गण बिच पीठपै, शोभानिधि छाजै हो ॥ वा पुर० ॥ २ ॥ तीन छत्र मांथैं दिपैं, वर चामर वीजै हो। कोटिक रतिपति रूपपै, न्यौछावर कीजै हो ॥ वापुर० ॥३॥ निरखत विरख अशो-

१ अपार. २ मोक्ष. ३ पाप. ४ दरवाजे. ५ मस्तकपर. ६ दुरता है. ७ कामदेव. ८ वृक्ष.

कको, शोकावलि भाजै हो। वानी वरसै अमृत सी, जलधर[1] ज्यों गाजै हो ॥ वा पुर० ॥ ४ ॥ वरसैं सुमन[2] सुहावनैं, सुरदुंदभि गाजै हो। प्रभु तन तेजसमूहसौं, ससि[3] सूरज लाजै हो ॥ वा पुर० ॥ ५ ॥ समोसरन विधि वरनतैं, बुधि वरन न पावै हो। सब लोकोत्तर लच्छमी, देखें वनि आवै हो ॥ वा पुर० ॥ ६ ॥ सुरनर मिलि आवैं सदा, सेवा अनुरागी हो। प्रकट निहारैं नाथकों, धनि वे बड़भागी हो ॥ वा पुर० ॥७॥ भूधर विधिसौं भावसौं, दीनी त्रय फेरी हो। जैवन्ती वरतो सदा, नगरी जिनकेरी हो ॥ वा पुर० ॥ ८ ॥

५. राग सोरठ।

अज्ञानी पाप धतूरा न बोय ॥ टेक ॥ फल चाखनकी बार भरै दृग, मर है मूरख रोय ॥ अज्ञानी० ॥ १ ॥ किंचित् विषयनिके सुख कारण, दुर्लभ देह न खोय। ऐसा अवसर फिर न मिलैगा, इस नींदड़ी न सोय ॥ अज्ञानी० ॥

१ समुद्र. २ पुष्प. ३ चन्द्र.

॥ २ ॥ इस विरियांमैं[1] धर्म-कल्प-तरु, सींचत स्यानै[2] लोय[3] । तू विष बोवन लागत तो सम, और अभागा कोय ॥ अज्ञानी० ॥ ३ ॥ जे जगमें दुखदायक वेरस, इसहीके फल सोय । यों मन भूधर जानिकै भाई, फिर क्यों भोंदू होय ॥ अज्ञानी० ॥ ४ ॥

६. राग सोरठ।

मेरे मन सूवा, जिनपद पींजरे वसि, यार लाच न वार रे ॥ टेक ॥ संसारसेंवलवृच्छ सेवत, गयो काल अपार रे । विषय फल तिस तोड़ि चाखे, कहा देख्यौ सार रे ॥ मेरे मन० ॥ १ ॥ तू क्यों निचिन्तो[4] सदा तोकौं, तकत काल मँजार[5] रे । दावै अचानक आन तब तुझे, कौन लेय उवार रे ॥ मेरे मन० ॥२॥ तू फँस्यो कर्म कुफन्द भाई, छुटै कौन प्रकार रे । तैं मोह-पंछी-वधक-विद्या, लखी नाहिं गँवार रे ॥ मेरे मन० ॥ ॥ ३ ॥ है अजौं एक उपाय भूधर, छुटै जो

---

१ वेला-समय. २ विवेकी. ३ लोग. ४ निश्चिन्त. ५ बिल्ली.

नर धार रे । रटि नाम राजुलरमनको, पशुबंध छोड़नहार रे ॥ मेरे मन० ॥ ४ ॥

७. राग सोरठ ।

भलो चेत्यो वीर नर तू, भलो चेत्यो वीर ॥ टेक ॥ समुझि प्रभुके शरण आयो, मिल्यो ज्ञान वजीर ॥ भलो० ॥ १ ॥ जगतमें यह जनम हीरा, फिर कहां थो धीर । भली वार विचार छाँड़्यो, कुमति कामिनि सीर[1] ॥ भलो० ॥ २ ॥ धन्य धन्य दयाल श्रीगुरु सुमरि गुणगंभीर । नरक परतैं राखि लीनों, बहुत कीनी भीर[2] ॥ भलो० ॥ ३ ॥ भक्ति नौका लही भागनि, कितक[3] भवदधिनीर । ढील अव क्यों करत भूधर, पहुँच पैली तीर ॥ भलो० ॥४॥

८. राग सोरठ ।

सुन ज्ञानी प्राणी, श्रीगुरु सीख सयानी ॥ टेक ॥ नरभव पाय विषय मति सेवो, ये दुरगति अगवानी ॥ सुन० ॥ १ ॥ यह भव कुल यह तेरी महिमा, फिर समझी जिनवानी ।

१ साँझा २ सहाय. ३ कितना.

इस अवसरमें यह चपलाई, कौन समझ उर आनी ॥ सुन० ॥ २ ॥ चंदन काठ-कनकके भाजन, भरि गंगाका पानी। तिल खलि राँधत मंदमती जो, तुझ क्या रीस बिरानी ॥ सुन० ॥ ३ ॥ भूधर जो कथनी सो करनी, यह बुधि है सुखदानी। ज्यों मशालची आप न देखै, सो मति करै कहानी ॥ सुनि० ॥ ४ ॥

९. राग सोरठ।

सुनि ठगनी माया, तैं सब जग ठग खाया ॥ टेक ॥ टुक विश्वास किया जिन तेरा, सो मूरख पिछताया ॥ सुनि० ॥ १ ॥ आपा तनक दिखाय बीज[1] ज्यों, मूढमती ललचाया। करि मद अंध धर्म हर लीनौं, अंत नरक पहुँचाया ॥ सुनि० ॥ २ ॥ केते कंथ किये तैं कुलटा, तो भी मन न अघाया। किसहीसौं नहिं प्रीति निबाही, वह तजि और लुभाया ॥ सुनि० ॥ ३ ॥ भूधर छलत फिरै यह सबकों, भौंदू करि जग पाया। जो इस ठगनीकों ठग बैठे, मैं तिसको सिर नाया ॥ सुनि० ॥ ४ ॥

---

१ बिजलीके समान.

१०.

वे कोई अजब तमासा, देख्या बीच जहान वे, जोर तमासा सुपनेकासा ॥ टेक ॥ एकोंके घर मंगल गावैं, पूगी[1] मनकी आसा। एक वियोग भरे बहु रोवैं, भरि भरि नैंन निरासा ॥ वे कोई० ॥ १ ॥ तेज तुरंगनिपै चढ़ि चलते, पहिरैं मलमल खासा। रंक भये नागे अति डोलैं, ना कोइ देय दिलासा[2] ॥ वे कोई० ॥ २ ॥ तरकैं[3] राज तखतपर[4] बैठा, था खुशवक्त खुलासा। ठीक दुपहरी मुद्दत आई, जंगल कीना वासा ॥ वे कोई० ॥ ३ ॥ तन धन अथिर निहायत[5] जगमें, पानीमाहिं पतासा। भूधर इनका गरव करैं जे, फिट[6] तिनका जनमासा[7] ॥ वे कोई० ॥ ४ ॥

११. राग ख्याल।

जगमें जीवन थोरा, रे अज्ञानी जागि ॥टेक॥ जनम ताड़ तरुतैं पड़ै, फल संसारी जीव। मौत महीमैं आय हैं, और न ठौर सदीव ॥ जगमें०

---

१ पूरी हुई. २ धीरज. ३ सवेरे. ४ सिंहासन. ५ सर्वथा. ६ धिक्. ७ मनुष्यजन्म.

॥ १ ॥ गिर–सिर दिवेला[1] जोइया, चहुँदिशि वांजै[2] पौन । बलत अचंभा मानिया, बुझत अचंभा कौन ॥ जगमें० ॥ २ ॥ जो छिन जाय सो आयुमैं, निशि दिन ढूकै[3] काल । बांधि सकै तो है भला, पानी पहिली पाल ॥ जगमें० ॥३॥ मनुष-देह दुर्लभ्य है, मति चूकै यह दाव । भूधर रांजुल-कंतकी[4] शरण सितावी आव ॥ जगमें० ॥ ४ ॥

१२. राग ख्याल ।

गरव नांहिं कीजे रे, ऐ नर निपट गँवार ॥ टेक ॥ झूठी काया झूठी माया, छाया ज्यों लखि लीजे रे ॥ गरव० ॥ १ ॥ कै छिन सांझ सुहागरु जोवन, कै दिन जगमें जींजै[5] रे ॥ गरव० ॥ २ ॥ वेगा[6] चेत विलम्ब तजो नर, वंध वढै थितिँ[7] छीजै रे ॥ गरव० ॥ ३ ॥ भूधर पलपल हो है भारी, ज्यों ज्यों कमरी भींजै रे ॥ गरव० ॥ ४ ॥

१३. राग ख्याल ।

थांकी कथनी म्हांनैं प्यारी लगै जी, प्यारी

---

१ दीपक. २ चलै. ३ निकट आवै. ४ श्रीनेमिनाथकी. ५ जीवेंगे. ६ जल्दी. ७ आयु.

लगै म्हांरी भूल भगै जी ॥ टेक ॥ तुमहित हांक विना हो श्रीगुरु, सूतो जियरो कांई[1] जगै जी ॥ थांकी० ॥ १ ॥ मोहनिधूलि मेलि म्हारे[2] मांथै[3], तीन रतन म्हांरा[4] मोह ठगै जी । तुम पद ढोकंत[5] सीस झरी रज, अब ठगको कर नाहिं वगै जी ॥ थांकी० ॥ २ ॥ टूट्यो चिर मिथ्यात महाज्वर, भागां[6] मिल गया वैद मंगै[7] जी । अंतर अरुचि मिटी मम आतम, अब अपने निजदर्व पगै जी ॥ थांकी० ॥ ३ ॥ भव वन भ्रमत बढ़ी तिसना तिस, क्योंहि बुझै नहिं हियरा[8] दंगै[9] जी । भूधर गुरुउपदेशामृतरस, शान्तमई आनँद उमगै जी ॥ थांकी० ॥ ४ ॥

१४. राग ख्याल ।

मा विलंब न लांव[10] पठाव[11] तहाँ[12] री, जहँ जगपति पिय प्यारो ॥ टेक ॥ और न मोहि सुहाय कछू अब, दीसै जगत अँधारो री ॥ मा विलंब०

---

१ कैसे. २ मेरे. ३ सिरपर. ४ मेरा. ५ प्रणाम करनेसे. ६ भाग्यसे. ७ मार्गमें. ८ हृदय. ९ जलता है. १० कर. ११ भेज दे. १२ उसी जगह.

॥ १ ॥ मैं श्रीनेमिदिवाकरको कब; देखौं वदन उजारो। विन देखैं मुरझाय रह्यो है, उर अरविंद हमारो री! ॥ मा विलंव० ॥२॥ तन छाया ज्यों संग रहौंगी, वे छांड़हिं तो छांरो । विन अपराध दंड मोहि दीनो, कहा चलै मेरो चारो ॥ मा विलम्ब० ॥ ३ ॥ इहि विधि रागउदय राजुल नैं, सह्यो विरह दुख भारो । पीछैं ज्ञान-भान वल विनश्यो, मोह महातम कारो री ॥ मा विलंव० ॥४॥ पियके पैंड़े पैंड़ौ कीनों, देखि अथिर जग सारो । भूधरके प्रभु नेमि पियासौं, पाल्यौ नेह करारो री ॥ मा विलंव० ॥ ५ ॥

१८. राग ख्याल ।

देख्यो री! कहीं नेमिकुमार ॥ टेक ॥ नैंननि प्यारो नाथ हमारो, प्रानजीवन प्राननआ-धार ॥ देख्यो० ॥१॥ पीव वियोग विथा बहु पीरी, पीरी भई हलदी उनहार । होउं हरी तबही जब भेटौं, श्यामवरन सुंदर भरतार ॥ देख्यो० ॥२॥

१ सूरज. २ कमल. ३ सूर्य. ४ पीड़ा की. ५ पीली. ६ समान.

विरह नदी [1]असराल बहै उर, बूड़त हौं वामैं नि-[2]रधार । भूधर प्रभु पिय खेवटिया विन, समरथ कौन उतारनहार ॥ देख्यो० ॥ ३ ॥

१६. राग पंचम ।

जिनराज ना विसारो, मति जन्म [3]वादि हारो ॥टेक॥ नर भौ [4]आसान नाहीं, देखो सोच समझ वारो ॥ जिनराज० ॥ १ ॥ सुत मात तात त-[5]रुनी, इनसौं ममत निवारो । सबही सगे गरजके दुखसीर नहिं निहारो ॥ जिनराज० ॥२॥ जे खायँ लाभ सब मिलि, दुर्गतमैं तुम सिधारो । नटका कुटंब जैसा, यह खेल यों विचारो ॥ जिनराज० ॥३॥ [6]नाहक पराये काजैं, आपा नरकमैं पारो । भूधर न भूल जगमैं, जाहिर दगा है यारो ॥ जि-नराज० ॥ ४ ॥

१७. राग नट ।

जिनराज चरन मन मति बिसरै ॥ टेक ॥ को जानैं किहिं [7]बार कालकी, [8]धार अचानक आनि

---

१ अथाह. २ निराधार. ३ वृथा खोओ. ४ सहज. ५ स्त्री. ६ वृथा. ७ समय. ८ धाड़.

परै ॥ जिनराज० ॥१॥ देखत दुख भजि जाहिं दशौं दिश, पूजत पातकपुंज गिरै । इस संसार क्षारसागरसौं, और न कोई पार करै ॥ जिनराज० ॥२॥ इक चित ध्यावत वांछित पावत, आवत मंगल विघन टरै । मोहनि धूलि परी मांथें चिर, सिर नावत ततकाल झरै ॥ जिनराज० ॥३॥ तवलौं भजन सँवार सयानै, जवलौं कफ नहिं कंठ अरै । अगनि प्रवेश भयो घर भूधर, खोदत कूप न काज सरै ॥ जिनराज० ॥४॥

१८. राग सारंग ।

भवि देखि छवी भगवानकी ॥ टेक ॥ सुंदर सहज सोम आनँदमय, दाता परम कल्यानकी ॥ भवि० ॥ १ ॥ नासादृष्टि मुदित[1] मुखवारिज[2], सीमा सब उपमानकी । अंग अडोल अचल आसन दिढ़, वही दशा निज ध्यानकी ॥२॥ इस जोगासन जोगरीतिसौं, सिद्ध भई शिवथानकी । ऐसें प्रगट दिखावै मारग, मुद्रा धात पखानकी ॥

---

१ प्रसन्न. २ कमल.

भवि० ॥ ३ ॥ जिस देखें देखन अभिलाषा, रहत न रंचक आनकी[1] । तृपत होत भूधर जो अव ये, अंजुलि अम्रतपानकी ॥ भवि० ॥ ४ ॥

१९. राग मलार ।

अव मेरैं समकित सावन आयो ॥ टेक॥ वीति कुरीति मिथ्यामति ग्रीषम, पावस[2] सहज सुहायो अव मेरैं० ॥१॥ अनुभव दामिनि[3] दमकन लागी, सुरति घटा घन[4] छायो । बोलै विमल विवेक पपीहा, सुमति सुहागिन भायो ॥ अब मेरैं० ॥२॥ गुरुधुनि गरज सुनत सुख उपजै, मोर सुमन विहसायो । साधक भाव अँकूर उठे बहु, जित तित हरष सवायो ॥ अब मेरैं० ॥ ३ ॥ भूल धूल कहिं मूल न सूझत, समरस जल झर लायो । भूधर को निकसै अब बाहिर, निज निरँचू[5] घर पायो ॥ अब मेरैं० ॥ ४ ॥

२०. राग सोरठ ।

भगवन्तभजन क्यों भूला रे ॥ टेक ॥ यह

---

१ अन्यकी. २ वर्षाऋतु. ३ विजुली. ४ मेघ. ५ जिसमें पानी नहीं चूता है.

संसार रैनका सुपना, तन धन वारि[1]-बबूला[2] रे ॥ भगवन्त० ॥१॥ इस जीवनका कौन भरोसा, पावकमें तृणपूला[3] रे ॥ काल कुदार लियें सिर ठाड़ा; क्या समझै मन फूला रे! ॥ भगवन्त० ॥ २ ॥ स्वारथ साधै पाँच पाँव तू, परमारथकों लूला[4] रे! । कहु कैसें सुख पैहै प्राणी, काम करै दुखमूला रे ॥ भगवन्त० ॥ ३ ॥ मोह पिशाच छल्यो मति मारै, निज कर कंध वसूला रे । भज श्रीराजमतीवर[5] भूधर, दो दुरमति सिर धूला रे ॥ भगवन्त० ॥ ४ ॥

२१. राग विहागरो ।

नेमि विना न रहै मेरो जियरा ॥ टेक ॥ हेरै[6] री हेली[7] तपत उर कैसो, लावत क्यों निज हाथ न नियरा[8] ॥ नेमि विना० ॥ १ ॥ करि करि दूर कपूर कमल दल, लगत करूर[9] कलाधर[10] सियरा[11] ॥

१ जलका. २ बुदबुदा. ३. घासका पूला. ४ लँगड़ा. ५ नेमिनाथ. ६ देख री. ७ सहेली सखी. ८ निकट. ९ क्रूर. १० चंद्र. ११ शीतल.

नेमि विना० ॥२॥ भूधर के प्रभु नेमि पिया विन, शीतल होय न राजुल हियरा ॥ नेमि विना०॥३॥

२२. राग ख्याल।

मन मूरख पंथी, उस मारग मति जाय रे ॥ टेक॥ कामिनि तन कांतार[1] जहां है, कुच परवत दुखदाय रे ॥ मन मूरख० ॥ १ ॥ काम किरात[2] बसै तिह थानक[3], सरवस लेत छिनाय रे । खाय खता कीचकसे बैठे, अरु रावनसे राय रे ॥ मन मूरख० ॥ २ ॥ और अनेक लुटे इस पैंड़े[5], वरनैं कौन बढ़ाय रे । वरजत हों वरज्यौं रह भाई, जानि दगा[4] मति खाय रे ॥ मन मूरख० ॥ ३ ॥ सुगुरु दयाल दया करि भूधर, सीख कहत समझाय रे । आगैं जो भावे करि सोई, दीनी बात जताय रे ॥ मन मूरख० ॥ ४ ॥

२३. राग विलावल।

सब विधि करन उतावला[6], सुमरनकौं सीरा[7] ॥ टेक॥ सुख चाहै संसारमैं, यों होय न नीरा ॥

---

१ वन. २ भील. ३ स्थानमें. ४ धोखा. ५ रास्ते. ६ जल्दबाज. ७ ठंडा, सुस्त.

सब विधि० ॥ १ ॥ जैसे कर्म कमाय है, सो ही फल वीरा! । आम न लागै आकके, नग होय न हीरा ॥ सब विधि० ॥ २ ॥ जैसा विषयनिकों चहै, न रहै छिन धीरा । त्यों भूधर प्रभुकों जपै, पहुँचै भवतीरा ॥ सब विधि० ॥ ३ ॥

२४. राग विलावल ।

रटि रसना मेरी ऋषभ जिनन्द, सुर नर जच्छ चकोरन चन्द ॥टेक॥ नामी नाभि नृपतिके बाल, मरुदेवीके कँवर कृपाल ॥ रटि० ॥ १ ॥ पूज्य प्रजापति पुरुष पुरान, केवल किरन धरैं जगभान ॥ रटि० ॥ २ ॥ नरकनिवारन विरद विख्यात, तारन तरन जगतके तात ॥ रटि० ॥ ३ ॥ भूधर भजन किये निरवाह, श्रीपद-पदम भँवर हो जाह ॥ रटि० ॥ ४ ॥

२५. राग गौरी ।

मेरी जीभ आठौं जाम, जपि जपि ऋषभजिनिंदजीका नाम ॥टेक॥ नगर अजुध्या उत्तम ठाम, जनमैं नाभि नृपतिके धाम॥ मेरी० ॥ १ ॥ सहस अठोत्तर अति अभिराम, लसत सुलच्छन

लाजत काम ॥ मेरी० ॥ २ ॥ करि थुति गान थके हरि राम, गनि न सके गणधर गुनग्राम ॥ मेरी० ॥ ३ ॥ भूधर सार भजन परिनाम, अर सब खेल खेलके खाम (?) ॥ मेरी० ॥ ४ ॥

२६. राग धमाल ।

देखे देखे जगतके देव, राग रिससौं[1] भरे ॥ टेक ॥ काहूके सँग कामिनि कोऊ, आयुधवान खरे ॥ देखे० ॥ १ ॥ अपने औगुन आपही हो, प्रकट करैं उघरे । तऊ अबूझ न बूझहिं देखो, जन मृग भोरेप[2] रे ॥ देखे० ॥ २ ॥ आप भिखारी है किनही हो, काके दलिद हरे । चढ़ि पाथरकी नावपै कोई, सुनिये नाहिं तरे ॥ देखे० ॥ ३ ॥ गुन अनन्त जा देवमें औ, ठारह दोष टरे । भूधर ता प्रति भावसौं दोऊ, कर निज सीस धरे ॥ देखे० ॥ ४ ॥

२७.

देखो गरबगहेली री हेली! जादोंपातिकी नारी ॥ टेक ॥ कहां नेमि नायक निज

---

१ द्वेषसे. २ भोलापन.

मुखसों, टहल[1] करै बड़भागी । तहां गुमान कियो मतिहीनी, सुनि उर दौंसी[2] लागी ॥ देखो० ॥१॥ जाकी चरण धूलिको तरसैं, इन्द्रादिक अनुरागी । ता प्रभुको तन-बसन[3] न पीड़ै,[4] हा! हा! परम अभागी ॥ देखो० ॥२॥ कोटि जनम अघभंजन जाके, नामतनी बलि जइये । श्रीहरिवंशतिलक[5] तिस सेवा, भाग्य विना क्यों पइये ॥ देखो० ॥३॥ धनि वह देश धन्य वह धरनी, जगमें तीरथ सोई । भूधरके प्रभु नेमि नवल निज, चरन धरैं जहाँ दोई ॥ देखो० ॥४॥

२८. राग धमाल सारंग ।

अरज करै राजुल नारी, वनवासी पिया तुम क्यों छाँरी ? ॥ टेक ॥ प्रभु तो परम दयाल सबनिपै, सबहीके हितकारी । मोपै कठिन भये क्यों साजन!, कहिये चूक हमारी ॥ अरज० ॥ १ ॥ अब ही भोग-जोग हो बालम, यह बुधि कौन विचारी । आगैं ऋषभदेवजी व्याही, कच्छ-

---

१ चाकरी, वस्त्र निचोड़नेके लिये. २ दावाग्निसी. ३ धोती. ४ निचोड़ै. ५ श्रीनेमिनाथ.

सुकच्छकुमारी । सोई पंथ गहो पिय पाछैं, हूजौ संजमधारी ॥ अरज० ॥ २ ॥ तुम विन एक पलक जो प्रीतम, जाय पहर सौ भारी । कैसैं निशदिन भरौं नेमिजी !, तुम तो ममता डारी । याको ज्वाब देहु निरमोही !, तुम जीते मैं हारी ॥ अरज० ॥ ३ ॥ देखो रैनवियोगिनि चकई, सो विलखै निशि सारी । आश बाँधि अपनो जिय राखै, प्रात मिलैं पिय प्यारी । मैं निराश निरधारिनि कैसैं, जीवों अती दुखारी ॥ अरज० ॥ ४ ॥ इह विधि विरह नदीमें व्याकुल, उग्रसेनकी बारी । धनि धनि समुदविजयके नंदन, बूड़त पार उतारी । करहु दयाल दया ऐसी ही, भूधर शरन तुम्हारी ॥ अरज० ॥५॥

२९. राग धामल सारंग।

हूं तो कहा करूं कित जाउं, सखी अब कासौं पीर कहूं री ! ॥टेक॥ सुमति सती सखियनिके आगैं, पियके दुख परकासै । चिदानन्दवल्लभकी वनिता, विरह वचन मुख भासै ॥ हूं तो० ॥ १ ॥ कंत विना कितने दिन बीते, कौंलौं

धीर धरौं री। पर घर हाँडै निज घर छांडै, कैसी विपति भरौं री॥ हूं तो० ॥२॥ कहत कहावतमें सब यों ही, वे नायक हम नारी। पै सुपनें न कभी मुँह बोले, हमसी कौन दुखारी॥ हूं तो० ॥ ३ ॥ जइयो नाश कुमति कुलटाको, विरमायो पति प्यारो। हमसौं विरचि रच्यो रँग वाके, असमझ (?) नाहिं हमारो॥ हूं तो० ॥४॥ सुंदर सुघर कुलीन नारि मैं, क्यों प्रभु मोहि न लोरें। सत हू देखि दया न धरैं चित, चेरीसों हित जोरें॥ हूं तो० ॥५॥ अपने गुनकी आप बड़ाई, कहत न शोभा लहिये। ऐरी! वीर चतुर चेतनकी, चतुराई लखि कहिये॥ हूं तो० ॥६॥ करिहौं आजि अरज जिनजीसों, प्रीतमको समझावैं। भरता भीख दई गुन मानौं, जो बालम घर आवैं॥ हूं तो० ॥७॥ सुमति वधू यों दीन दुहागनि, दिन दिन झुरत निरासा। भूधर पीउ प्रसन्न भये विन, वसै न तिय घरवासा॥ हूं तो० ॥ ८ ॥

---

१ भटकै. २ प्रेम करैं.

३०. राग सोरठ।

चित! चेतनकी यह विरियाँ रे ॥ टेक ॥ उत्तम जनम सुतन तरुनापौ[१], सुकृत[२] बेल फल फरियाँ रे ॥ चित०॥१॥ लहि सत संगतिसौं सब समझी, करनी खोटी खरियाँ रे । सुहित सँभालि शिथिलता तजिकै, जाहैं बेली झरियाँ रे॥ चित० ॥ २ ॥ दल बल चहल महल रूपेका, अर कंचनकी कलियाँ रे । ऐसी विभव बढ़ी कै बढ़ि है, तेरी गरज क्या सरियाँ रे ॥ चित० ॥ ३ ॥ खोय न वीर विषय खल सांटैं[३], ये कोरनकी[४] घरियाँ रे । तोरि न तनक तगा[५]हित भूधर, मुकताफलकी लरियाँ[६] रे ॥ चित० ॥ ४ ॥

३१. राग पंचम।

आज गिरिराजके शिखर सुंदर सखी, होत है अतुल कौतुक महा मनहरन ॥ टेक ॥ नाभिके नंदकौं जगतके चन्दकौं, ले गये इन्द्र मिलि जन्म-मंगल करन ॥ आज०॥१॥ हाथ हाथन धरे सुरन

१ जवानी. २ पुण्य. ३ बदलेमें. ४ करोड़ोंकी. ५ धागा, डोराके लिये. ६ लड़ीं.

कंचन घरे, छीरसागर भरे नीर निरमल वरन।
सहस अर आठ गिन एक ही वार जिन, सीस
सुरईशके करन लागे ढरन ॥ आज० ॥ २ ॥ न-
चत सुरसुन्दरीं रहस रससौं भरीं, गीत गावैं
अरी देहिं ताली करन। देव दुंदभि वजे वीन
वंसी सजे, एकसी परत आनंद घनकी भरन ॥
आज० ॥ ३ ॥ इन्द्र हर्पित हिये नेत्र अंजुल किये,
तृपति होत न पिये रूपअम्रतझरन। दास
भूधर भनें सुदिन देखें वनें, कहि थकें लोक
लख जीभ न सके वरन ॥ आज० ॥ ४ ॥

३२

ऐसी समझके सिर धूल ॥ ऐसी० ॥ टेक ॥
धरम उपजन हेत हिंसा, आचरें अघमूल ॥
ऐसी० ॥ १ ॥ छके मत-मद-पान पीके, रहे म-
नमें फूल। आम चाखन चहें भोंदू, वोय पेड़
वँबूल ॥ ऐसी० ॥ २ ॥ देव रागी लालची गुरु,
सेय सुखहित भूल। धर्म नैगकी परख नाहीं,
भ्रम हिंडोले झूल ॥ ऐसी० ॥ ३ ॥ लाभकारन

---

१ घड़े—कलश. २ रतकी.

रतन विणजे, परखको नहिं मूल। करत इहि विधि वणिज भूधर, विनस जै है मूल ॥ ऐसी० ॥ ४ ॥

३३.

अब पूरीकर नींदड़ी, सुन जीया रे! चिरकाल तू सोया ॥ सुन० ॥ टेक ॥ माया मैली रातमें, केता काल विगोया[2] ॥ अब० ॥ १ ॥ धर्म न भूल अयान रे! विषयोंवश वाला। सार सुधारस छोड़के, पीवै जहर पियाला ॥ अब० ॥ २ ॥ मानुष भवकी पैठमैं, जग विणजी आया। चतुर कमाई कर चले, मूढ़ौं मूल गुमाया ॥ अब० ॥ ३ ॥ तिसना तज तप जिन किया, तिन बहु हित जोया। भोगमगन शठ जे रहे, तिन सरवस खोया ॥ अब० ॥ ४ ॥ काम विथापीड़ित जिया, भोगहि भले जानैं। खाज खुजावत अंगमें, रोगी सुख मानैं ॥ अब० ॥ ५ ॥ राग उरगनी[3] जोरतैं, जग डसिया भाई! सब जिय गाफ़िल हो रहे, मोह लहर चढ़ाई ॥

१ शहूर. २ खोया. ३ सर्पनी.

अव० ॥ ६ ॥ गुरु उपगारी गारुड़ी[1], दुख देख निवारैं । हित उपदेश सुमंत्रसों, पढ़ि जहर उतारैं ॥ अव० ॥ ७ ॥ गुरु माता गुरु ही पिता, गुरु सज्जन भाई । भूधर या संसारमें, गुरु शरनसहाई ॥ अव० ॥ ८ ॥

३४. राग बंगाला ।

[2]जगमें श्रद्धानी जीव जीवनमुकत हैंगे ॥ टेक ॥ देव गुरु सांचे मानैं, सांचो धर्म हिये आनैं, ग्रंथ ते ही सांचे जानैं, जे जिनउकत[3] हैंगे ॥ जगमें ॥ १ ॥ जीवनकी दया पालैं, झूठ तजि चोरी टालैं; परनारी भालैं[4] नैंन जिनके लुकत[5] हैंगे ॥ जगमें ॥ २ ॥ जीयमें सन्तोष धारैं हियें समता विचारैं, आगैं को न बंध पारैं, पाछेंसों चुकत हैंगे ॥ जगमें ॥ ३ ॥ वाहिज क्रिया अराधैं, अन्तर सरूप साधैं, भूधर ते मुक्त लाधैं, कहूं न रुकत हैंगे ॥ जगमें ॥ ४ ॥

---

१ जहर उतारनेवाले. २ इस पदकी चारों टेकें निकाल डालनेसे एक घनाक्षरी (३२ वर्ण) कवित्त बन जाता है. ३ उक्त, प्रणीत, कहे हुए. ४ देखनेमें. ५ छिपते हैं, लज्जित होतें हैं.

३५. राग बंगाला।

आया रे बुढापो मानी सुधि बुधि विसरानी ॥टेक॥ श्रवनकी शक्ति घटी, चाल चालै अटपटी, देह लटी भूख घटी, लोचन झरत पानी॥ आया रे० ॥१॥ दाँतनकी पंक्ति टूटी, हाड़नकी संधि छूटी, कायाकी नगरि लूटी, जात नहिं पहिचानी॥ आया रे० ॥ २ ॥ बालोंने वरन फेरा, रोगने शरीर घेरा, पुत्रहू न आवै नेरा, औरोंकी कहा कहानी ॥ आया रे० ॥३॥ भूधर समुझि अब, स्वहित करैगो कब, यह गति ह्वै है जब, तब पिछतैहै प्रानी॥ आया रे० ॥ ४ ॥

३६. राग सोरठ।

अन्तर उज्जल करना रे भाई! ॥ टेक ॥ कपट कृपान तजै नहिं तबलौं, करनी काज न सरना रे ॥ अन्तर० ॥ १ ॥ जप तप तीरथ जज्ञ व्रतादिक, आगमअर्थउचरना रे । विषय कषाय कीच नहिं धोयो, यों ही पचि पचि मरना रे ॥

---

१ इसकी भी टेकें निकाल देनेसे घनाक्षरी बन जाता है. २ कमजोर हुई. ३ रंग. ४ निकट.

अन्तर० ॥ २ ॥ बाहिर भेष किया उर शुचिसौं कीयें पार उतरना रे। नाहीं है सब लोक रंजना, ऐसे वेदन वरना रे ॥ अन्तर० ॥ ३ ॥ कामादिक मनसौं मन मैला, भजन किये क्या तिरना रे। भूधर नीलवसनपर कैसैं, केसर-रंग उछरना रे ॥ अन्तर० ॥ ४ ॥

३७. राग सोरठ।

वीरा! थारी बान बुरी परी रे, वरज्यो मानत नाहिं ॥ टेक ॥ विषय विनोद महा बुरे रे, दुख दाता सरवंग। तू हटसौं ऐसें रमै रे, दीवे[1] पड़त पतंग ॥ वीरा० ॥ १ ॥ ये सुख हैं दिन दोयके रे, फिर दुखकी सन्तान। करै[3] कुहाड़ी लेइकै रे, मति मारै पैंग जानि ॥ वीरा० ॥ २ ॥ तनक न संकट सहि सकै रे! छिनमें होय अधीर। नरक विपति बहु दोहली रे, कैसे भरि है वीर ॥ वीरा० ॥ ३ ॥ भव सुपना हो जायगा रे, करनी रहेगी निदान। भूधर फिर पछतायगा रे, अब ही समुझि अजान ॥ वीरा० ॥ ४ ॥

---

१ कालेकपडेपर २ दीपकमें. ३ अपने हाथसे. ४ अपने पैरपर.

३८. राग काफी।

मनहंस! हमारी लै शिक्षा हितकारी ॥टेक॥
श्रीभगवानचरन पिंजरे वसि, तजि विषयनिकी यारी ॥ मन० ॥१॥ कुमति कागलीसौं मति राचो, ना वह जात तिहारी। कीजे प्रीत सुमति हंसीसौं, बुध हंसनकी प्यारी ॥ मन० ॥२॥ काहेको सेवत भव झील[1]र, दुखजलपूरित खारी। निज बल पंख पसारि उड़ो किन, हो शिव स[2]रवरचारी ॥ मन० ॥ ३ ॥ गुरुके वचन विमल मोती चुन, क्यों निज वान विसारी। है है सुखी सीख सुधि राखैं, भूधर भूलैं ख्वारी ॥ मन० ॥ ४ ॥

३९. राग ख्याल कान्हड़ी।

एजी मोहि तारिये शान्तिजिनंद ॥ टेक ॥
तारिये तारिये अधम उधारिये, तुम करुनाके कंद ॥ एजी० ॥ १ ॥ हथनापुर जनमैं जग जानैं, विश्वसेननृपनन्द ॥ एजी० ॥ २ ॥ धनि वह माता ऐरादेवी, जिन जाये जगचंद ॥

---

१ झील. २ सरोवर—तालावका रहनेवाला.

एजी० ॥ ३ ॥ भूधर विनवै दूर करो प्रभु, सेवकके भवंदद ॥ एजी० ॥ ४ ॥

४०. राग ख्याल।

और सब थोथी बातैं, भज लै श्रीभगवान ॥ टेक ॥ प्रभु बिन पालक कोई न तेरा, स्वारथमीत जहान ॥ और० ॥ १ ॥ परवनिता जननी सम गिननी, परधन जान पखान। इन अमलों परमेसुर राजी, भाषैं वेद पुरान ॥ और० ॥ २ ॥ जिस उर अन्तर बसत निरन्तर, नारी औगुनखान । तहां कहां साहिबका बासा, दो खांडे[1] इक म्यान ॥ और० ॥ ३ ॥ यह मत सतगुरुका उर धरना, करना कहिं न गुमान। भूधर भजन न पलक विसरना, मरना मित्र निदान ॥ और० ॥ ४ ॥

४१. राग प्रभाती।

अजित जिन विनती हमारी मान जी, तुम लागे मेरे प्रान जी ॥ टेक ॥ तुम त्रिभुवनमैं कलप तरोवर, आस भरो भगवान जी ॥ अजित० ॥ १ ॥

---

१ दो तलवार.

बादि[1] अनादि गयो भव भ्रमतैं, भयो वहुत कुलकान जी। भाग सँजोग मिले अब दीजे, मनवांछित वरदान जी ॥ अजित० ॥ २ ॥ ना हम मांगैं हाथी घोड़ा, ना कछु संपति आन जी। भूधरके उर वसो जगतगुरु, जबलौं पद निरवानजी ॥ अजित० ॥ ३ ॥

४२. राग धनासरी।

सो मत सांचो है मन मेरे ॥ टेक ॥ जो अनादि सर्वज्ञप्ररूपित, रागादिक विन जे रे ॥ सो मत० ॥ १ ॥ पुरुष प्रमान प्रमान वचन तिस, कलपित जान अने[2] रे। राग-दोष-दूषित तिन वायक[3], सांचे हैं हित तेरे ॥ सो मत० ॥ २ ॥ देव अदोष धर्म हिंसा विन, लोभ विना गुरु वे रे। आदि अन्त अविरोधी आगम, चार रतन जहँ ये रे ॥ सो मत० ॥ ३ ॥ जगत भर्यो पाखण्ड परख विन, खाइ खता बहुते रे। भूधर करि निज सुबुधि कसौटी, धर्म कनक कसि ले रे ॥ सो मत० ॥ ४ ॥

---

१ वृथा. २ अन्यमत. ३ वचन.

४३.

मेरे चारों शरन सहाई ॥ टेक ॥ जैसें जलधि परत वायसकों बोहिथ एक उपाई ॥ मेरे०॥१॥ प्रथम शरन अरहन्त चरनकी, सुरनर पूजत पाई। दुतिय शरन श्रीसिद्धनकेरी, लोक-तिलक-पुर-राई ॥ मेरे० ॥ २ ॥ तीजे सरन सर्व साधुनिकी, नगन दिगम्बर-काई। चौथें धर्म अहिंसारूपी, सुरगसुकतिसुखदाई ॥ मेरे०॥ ३ ॥ दुरगति परत सुजन परिजनपै, जीव न राख्यो जाई। भूधर सत्य भरोसो इनको, ये ही लेहिं बचाई ॥ मेरे० ॥ ४ ॥

४४. राग सारंग।

जपि माला जिनवर नामकी ॥ टेक ॥ भजन सुधारससों नहिं धोई, सो रसना किस कामकी ॥ जपि० ॥ १ ॥ सुमरन सार और सब मिथ्या, पटतर धूँवा धामकी। विषम कमान समान विषय सुख, काय कोथली चामकी ॥ जपि० ॥२॥ जैसे चित्रनागके मांथै, थिर मूरति चित्रामकी।

१ कौएको. २ जहाज। ३ थैली.

चित आरूढ़ करो प्रभु ऐसें, खोय गुँड़ी परिनामकी ॥ जपि० ॥ ३ ॥ कर्म वैरि अहनिशि[1] छल जोवैं, सुधि न परत पल जामकी । भूधर कैसें बनत विसारैं, रटना पूरन रामकी ॥ जपि० ॥४॥

४५. राग मलार ।

वे मुनिवर कब मिलि हैं उपगारी ॥ टेक ॥ साधु दिगम्बर नगन निरम्बर, संवरभूषणधारी ॥ वे मुनि० ॥ १ ॥ कंचन काच बराबर जिनकै, ज्यौं रिपु त्यौं हितकारी । महल मसान मरन अरु जीवन, सम गैरिमा[2] अरु गैरी[3] ॥ वे मुनि० ॥ २ ॥ सम्यग्ज्ञान प्रधान पवन बल, तप पावक पैरजारी[4] । शोधत जीव सुवर्ण सदा जे, काय-कारिमा टारी ॥ वे मुनि० ॥ ३ ॥ जोरि जुगल कर भूधर विनवै, तिन पद ढोक हमारी । भाग उदय दरसन जब पाऊं, ता दिनकी बलिहारी ॥ वे मुनि० ॥ ४ ॥

४६. राग धमाल सारंग ।

होरी खेलौंगी, घर आये चिदानँद कन्त ॥

---

१ रातदिन. २ महिमा, बड़ाई. ३ गाली. ४ जलाई.

टेक ॥ शिशिर[1] मिथ्यात गयो आई अब, काललकी लब्धि वसन्त ॥ होरी० ॥ १ ॥ पिय सँग खेलनको हम सखियो! तरसीं काल अनन्त । भाग फिरे अब फाग रचानों, आयो विरहको अन्त ॥ होरी० ॥ २ ॥ सरधा गागरमें रुचिरूपी, केसर घोरि तुरन्त । आनँद नीर उमग पिचकारी, छोड़ो नीकी भन्त ॥ होरी० ॥ ३ ॥ आज वियोग कुमति सौतनिके, मेरे हरष महन्त । भूधर धनि यह दिन दुर्लभ अति, सुमति सखी विहसन्त ॥ होरी० ॥ ४ ॥

४७. राग भैरौं ।

*पारस-पद-नख-प्रकाश, अरुन[2] वरन ऐसो ॥टेक॥ मानों तप कुंजरके[3], सीसको सिंदूर पूर, राग दोष काननकौं[4], दावानल जैसो ॥ पारस० ॥१॥ बोधमई प्रातकाल, ताको रवि उदय लाल, मोक्षवधू-कुचप्रलेप, कुंकुमाभ तैसो ॥ पारस०

---

१ ठंडीऋतु. * यह पद सिन्दूरप्रकरके पहले श्लोक (सिन्दूरप्रकरस्तपःकरिशिरः क्रोडे कषायाटवी) की छाया है. २ लाल. ३ हाथीके. ४ वनको.

॥ २ ॥ कुशलवृक्ष दल उलास, इहि विधि वहु गुणनिवास, भूधरकी भरहु आस, दीन दासके सो ॥ पारस० ॥ ३ ॥

४८. राग धनासरी।

शेष सुरेश नरेश रटैं तोहि, पार न कोई पावै जू ॥ टेक ॥ काँपै नपत [2]व्योम विलसतसौं, को तारे गिन लावै जू ॥ शेष० ॥ १ ॥ कौन सुजान मेघ वूंदनकी, संख्या समुझि सुनावै जू ॥ शेष० ॥ २ ॥ भूधर सुजस गीत संपूरन, गैनपति भी नहिं गावै जू ॥ शेष० ॥ ३ ॥

४९. राग रामकली।

आदि पुरुष मेरी आस भरो जी। औगुन मेरे माफ करो जी॥टेक॥ दीनदयाल विरद विसरो जी, कै विनती मोरी श्रवण धरो जी ॥ १ ॥ काल अनादि वस्यो जगमाहीं, तुमसे जगपति जानें नाहीं। पाँय न पूजे अन्तरजामी, यह अपराध क्षमा कर स्वामी ॥ आदि० ॥ २ ॥ भक्ति प्रसाद परम पद है है, वंधी बंध दशा मिट जै है।

---

१ किससे? २ आकाश. ३ विलस्तसे. ४ गणधर.

तव न करौं तेरी फिर पूजा, यह अपराध खमों प्रभु दूजा ॥ आदि० ॥ ३ ॥ भूधर दोष किया वकसावै[1], अरु आगेकौं लारे लावै। देखो सेवककी ढिठवाई[2], गरुवे साहिवसों वनियाई[3] ॥ आदि० ॥ ४ ॥

५०. राग ख्याल काफी कानड़ी।

तुम सुनियो साधो!, मनुवा मेरा ज्ञानी। सत गुरु भैंटा संसा[4] मैटा, यह नीकै करि जानी ॥टेक॥ चेतनरूप अनूप हमारा, और उपाधि विरानी॥ तुम सुनियो० ॥ १ ॥ पुदगल भांडा आतम खांडा, यह हिरदै ठहरानी। छीजौ भीजौ कृत्रिम काया, मैं निरभय निरवानी॥ तुम सुनियो०॥२॥ मैं ही देखौं मैं ही जानौं, मेरी होय निशानी। शवद फरस रस गंध न धारौं, ये बातैं विज्ञानी॥ तुम सुनियो०॥ ३ ॥ जो हम चीन्हां सो थिर कीन्हां, हुए सुदृढ़ सरधानी। भूधर अब कैसें उतरैगा, खड़ग चढ़ा जो पानी ॥ तुम सु० नियो० ॥ ४ ॥

---

१ माफ कराता है. २ ढीटता. ३ वनियांपन. ४ संदेह.

५१. राग काफी।

प्रभु गुन गाय रे, यह औसर फेर न पाय रे॥ टेक॥ मानुष भव जोग दुहेला, दुर्लभ सतसंगति मेला। सब बात भली बन आई, अरहन्त भजौ रे भाई॥ प्रभु०॥ १॥ पहलैं चित-चीर[1] सँभारो, कामादिक मैल उतारो। फिर प्रीति फिटकरी दीजे, तब सुमरन रंग रँगीजे॥ प्रभु०॥२॥ धन जोर भरा जो कूवा, परवार बढ़ैं क्या हूवा। हाथी चढ़ि क्या कर लीया, प्रभु नाम विना धिक जीया॥ प्रभु०॥ ३॥ यह शिक्षा है व्यवहारी, निहचैकी साधनहारी। भूधर पैड़ी पग धरिये, तब चढ़नेको चित करिये॥ प्रभु०॥ ४॥

५२. राग हमीर कल्याण।

सुनि सुजान! पांचों[2] रिपु वश करि, सुहित करन असमर्थ अवश करि॥ टेक॥ जैसें जड़ खखार[3]को कीड़ा, सुहित सम्हाल सकैं नहिं फँस करि॥ सुनि०॥१॥ पांचनको मुखिया मन चंचल, पहले ताहि पकर रस (?) कस करि। समझ देखि

---

१ वस्त्र. २ पांचोंइन्द्री. ३ कफ.

नायकके जीतें, जै है भाजि सहज सब लसकरि ॥ सुनि० ॥ २ ॥ इंद्रियलीन जनम सब खोयो, बाकी चल्यो जात है खस करि । भूधर सीख मान सतगुरुकी, इनसों प्रीति तोरि अब वश करि ॥ सुनि० ॥ ३ ॥

८३. राग गौरी ।

देखो भाई ! आतमदेव विराजै ॥ टेक ॥ इसही हूठ हाथ देवलमैं, केवलरूपी राजै ॥ देखो० ॥ १ ॥ अमल उदास जोतिमय जाकी, मुद्रा मंजुल छाजै । मुनिजनपूज अचल अविनाशी, गुण बरनत बुधि लाजै ॥ देखो० ॥ २ ॥ परसंजोग समल प्रतिभासत, निज गुण मूल न त्याजै । जैसे फटिक पखान हेतसों, श्याम अरुन दुति साजै ॥ देखो० ॥ ३ ॥ 'सोऽहं' पद समतासों ध्यावत, घटहीमैं प्रभु पाजै । भूधर निकट निवास जासुको, गुरु विन भरम न भाजै ॥ देखो० ॥ ४ ॥

---

१ लश्कर—सेना. २ साढ़ेतीन हाथके शरीररूपी मंदिरमें.

५४. राग ख्याल ।

अब नित नेमि नाम भजौ ॥ टेक ॥ सचा साहिब यह निज जानौ, और अदेव तजौ॥अब०॥ ॥ १ ॥ चंचल चित्त चरन थिर राखो, विषयनतैं वरजौ ॥ अब० ॥२॥ आननतैं[1] गुन गाय निरन्तर, पाननतैं[2] पांय जैजौ[3] ॥ अब० ॥३॥ भूधर जो भवसागर तिरना, भक्ति जहाज सजौ ॥ अब०॥

५५. राग श्रीगौरी ।

"माया काली नागिनि जिन डसिया सब संसार हो" यह चाल ।

काया गागरि जोजरी[4], तुम देखो चतुर विचार हो ॥ टेक ॥ जैसें कुल्हिया कांचकी, जाके विनसत नाहीं बार हो ॥ काया० ॥ १ ॥ मांसमयी माटी लई अरु, सानी रुधिर लगाय हो । कीन्हीं करम कुम्हारने, जासों काहूकी न वसाय हो ॥ काया० ॥ २ ॥ और कथा याकी सुनौं, यामैं अध उरध दश ठेह हो । जीव सलिल तहां थंभ रह्यौ भाई, अद्भुत अचरज येह

---

१ मुखसे. २ हाथजोड़कर. ३ नमन करौ. ४ जरजरित, टूटी फूटी.

हो ॥ काया० ॥३॥ यासौं ममत निवारकैं, नित रहिये प्रभु अनुकूल हो। भूधर ऐसे ख्यालका भाई, पलक भरोसा मूल हो॥ काया० ॥ ४ ॥

५६. राग ख्याल बरवा।

"देखनेको आई लाल मैं तो तेरे देखनेकों आई" यह चाल।

हों तो थाकी आज महिमा जानी ॥ टेक ॥ अब लों नहिं उर आनी ॥ हों तो० ॥१॥ काहेंको भव वनमें भ्रमते, क्यों होते दुखदानी ॥ हों तो० ॥ २ ॥ नामप्रताप तिरे अंजनसे, कीचकसे अभिमानी ॥ हों तो० ॥ ३ ॥ ऐसी साख बहुत सुनियत है, जैनपुराण बखानी ॥हों तो० ॥४॥ भूधरको सेवा वर दीजे, मैं जांचक तुम दानी ॥ हों तो० ॥ ५ ॥

५७. राग विहाग।

अरे मन चल रे, श्रीहथनापुरकी जात[1] ॥ टेक ॥ [2]रामा रामा धन धन करते, जावै जनम त्रिफल रे॥ अरे० ॥१॥ करि तीरथ जप तप जिन-पूजा, लालच वैरी दल रे ॥ अरे० ॥ २ ॥ शांति

---

१ यात्राको. २ स्त्री.

कुंथु अर तीनों जिनका, चारु कल्याणकथल रे ॥ अरे० ॥ ३ ॥ जा दरसत परसत सुख उपजत, जाहिं सकल अघ गल रे ॥ अरे० ॥ ४॥ देश दिशान्तरके जन आवैं, गावैं जिन गुन रल रे ॥ अरे० ॥५॥ तीरथ गमन सहामी मेला, एक पंथ द्वै फल रे ॥ अरे० ॥ ६ ॥ कायाके संग काल फिरै है, तन छायाके छल रे ॥ अरे० ॥ ७ ॥ माया मोह जाल बंधनसौं, भूधर वेगि निकल रे ॥ अरे० ॥ ८ ॥

५८. राग विहाग।

जगत जन जूवा हारि चले ॥ टेक ॥ काम कुटिल सँग बाजी माँड़ी, उन करि कपट छले। जगत० ॥ १ ॥ चार कषायमयी जहँ चौपरि, पांसे जोग रले। इत सरवस उत कामिनि कौड़ी, इह विधि झटक चले। जगत० ॥ २ ॥ कूर खिलार विचार न कीन्हों, ह्वै हैं ख्वार भले। विना विवेक मनोरथ काके, भूधर सफल फले। जगत० ॥ ३ ॥

५९. राग विहाग ।

तहां ले चल री ! जहां जादौपति प्यारो ॥ टेक ॥ नेमि निशाकर विन यह चन्दा, तन मन दहत सकल री । तहां० ॥ १ ॥ किरन किधौं नाविक-शर-तति कै, ज्यों पावककी झल री । तारे हैं कि अँगारे सजनी, रजनी राकसदल[1] री । तहां० ॥ २ ॥ इह विधि राजुल राजकुमारी, विरह तपी वेकल री । भूधर धन्न शिवासुत[2] बादर[3], वरसायो समजल[4] री । तहां० ॥ ३ ॥

६०. राग ख्याल ।

अरे ! हां चेतो रे भाई ॥ टेक ॥ मानुष देह लही दुलही, सुघरी उघरी सतसंगति पाई । अरे हां० ॥ १ ॥ जे करनी वरनी करनी नहिं, ते समझी करनी समझाई । अरे हां० ॥ २ ॥ यों शुभ थान जग्यो उर ज्ञान, विषैविषपान तृषा न बुझाई । अरे हां० ॥ ३ ॥ पारस पाय सुधा-

---

१ राक्षस. २ शिवदेवीके पुत्र नेमि. ३ बादल-मेघ. ४ शम समतारूपी जल. ५ टेक छोड़कर पढ़नेसे इस पदका एक मत्त-गयन्द (तईसा) सवैया बन जाता है.

रस भूधर, भीखकेमांहिं सुलाज न आई ।
अरे हां० ॥ ४ ॥

६१. राग सोरठ ।

सो गुरुदेव हमारा है साधो ॥ टेक ॥ जोग अगनिमें जो थिर राखै, यह चित चंचल पारा है ॥ सो गुरु० ॥ १ ॥ करन[1] कुरंग खरे मदमाते, जप तप खेत उजारा[2] है ॥ संजम डोर जोर वश कीने, ऐसा ज्ञान विचारा है ॥ सो गुरु० ॥ २ ॥ जा लक्ष्मीको सब जग चाहै, दास हुआ जग सारा है । सो प्रभुके चरननकी चेरी, देखो अचरज भारा है ॥ सो गुरु० ॥३॥ लोभ सरपके कहर जहरकी, लहर गई दुख टारा है । भूधर ता रिखका[3] शिख[4] हूजे, तब कछु होय सुधारा है ॥ सो गुरु० ॥ ४ ॥

६२. राग सोरठ ।

स्वामीजी सांची सरन तुम्हारी ॥ टेक ॥ समरथ शांत सकल गुनपूरे, भयो भरोसो भारी ॥ स्वामी० ॥ १ ॥ जनम जरा जग वैरी

---

१ इन्द्रिय. २ उजाड़ा, नष्ट किया. ३ ऋषि-मुनिका. ४ शिष्य.

जीते, टेव मरनकी टारी। हमहूकों अजरामर करियो, भरियो आस हमारी॥ स्वामी०॥ २॥ जनमैं मरैं धरैं तन फिरि फिरि, सो साहिव संसारी। भूधर परदालिद क्यों दलि है, जो है आप भिखारी॥ स्वामी०॥ ३॥

६३.

जीवदया व्रत तरु वड़ो, पालो पालो वड़भाग॥ टेक॥ कीड़ी कुंजर कुंथुवा, जेते जगजन्त। आप सरीखे देखिये, करिये नहिं भन्त[1]॥ जीवदया०॥ १॥ जैसे अपने हीयंड़े[2], प्यारे निज प्रान। त्यों सवहीकों लाड़िये, निहचै यह जान॥ जीवदया०॥ २॥ फांस चुभै टुक देहमें, कछु नाहिं सुहाय। त्यों परदुखकी वेदना, समझो मन लाय॥ जीवदया०॥ ३॥ मन वचसौं अर कायसौं, करिये परकाज। किसहीकों न सताइये, सिखवैं रिखिराज॥ जीवदया०॥ ४॥ करुना जगकी मायड़ी[3], धीजै[4] सव कोय। धिग! धिग! निरदय भावना, कंपैं

१ भेद. २ दिलमें. ३ माता. ४ प्रतीति करै.

जिय जोय ॥ जीवदया० ॥ ५ ॥ सब दंसेण[1] सब लोयमें[2], सब कालमँझार । यह करनी बहु शंसिये[3], ऐसो गुणसार ॥ जीवदया० ॥ ६ ॥ निरदै नर भी संस्तुवै[4], निंदै कोइ नाहिं । पालैं विरले साहसी, धनि वे जगमाहिं ॥ जीवदया० ॥ ७ ॥ पर सुखसौं सुख होय पर–पीड़ासौं पीर। भूधर जो चित चाहिये, सोई कर बीर ! ॥ जीवदया० ॥ ८ ॥

६४.

ऐसो श्रावक कुल तुम पाय, वृथा क्यों खोवत हो ॥ टेक ॥ कठिन कठिनकर नरभव पाई, तुम लेखी आसान । धर्म विसारि विषयमें राचौ, मानी न गुरुकी आन ॥ वृथा० ॥ १ ॥ चक्री एक मतंगज पायो, तापर ईंधन ढोयो । विना विवेक विना मतिहीको, पाय सुधा पग धोयो ॥ वृथा० ॥ २ ॥ काहू शठ चिन्तामणि पायो, मरम न जानो ताय । वायस देखि उदधिमें फैंक्यो, फिर पीछे पछताय ॥ वृथा० ॥ ३ ॥

---

१ दर्शनोंमें–धर्मोंमें. २ लोकमें. ३ सराहिए. ४ स्तुति करै.

सात विसन आठों मद त्यागो, करुना चित्त विचारो । तीन रतन हिरदैमें धारो, आवागमन निवारो ॥ वृथा० ॥ ४ ॥ भूधरदास कहत भविजनसों, चेतन अब तो सम्हारो । प्रभुको नाम तरन तारन जपि, कर्मफन्द निरवारो ॥ वृथा० ॥ ५ ॥

६५. राग ख्याल ।

नैननिको वान परी, दरसनकी ॥ टेक ॥ जिनसुखचन्द चकोर चित्त मुझ, ऐसी प्रीति करी ॥ नैन० ॥ १ ॥ और अदेवनके चितवनको अब चित चाह टरी । ज्यों सब धूलि दवै दिशि दिशिकी, लागत मेघझरी ॥ नैन० ॥ २ ॥ छवी समाय रही लोचनमें, विसरत नाहिं घरी । भूधर कह यह टेव रहो थिर, जनम जनम हमरी ॥ नैन० ॥ ३ ॥

६६. चाल गोपीचन्दकी ।

यह तन जंगम रूखड़ा[1], सुनियो भवि प्रानी । एक बूंद इस बीच है, कछु बात न छानी[2] ॥टेक॥

---

१ वृक्ष. २ छुपी.

गरभ खेतमें मास नौ, निजरूप दुराया। बाल अंकुरा बढ़ गया, तब नजरों आया ॥ १ ॥ अस्थिरसा भीतर भया, जानै सब कोई। चाम त्वचा ऊपर चढ़ी, देखो सब लोई ॥ २ ॥ अधो अंग जिस पेड़ है, लख लेहु सयाना। भुज शाखा दल आँगुरी, दृग फूल [1]रवाँना ॥ ३ ॥ वनिता बेलि सुहावनी, आलिंगन कीया। पुत्रादिक पंछी तहां, उड़ि बासा लीया ॥ ४ ॥ निरख वि[2]रख बहु सोहना, सबके मनमाना। स्वजन लोग छाया तकी, निज स्वारथ जाना ॥ ५ ॥ काम भोग फलसों फला, मन देखि लुभाया। चाखतके मीठे लगे, पीछैं पछताया ॥ ६ ॥ जरादि बलसों छबि घटी, किसही न सुहाया। काल अगनि जब लहलही, तब खो[3]ज न पाया ॥ ७ ॥ यह मानुष द्रुमकी दशा, हिरदै धरि लीजे। ज्यों हूवा त्यों जाय है, कछु जतन करीजे ॥ ८ ॥ धर्म सलिलसों सींचिकै, तप धूप दिखइये। सुरग मोक्ष फल तब लगैं, भूधर सुख पइये ॥ ९ ॥

---

१ रमणीय. २. वृक्ष. ३ पता.

६७. राग कालिंगड़ा।

"गरीब जुलाहा ताना कौन बुनैगा" इस चालमें।

चरखा चलता नाहीं, चरखा हुआ पुराना ॥ टेक ॥ पग खूंटे दो हालन लागे, उर मदरा खखराना। छीदी हुई पांखड़ी पांसू, फिरै नहीं मनमाना ॥ चरखा० ॥ १ ॥ रसना तकलीने बल खाया, सो अब कैसैं खूटै ॥ सबद सूत सूधा नहिं निकसै, घड़ी घड़ी पल टूटै ॥ चरखा० ॥ २ ॥ आयु मालका नहीं भरोसा, अंग चलाचल सारे। रोज इलाज मरम्मत चाहै, बैद बाढ़ही हारे ॥ चरखा० ॥ ३ ॥ नया चरखला रंगा चंगा, सबका चित्त चुरावै। पलटा वरन गये गुन अगले, अब देखैं नहिं भावै ॥ चरखा० ॥ ४ ॥ मौटा महीं कातकर भाई!, कर अपना सुरझेरा ॥ अंत आगमें ईंधन होगा, भूधर समझ सबेरा ॥ चरखा० ॥ ५ ॥

६८. आरती।

आरती आदि जिनिंद तुम्हारी, नाभिकुमार कनकछविधारी ॥ आरती० ॥ टेक ॥ जुगकी

आदि प्रजा प्रतिपाली, सकल जननकी आरति टाली ॥ आरती० ॥ १ ॥ वांछापूरन सबके स्वामी, प्रगट भये प्रभु अंतरजामी ॥ आरती० ॥ २ ॥ कोटभानुजुत आभा तनकी, चाहत चाह मिटै नहिं तनकी ॥ आरती० ॥ ३ ॥ नाटक निरखि परम पद ध्यायो, राग थान वैराग उपायो ॥ आरती० ॥ ४ ॥ आदि जगतगुरु आदि विधाता, सुरग मुकति मारगके दाता ॥ आरती० ॥ ५ ॥ दीनदयाल दया अब कीजे, भूधर सेवकको ढिग लीजे ॥ आरती० ॥ ६ ॥

६९. राग सलहामारू ।

सुनि सुनि हे साथनि! म्हारे मनकी बात। सुरति सखीसों सुमति राणी यों कहै जी। बीत्यो है साथनि म्हारी! दीरघकाल, म्हारो सनेही म्हारे घर ना रहै जी ॥ १ ॥ ना वरज्यो रहै साथनि म्हारी चेतनराव, कारज अधम अचेतनके करै जी। दुरमति है साथनि म्हारी जात कुजात, सोई चिदातम पियको

चित्त हरै जी ॥ २॥ सिखयौ है साथनि म्हारी केती बार, क्यों ही कियो हठी हठ एरी हरै जी। कीजे हो साथनि म्हारी कौन उपाय, अब यह विरह विथा नहिं सही परै जी ॥३॥ चलि चलि री साथनि म्हारी, जिनजीके पास, वे उपगारी इसैं समझावसी जी। जगसी हे सखी म्हारे मस्तक भाग, जो म्हारौ कँथ सः-मझि घर आवसी जी ॥ ४ ॥ कारज हे सखी म्हारी! सिद्ध न होय, जब लग काललवधि-बल नहिं भलो जी। तो पण हे सखी म्हारी उद्यम जोग, सीख सयानी भूधर मन सां-भलो जी ॥ ५ ॥

७०. जकड़ी।

अब मन मेरे वे!, सुनि सुनि सीख सयानी। जिनवर चरना वे!, करि करि प्रीति सुज्ञानी ॥ करि प्रीति सुज्ञानी! शिवसुखदानी, धन जीतव है पंचदिना। कोटि वरप जीवो किस लेखे, जिन-चरणांबुजभक्ति विना ॥ नर परजाय पाय अति उत्तम, गृह वसि यह लाहा ले रे!। समझ समझ

बोलैं गुरुज्ञानी, सीख सयानी मन मेरे ॥ १ ॥
तू मति तरसै वे!, सम्पति देखि पराई। बोये
लुनि ले वे!, जो निज पूर्व कमाई ॥ पूर्व कमाई
सम्पति पाई, देखि देखि मति झूर मरै। बोय
बँबूल शूल-तरु भोंदू!, आमनकी क्या आस
करै ॥ अब कछु समझ बूझ नर तासों, ज्यों
फिर परभव सुख दरसै। करि निजध्यान दान
तप संजम, देखि विभव पर मत तरसै ॥ २ ॥
जो जग दीसै वे!, सुंदर अरु सुखदाई। सो सब
फलिया वे!, धरमकल्पद्रुम भाई!॥ सो सब धर्म
कल्पद्रुमके फल, रथ पायक बहु ऋद्धि सही।
तेज तुरंग तुंग गज नौ निधि, चौदह रतन
छखण्ड मही ॥ रति उनहार रूपकी सीमा, सहस
छ्यानवे नारि वरै। सो सब जानि धर्मफल भाई!
जो जग सुंदर दृष्टि परै ॥ ३ ॥ लगैं असुंदर वे!,
कंटक वान घनेरे। ते रस फलिया वे!, पाप
कनक-तरु केरे ॥ ते सब पाप कनकतरुके फल,
रोग सोग दुख नित्य नये। कुथित शरीर
चीर नहिं तापर, घर घर फिरत फकीर भये ॥

भूख प्यास पीड़ैं कन मांगैं, होत अनादर पग पगमें। ये परतच्छ पाप संचित फल, लगैं असुंदर जे जगमें ॥ ४ ॥ इस भव वनमें वे!, ये दोऊ तरु जाने। जो मन माने वे!, सोई सींचि सयाने ॥ सींचि सयाने! जो मन माने, वेर वेर अव कौन कहै। तू करतार तुही फल भोगी, अपने सुख दुख आप लहै ॥ धन्य! धन्य! जिन मारग सुंदर, सेवन जोग तिहूं पनमें। जासों समुझि परै सब भूधर, सदा शरण इस भववनमें ॥ ५ ॥

७१. विनती।

हरिगीतिका।

पुलकन्त नयन चकोर पक्षी, हँसत उर इन्दीवरो। दुर्बुद्धि चकवी विलख विछुरी, निबिड़ मिथ्यातम हरो ॥ आनन्द अम्बुज उमग उछर्यो, अखिल आतम निरदले। जिनवदन पूरनचन्द्र निरखत, सकल मनवांछित फले ॥१॥ मुझ आज आतम भयो पावन, आज विघ्न विनाशियो। संसारसागर नीर निवर्यो, अखि-

ल तत्त्व प्रकाशियो ॥ अब भई कमला किंकरी मुझ, उभय भव निर्मल ठये। दुख जरो दुर्गति-वास निवरो, आज नव मंगल भये ॥ २ ॥ मनहरन मूरति हेरि प्रभुकी, कौन उपमा लाइये। मम सकल तनके रोम हुलसे, हर्ष ओर न पाइये ॥ कल्याणकाल प्रतच्छ प्रभुको, लखें जो सुर नर घने। तिस समयकी आनन्दमहिमा, कहत क्यों मुखसों बने ॥ ३ ॥ भर नयन निरखे नाथ तुमको, और वांछा ना रही। मन ठठ मनोरथ भये पूरन, रंक मानो निधि लही ॥ अब होय भव भव भक्ति तुम्हरी, कृपा ऐसी कीजिये। कर जोर 'भूधरदास' विनवै, यही वर मोहि दीजिये ॥ ४ ॥

७२. विनती।

तुम तरनतारन भवनिवारन, भविक-मनआनन्दनो। श्रीनाभिनन्दन जगतवन्दन, आदिनाथ जिनिन्दनो ॥ तुम आदिनाथ अनादि सेऊं, सेय पद पूजा करों। कैलाशगिरिपर ऋषभ जिनवर, चरणकमल हृदय धरों ॥ १ ॥

तुम अजितनाथ अजीत जीते, अष्टकर्म महा-वली। यह जानकर तुम शरण आयो, कृपा कीजे नाथ जी॥ तुम चन्द्रवदन सुचन्द्रलक्षण, चन्द्रपुरिपरमेशजू। महासेननन्दन जगतवं-दन, चन्द्रनाथ जिनेशजू॥ २॥ तुम वालवोध-विवेकसागर, भव्यकमलप्रकाशनो। श्रीनेमि-नाथ पवित्र दिनकर, पापतिमिर विनाशनो॥ तुम तजी राजुल राजकन्या, कामसैन्या वश करी। चारित्ररथ चढ़ि भये दूलह, जाय शिव-सुन्दरि वरी॥ ३॥ इन्द्रादि जन्मस्थान जि-नके, करन कनकाचल चढ़े। गंधर्व देवन सु-यश गाये, अपसरा मंगल पढ़े॥ इहि विधि सुरासुर निज नियोगी, सकल सेवाविधि ठही। ते पार्श्व प्रभु मो आस पूरो, चरनसेवक हों सही॥ ४॥ तुम ज्ञान रवि अज्ञानतमहर, सेवक-न सुख देत हो। मम कुमतिहारन सुमतिका-रन, दुरित सब हर लेत हो॥ तुम मोक्षदाता कर्मघाता, दीन जानि दया करो। सिद्धार्थ-नन्दन जगतवन्दन, महावीर जिनेश्वरो॥ ५॥

चौवीस तीर्थंकर सुजिनको, नमत सुरनर आ-
यके। मैं शरण आयो हर्ष पायो, जोर कर सिर
नायके ॥ तुम तरनतारन हो प्रभूजी, मोहि
पार उतारियो। मैं हीन दीन दयालु प्रभुजी,
काज मेरो सारियो ॥ ६ ॥ यह अतुलमहिमा-
सिन्धु साहव, शक्र पार न पावही। तजि हासभय
तुम दास भूधर, भक्तिवश यश गावही ॥ ७ ॥

७३. गुरुविनती।

बन्दौं दिगम्बरगुरुचरन, जग तरन तारन
जान। जे भरम भारी रोगको, हैं राजवैद्य
महान ॥ जिनके अनुग्रह विन कभी, नहिं कटैं
कर्म जँजीर। ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरो
पातक पीर ॥ १ ॥ यह तन अपावन अशुचि
है, संसार सकल असार। ये भोग विष-पकवा-
नसे, इस भाँति सोच विचार ॥ तप विरचि श्री-
मुनि वन वसे, सब त्यागि परिग्रह भीर। ते साधु
मेरे मन वसो, मेरी हरो पातक पीर ॥ २ ॥ जे
काच कंचन सम गिनैं, अरि मित्र एक सरूप।

निंदा वड़ाई सारिखी, वनखण्ड शहर अनूप ॥ सुख दुःख जीवन मरनमें, नाहिं खुशी नहिं दिलगीर। ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरो पातक पीर ॥ ३ ॥ जे बाह्य परवत वन वसैं, गिरि गुहा महल मनोग। सिल सेज समता सहचरी, शशिकिरण दीपक जोग ॥ मृग मित्र भोजन तपमई, विज्ञान निरमल नीर। ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरो पातक पीर ॥ ४ ॥ सूखैं सरोवर जल भरे, सूखे तरंगनितोय। वाटैं वटोही ना चलैं, जहां घाम गरमी होय ॥ तिस काल मुनिवर तप तपैं, गिरिशिखर ठाड़े धीर। ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरो पातक पीर ॥ ५ ॥ वन घोर गरजैं घनघटा, जल परै पावसकाल। चहुँओर चमकै वीजुरी, अति चलै शीतल व्याल ॥ तरुहेट तिष्ठैं तव जती, एकान्त अचल शरीर। ते साधु मेरे मन वसो, मेरी हरो पातक पीर ॥ ६ ॥ जब शीत मास तुपारसों, दाहै सकल वनराय। जव

१ समान, बराबर. २ नदीका जल. ३ रास्तेसे. ४ मुसाफिर. ५ बरसातमें. ६ पवन. ७ वृक्षके नीचे.

जमै पानी पोखरां, थरहरै सबकी काय ॥ तब नगन निवसैं चौहटैं[1], अथवा नदीके तीर । ते साधु मेरे मन बसो, मेरी हरो पातक पीर ॥७॥ कर जोर भूधर बीनवै, कब मिलैं वह मुनिराज । यह आस मनकी कब फलै, मेरे सरैं[2] सगरे[3] काज ॥ संसार विषम विदेशमें, जे विना कारण वीर । ते साधु मेरे मन बसो, मेरी हरो पातक पीर ॥ ८ ॥

७४. विनती ।

चौपाई १६ मात्रा ।

जै जगपूज परमगुरु नामी, पतित उधारन अंतरजामी । दास दुखी तुम अति उपगारी, सुनिये प्रभु ! अरदास हमारी ॥ १ ॥ यह भव घोर समुद्र महा है, भूधर भ्रम-जल-पूर रहा है । अंतर दुख दुःसह बहुतेरे, ते बड़वानल साहिब मेरे ॥२॥ जनम जरा गद मरन जहां है, ये ही प्रबल तरंग तहां है । आवत विपति नदीगन जामें, मोह महान मगर इक तामें ॥३॥ तिस मुख जीव पर्यो दुख पावै, हे ! जिन ! तुम विन कौन छुड़ावै ।

१ चौपटमैदान. २ सिद्ध होवें. ३ सब.

अशरन-शरन अनुग्रह कीजे, यह दुख मेटि मुकति मुझ दीजे ॥ ४ ॥ दीरघ काल गयो विललावैं, अब ये सूल सहे नहिं जावैं । सुनियत यों जिनशासनमाहीं, पंचम काल परमपद नाहीं ॥ ५ ॥ कारन पांच मिलैं जब सारे, तब शिव सेवक जाहिं तुम्हारे। तातैं यह विनती अब मेरी, स्वामी! शरण लई हम तेरी ॥ ६ ॥ प्रभु आगैं चितचाह प्रकासों, भव भव श्रावककुल अभिलासों । भव भव जिन आगम अवगाहों, भव भव भक्ति शरणकी चाहों ॥७॥ भव भवमें सत संगति पाऊं, भव भव साधनके गुन गाऊं। परनिंदा मुख भूलि न भाखूं, मैत्रीभाव सबनसों राखूं ॥ ८ ॥ भव भव अनुभव आतमकेरा, होहु समाधिमरण नित मेरा । जबलौं जनम जगतमें लाधौं, काललबधि बल लहि शिव साधौं ॥९॥ तबलौं ये प्रापति मुझ हूजो, भक्ति प्रताप मनोरथ पूजो । प्रभु सब समरथ हम यह लोरैं, भूधर अरज करत कर जोरैं ॥ १० ॥

७९. नेमिनाथजीकी विनती।

त्रिभुवनगुरु स्वामी जी, करुनानिधि नामी जी। सुनि अंतरजामी, मेरी वीनती जी ॥ १ ॥ मैं दास तुम्हारा जी, दुखिया बहु भारा जी। दुख मेटनहारा, तुम जादोंपती जी ॥ २ ॥ भरम्यो संसारा जी, चिर विपति-भँडारा जी। कहिं सार न सारे, चहुँगति डोलियो जी ॥ ३ ॥ दुख मेरु समाना जी, सुख सरसों-दाना जी। अब जान धरि ज्ञान, तराजू तोलिया जी ॥ ४ ॥ थावर तन पाया जी, त्रस नाम धराया जी। कृमि कुंथु कहाया, मरि भँवरा हुवा जी ॥५॥ पशुकाया सारी जी, नाना विधि धारी जी। जलचारी थलचारी, उड़न पखेरु हुवा जी ॥ ६ ॥ नरक-नकेमाहीं जी, दुख ओर न काहीं जी। अति घोर जहाँ है, सरिता खारकी जी ॥ ७ ॥ पुनि असुर संघारैं जी, निज वैर विचारैं जी। मिलि बांधैं अर मारैं, निरदय नारकी जी ॥ ८ ॥ मानुष अवतारै जी, रह्यो गरभमँझारै जी। रटि रोयो जनमत, वारैं मैं घनों जी ॥ ९ ॥ जो-

वन तन रोगी जी; कै विरहवियोगी जी । फिर
भोगी बहुविधि; विरधपनाकी वेदना जी ॥ १० ॥
सुरपदवी पाई जी, रंभा उर लाई जी । तहाँ देखि
पराई, संपति झूरियो जी ॥ ११ ॥ माला मुर-
झानी जी; तब आरति ठानी जी । थिति पूरन
जानी, मरत विसूरियो जी ॥ १२ ॥ यों दुख
भवकेरा जी, भुगतो बहुतेरा जी । प्रभु! मेरे
कहतें; पार न है कहीं जी ॥ १३ ॥ मिथ्यामद-
माता जी, चाही नित साता जी । सुखदाता
जगत्राता; तुम जाने नहीं जी ॥ १४ ॥ प्रभु
भागनि पाये जी, गुन श्रवन सुहाये जी । तकि
आयो अब सेवककी, विपदा हरो जी ॥ १५ ॥
भववास बसेरा जी, फिरि होय न मेरा जी ।
सुख पावै जन तेरा, स्वामी! सो करो जी
॥ १६ ॥ तुम शरनसहाई जी, तुम सज्जनभाई
जी । तुम माई तुम्हीं बाप, दया मुझ लीजिये
जी ॥ १७ ॥ भूधर कर जोरै जी, ठाड़ो प्रभु
औरे जी । निजदास निहारो; निरभय की-
जिये जी ॥ १८ ॥

७६. विनती।

ढाल—परमादी।

अहो! जगतगुरु एक, सुनियो अरज हमारी। तुम हो दीन दयाल, मैं दुखिया संसारी ॥ १ ॥ इस भव वनमें वादि, काल अनादि गमायो। भ्रमत चहूँगतिमाहिं, सुख नहिं दुख बहु पायो ॥ २ ॥ कर्म महारिपु जोर, एक न कान करैं जी। मनमान्यां दुख देहिं, काहूसों न डरैं जी ॥ ३ ॥ कबहूं इतर निगोद, कबहूं नर्क दिखावैं। सुरनर पशुगतिमाहिं, बहुविधि नाच नचावैं ॥ ४ ॥ प्रभु! इनके परसंग, भव भवमाहिं बुरे जी। जे दुख देखे देव!, तुमसों नाहिं दुरे जी ॥ ५ ॥ एक जन्मकी बात, कहि न सकों सुनि स्वामी!। तुम अनन्त परजाय, जानत अंतरजामी ॥ ६ ॥ मैं तो एक अनाथ, ये मिलि दुष्ट घनेरे। कियो बहुत बेहाल, सुनियो साहिब मेरे ॥ ७ ॥ ज्ञान महानिधि लूटि, रंक निबल करि डार्‌यो। इनही तुम मुझमाहिं, हे जिन! अंतर पार्‌यो ॥ ८ ॥ पाप पुन्यकी

दोइ, पाँयनि वेरी डारी । तन काराग्रहमाहिं, मोहि दियो दुख भारी ॥ ९ ॥ इनको नेक वि-गार, मैं कछु नाहिं कियो जी । विनकारन जग-वंद्य!, वहुविधि वैर लियो जी ॥ १० ॥ अव आयो तुम पास, सुनि जिन! सुजस तिहारो । नीतनिपुन जगराय!, कीजे न्याव हमारो ॥११॥ दुष्टन देहु निकास, साधनकों रखि लीजे। विनवै भूधरदास, हे प्रभु! ढील न कीजे ॥ १२ ॥

७७. गुरुकी विनती ।

राग—भरतरी । (दोहा)

ते गुरु मेरे मन वसो, जे भव जलधि जि-हाज । आप तिरैं पर तारहीं, ऐसे श्रीऋषि-राज ॥ ते गुरु० ॥ १ ॥ मोह महारिपु जीतिकैं, छांड्यो सव घरवार । होय दिगम्बर वन वसे, आतम शुद्ध विचार ॥ ते गुरु० ॥ २ ॥ रोग[1]-उरग-विल वपु[2] गिण्यो, भोग भुजंग समान । कदली तरु संसार है, त्यागो सव यह जान ॥ ते गुरु० ॥ ३ ॥ रतनत्रय निधि उर धरैं, अरु

---

१ रोगरूपी सर्पका विल । २ शरीर.

निरग्रंथ त्रिकाल । मार्‌यो काम खवीसको, स्वामी परम दयाल ॥ ते गुरु० ॥ ४ ॥ पंच महाव्रत आदरैं, पांचों सुमति समेत । तीन गुपति पालैं सदा, अजर अमर पद हेत ॥ ते गुरु० ॥५॥ धर्म धरैं दशलक्षणी, भावैं भावना सार । सहैं परीसह बीस द्वै, चारित-रतन-भँडार ॥ ते गुरु० ॥ ६ ॥ जेठ तपै रवि आकरो[1], सूखै सरवरनीर। शैल-शिखर मुनि तप तपैं, दाझैं[2] नगन शरीर॥ ते गुरु० ॥ ७ ॥ पावस रैन डरावनी, बरसै जलधर-धार। तरुतल निवसैं साहसी, बाजै[3] झंझावार[4] ॥ ते गुरु० ॥ ८ ॥ शीत पड़ै कपि-मद गलै, दाहै सब वनराय । ताल तरंगनिके तटै, ठाड़े ध्यान लगाय ॥ ते गुरु० ॥ ९ ॥ इहि विधि दुद्धर तप तपैं, तीनों कालमँझार। लागे सहज सरूपमें, तनसों ममत निवार ॥ ते गुरु० ॥१०॥ पूरव भोग न चिंतवैं, आगम वांछा नाहिं । चहुँगतिके दुखसों डरैं, सुरति लगी शिव-

---

१ तेजीसे। २ जलावैं। ३ चलती है। ४ बरसाती हवाको झंझा कहते हैं।

माहिं ॥ ते गुरु० ॥ ११ ॥ रंगमहलमें पौढ़ते, कोमल सेज बिछाय। ते पच्छिम निशिभूमिमें, सोवें संवरि काय ॥ ते गुरु० ॥ १२ ॥ गज चढ़ि चलते गरवसौं, सेना सजि चतुरंग। निरखि निरखि पग वे धरैं, पालैं करुणा अंग ॥ ते गुरु० ॥ १३ ॥ वे गुरु चरण जहां धरैं, जगमें तीरथ जेह। सो रज मम मस्तक चढ़ौ, भूधर मांगे येह ॥ ते गुरु० ॥ १४ ॥

७८. पंचनमोकारमंत्रमाहात्म्यकी ढाल।

श्रीगुरु शिक्षा देत हैं, सुनि प्रानी रे! सुमर मंत्र नोकार, सीख सुनि प्रानी रे! लोकोत्तम मंगल महा, सुनि प्रानी रे! अशरन-जन-आधार, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ १ ॥ प्राकृत रूप अनादि है, सुनि प्रानी रे! मित अच्छर पैंतीस, सीख सुनि प्रानी रे! पाप जाय सब जापतैं, सुनि प्रानी रे! भाष्यो गणधरईश, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ २ ॥ मन पवित्र करि मंत्रको, सुनि प्रानी रे! सुमरै शंका छोरि, सीख सुनि प्रानी रे! वांछित वर पावै सही, सुनि प्रानी रे! शी-

लवंत नर नारि, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ३ ॥ विषधर-बाघ न भय करै, सुनि प्रानी रे! विनसैं विघन अनेक, सीख सुनि प्रानी रे! व्याधि विषम-विंतर भजैं, सुनि प्रानी रे! विपत न व्यापै एक, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ४ ॥ कपिको शिखरसमेदपै, सुनि प्रानी रे! मंत्र दियो मुनिराज, सीख सुनि प्रानी रे! होय अमर नर शिव वस्यो, सुनि प्रानी रे! धरि चौथी परजाय, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ५ ॥ कह्यो पदमरुचि सेठने, सुनि प्रानी रे! सुन्यो बैलके जीव, सीख सुनि प्रानी रे! नर सुरके सुख भुंजकै, सुनि प्रानी रे! भयो राव सुग्रीव, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ६ ॥ दीनों मंत्र सुलोचना, सुनि प्रानी रे! विंध्यश्रीको जोइ, सीख सुनि प्रानी रे! गंगादेवी अवतरी, सुनि प्रानी रे! सर्प-डसी थी सोइ, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ७ ॥ चारुदत्तपै वनिकने, सुनि प्रानी रे! पायो कूपमँझार, सीख सुनि प्रानी रे! पर्वत ऊपर छागने, सुनि प्रानी रे! भये जुगम सुर सार,

१ बकरेने.

सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ८ ॥ नाग नागिनी जलत हैं, सुनि प्रानी रे! देखे पासजिनिंद, सीख सुनि प्रानी रे! मंत्र देत तव ही भये, सुनि प्रानी रे! पद्मावति धरनेंद्र, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ९ ॥ चहलेमें[1] हथिनी फँसी, सुनि प्रानी रे! खग[2] कीनों उपगार, सीख सुनि प्रानी रे! भव लहिके सीता भई, सुनि प्रानी रे! परम सती संसार, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ १० ॥ जल मांगे शूली चढ्यो, सुनि प्रानी रे! चोर कंठ-गत-प्रान, सीख सुनि प्रानी रे! मंत्र सिखायो सेठने, सुनि प्रानी रे! लह्यो सुरग सुखथान, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ ११ ॥ चंपापुरमें ग्वालिया, सुनि प्रानी रे! घोखै मंत्र महान, सीख सुनि प्रानी रे! सेठ सुदर्शन अवतर्‌यो, सुनि प्रानी रे! पहले भव निरवान, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ १२ ॥ मंत्र महातमकी कथा, सुनि प्रानी रे! नामसूचना एह, सीख सुनि प्रानी रे! श्रीपुन्यास्रवग्रंथमें, सुनि प्रानी रे! तारे सो सुनि

१ कीचड़में. २ विद्याधरने.

लेहु, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ १३ ॥ सात-विसन सेवन हठी, सुनि प्रानी रे! अधम अंजना चोर, सीख सुनि प्रानी रे! सरधा करते मंत्रकी, सुनि प्रानी रे! सीझी विद्या जोर, सीख सुनि प्रानी रे! ॥१४॥ जीवक[1] सेठ समोधियो, सुनि प्रानी रे! पापाचारी स्वान, सीख सुनि प्रानी रे! मंत्र प्रतापैं पाइयो, सुनि प्रानी रे! सुंदर सुरग विमान, सीख सुनि प्रानी रे! ॥१५॥ आगैं सीझे सीझि हैं, सुनि प्रानी रे! अब सीझैं निरधार, सीख सुनि प्रानी रे! तिनके नाम बखानतैं, सुनि प्रानी रे! कोइ न पावै पार, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ १६ ॥ बैठत चिंतै सोवतैं, सुनि प्रानी रे! आदि अंतलौं धीर, सीख सुनि प्रानी रे! इस अपराजित मंत्रको, सुनि प्रानी रे! मति बिसरै हो! वीर, सीख सुनि प्रानी रे! ॥१७॥ सकल लोक सब कालमें, सुनि प्रानी रे! सरवागममें सार, सीख सुनि प्रानी रे! भूधर कबहुं न भूलि है, सुनि प्रानी रे! मंत्रराज मन धार, सीख सुनि प्रानी रे! ॥ १८ ॥

---

१ जीवंधरने ।

७०. करुणाष्टक ।

करुणा ल्यो जिनराज हमारी, करुणा ल्यो ॥ टेक ॥ अहो जगतगुरु जगपती, परमानंदनिधान । किंकरपर कीजे दया, दीजे अविचल थान ॥ हमारी० ॥१॥ भवदुखसों भयभीत हों, शिवपदवांछा सार । करो दया मुझ दीनपै, भवबंधन निरवार ॥ हमारी० ॥ २ ॥ पर्यो विषम भवकूपमें, हे प्रभु ! काढ़ो मोहि । पतितउधारण हो तुम्हीं, फिर फिर विनऊं तोहि ॥ हमारी० ॥ ३ ॥ तुम प्रभु परमदयाल हो, अशरणके आधार । मोहि दुष्ट दुख देत हें, तुमसों करहुँ पुकार ॥ हमारी० ॥ ४ ॥ दुःखित देखि दया करै, गाँवपती इक होय । तुम त्रिभुवनपति कर्मतें, क्यों न छुड़ावो मोय ॥ हमारी० ॥ ५ ॥ भव-आताप तवै भुजैं, जब राखों उर धोय । दया-सुधा करि सीयरा, तुम पद-पंकज दोय ॥ हमारी० ॥६॥ येहि एक मुझ वीनती, स्वामी ! हर संसार । बहुत धज्यो हूं त्रासतैं, विलख्यो वारंवार ॥ हमारी० ॥ ७ ॥ [1]पदमनंदिको

---

१ श्रीपद्मनन्दिआचार्यकृत पंचविंशतिकाके करुणाष्टकका आशय लेकर ।

अर्थ लै, अरज करी हितकाज । शरणागत भूधरतणी, राखौ जगपति लाज ॥ हमारी० ॥ ८ ॥

८०. गजल ।

रखता नहीं तनकी खबर, अनहद बाजा बाजिया। घटबीच मंडल बाजता, बाहिर सुना तो क्या हुआ ॥१॥ जोगी तो जंगम सेवड़ा, बहु लाल कपड़े पहिरता । उस रंगसे महरम नहीं, कपड़े रंगे तो क्या-हुआ ॥ २ ॥ काजी किताबैं खोलता, नसीहत बतावै औरको । अपना अमल कीन्हा नहीं, कामिल हुआ तो क्या हुआ ॥ ३॥ पोथीके पाना बांचता, घरघर कथा कहता फिरै । निज ब्रह्मको चीन्हा नहीं, ब्राह्मण हुआ तो क्या हुआ॥४॥ गांजारुभांग अफीम है, दारू शराबा पोशता । प्याला न पीया-प्रेमका, अमली हुआ तो क्या हुआ ॥ ५ ॥ शतरंज चौपरगंजफा, बहु मर्द खेलैं हैं सभी । बाजी न खेली प्रेमकी, ज्वारी हुआ तो क्या हुआ ॥ ६ ॥ भूधर बनाई वीनती, श्रोता सुनो सब कान दे । गुरुका वचन माना नहीं, श्रोता हुआ तो क्या हुआ ॥ ७ ॥

श्रीवीतरागाय नमः।

जैनपदसंग्रह

चतुर्थभाग।

अर्थात्

कविवर द्यानतरायजीके उत्तमोत्तमं

पदोंका संग्रह।

जिसे

श्रीजैनग्रन्थरत्नाकरकार्यालयके स्वामियोंने

मुम्बईके

निर्णयसागरप्रेसमें वा. रा. घाणेकरके प्रबंधसे

मुद्रित कराके प्रकाशित किया।

श्रीवीरनिर्वाण संवत् २४३५। ईसवी सन् १९०९.

पहिलीवार १००० प्रति।

न्योछावर- ॥≈ आना।

निवेदन ।

द्यानतविलासमें कविवर द्यानतरायजीके जितने पद हैं, इस पदसंग्रहमें वे सब संग्रह कर लिये गये हैं । द्यानतविलासमें बहुतसे पद हेमराज, दीपचन्द, खुशालचन्द, मानसिंह आदिके भी संगृहीत हैं, परन्तु हमने उन्हें इस संग्रहमें शामिल करना उचित नहीं समझा । एक छोटासा पद काश्मीरी भाषाका था, परन्तु अनभिज्ञ लेखकोंकी कृपासे उसका ऐसा रूपान्तर हो गया था, कि किसी तरह शुद्ध न हो सका । इसलिये उसको भी छोड़ दिया है । इसके संशोधन करनेमें हमको केवल दो प्रतियोंसे सहायता मिली है, एक जो हमारे मित्रने कापी करके भेजी थी, और दूसरी गजपंथजीके भंडारसे प्राप्त हुई थी । परन्तु दोनों ही प्रतियां प्रायः अशुद्ध थीं, इसलिये जितना अपनी बुद्धिसे हो सका, संशोधन किया है । जहां समझमें नहीं आया, वहां (?) ऐसा प्रश्नांक कर दिया है । यदि हमारे कोई पाठक इसकी रही हुई अशुद्धियोंकी सूचना देंगे, तो हम दूसरी आवृत्तिमें उनका संशोधन कर देंगे, और सूचक महाशयोंका आभार मानेंगे ।

इस संग्रहमें बहुतसे पदोंपर राग रागिनियोंके नाम नहीं लिखे गये हैं, कारण द्यानतविलासकी दोनों ही प्रतियोंमें उनपर रागोंके नाम नहीं थे । यदि कोई सांगीतविद्याके ज्ञाता इस त्रुटिको पूरी कर देंगे, तो बहुत उपकार होगा । २०—६—०९

प्रकाशक ।

द्यानतपदसंग्रहकी वर्णानुक्रमणिका।

पृष्ठ पदसंख्या

पृष्ठ पदसंख्या

स ।

श्रीपरमात्मने नमः।

पदसंग्रह-चतुर्थभाग।

अर्थात्—

कविवर द्यानतरायजीके पदोंका संग्रह।

१।

कर कर आतमहित रे प्रानी ॥ टेक॥ जिन परिनामनि बंध होत है, सो परनति तज दुखदानी ॥ कर० ॥ १ ॥ कौन पुरुष तुम कहाँ रहत हौ, किहिकी संगति रति मानी। जे परजाय प्रगट पुद्गलमय, ते तैं क्यों अपनी जानी ॥ कर० ॥ २ ॥ चेतनजोति झलक[1] तुझमाहीं, अनुपम सो तैं विसरानी। जाकी पटंतर[2] लगत आन नाहिं, दीप रतन शशि सूरानी[3] ॥ कर० ॥ ३ ॥ आपमें आप लखो अपनो पद, द्यानत करि तन-मन-वानी। परमेश्वरपद आप पाइये, यौं भाषैं केवलज्ञानी ॥ कर० ॥ ४ ॥

१ प्रकाश। २ समान। ३ सूर्यकी।

२ । राग—विहागरो ।

जानत क्यों नहिं रे, हे नर आतम ज्ञानी ॥ टेक ॥ रागदोष पुद्गलकी संगति, निहचै शुद्धनिशानी ॥ जानत० ॥ १ ॥ जाय नरक पशु नर सुर गतिमें, ये पर जाय विरानी । सिद्ध—स्वरूप सदा अविनाशी, जानत विरला प्रानी ॥ जानत० ॥ २ ॥ कियो न काहू हरै न कोई, गुरु शिख कौन कहानी । जनम-मरन-मल-रहित अमल है, कीच विना ज्यों पानी ॥ जानत० ॥ ३ ॥ सार पदारथ है तिहुँ जगमें, नहिं क्रोधी नहिं मानी । द्यानत सो घटमाहिं विराजै, लख हूजै शिव-थानी ॥ जानत० ॥ ४ ॥

३ । राग—काफी ।

आपा प्रभु जाना मैं जाना ॥ टेक ॥ परमेसुर यह मैं इस सेवक, ऐसो भर्म पलाना ॥ आपा० ॥ १ ॥ जो परमेसुर सो मम मूरति, जो मम सो भगवाना । मरमी होय सोइ तो जानै, जानै नाहीं आना ॥ आपा० ॥ २ ॥ जाकौ ध्यान धरत हैं मुनिगन, पावत हैं निरवाना । अर्हत सिद्ध सूरि गुरु मुनिपद, आतमरूप वखाना ॥ आपा० ॥ ३ ॥ जो निगोदमें सो मुझमाहीं, सोई है शिव थाना । द्यानत निहचैं रंच फेर नहिं, जानै सो मतिवाना ॥ आपा० ॥ ४ ॥

१ दूसरा । २ बुद्धिवान ।

४ । राग—विहागड़ो ।

अब हम नेमिजीकी शरन ॥ टेक ॥ और ठौर न मन लगत है, छांड़ि प्रभुके चरन ॥ अब० ॥ १ ॥ अब० ॥ १ ॥ सकल भवि-अघ-दहन-वारिद[1], विरद तारन तरन । इंद चंद फनिंद ध्यावैं, पाय सुख दुख-हरन ॥ अब० ॥ २ ॥ भरम-तम-हर-तरनि-दीपति[2], करमगन खयकरन । गनधरादि सुरादि जाके, गुन सकत नहिं वरन ॥ अब० ॥ ३ ॥ जा समान त्रिलोकमें हम, सुन्यौ और न करैंन[3] । दास द्यानत दयानिधि प्रभु, क्यों तजैंगे परैंन[4] ॥ अब० ॥ ४ ॥

५ । राग—सोरठा ।

गलतानमता कब आवैगा ॥ टेक ॥ राग दोष परणति मिट जै है, तब जियरा सुख पावैगा ॥ गलता० ॥ १ ॥ मैं ही ज्ञाता ज्ञान ज्ञेय मैं, तीनों भेद मिटावैगा । करता किरिया करमभेद मिटि, एक दरव लौं लावैगा ॥ गलता० ॥ २ ॥ निहचैं अमल मलिन व्योहारी, दोनों पक्ष नसावैगा । भेद गुण गुणीको नहिं ह्वै है, गुरु शिख कौन कहावैगा ॥ गलता० ॥ ३ ॥ द्यानत साधक साधि एक करि, दुविधा दूर

---

१ भव्यजीवोंरूपी अग्निको मेघ । २ भ्रमरूपी अंधकारके हरन करनेको सूर्यका प्रकाश । ३ कानोंसे । ४ प्रण—प्रतिज्ञा ।

बहावैगा । वचनभेद कहवत सब मिटकै, ज्योंका त्यों ठहरावैगा ॥ गलता० ॥ ४ ॥

६ । राग—सारंग ।

मोहि कब ऐसा दिन आय है ॥ टेक ॥ सकल विभाव अभाव होंहिंगे, विकलपता मिट जाय है ॥ मोहि० ॥ १ ॥ यह परमातम यह मम आतम, भेद-बुद्धि न रहाय है । औरनिकी का बात चलावै, भेद-विज्ञान पलाय है ॥ मोहि० ॥ २ ॥ जानैं आप आपमें आपा, सो व्यवहार विलाय है । नय-परमान-निखेपन-माहीं, एक न औसर पाय है ॥ मोहि० ॥ ३ ॥ दरसन ज्ञान चरनके विकलप, कहो कहाँ ठहराय है । द्यानत चेतन चेतन ह्वै है, पुदगल पुदगल थाय है ॥ मोहि० ॥ ४ ॥

७ । राग—विलावल ।

जिन नाम सुमर मन ! बावरे, कहा इत उत भटकै ॥ जिन० ॥ टेक ॥ विषय प्रगट विष—वेल हैं, इनमें जिन[1] अटकै ॥ जिन नाम० ॥ १ ॥ दुर्लभ नरभव पायकै, नगसों मत पटकै । फिर पीछैं पछतायगो, औसर जब सटकै[2] ॥ जिन नाम० ॥ २ ॥ एक घरी है सफल जो, प्रभु-गुन-रस गटकै । कोटि वरष जीयो वृथा, जो थोथा

---

१ मत । २ निकल जावे ।

फटकै ॥ जिन नाम० ॥ ३ ॥ द्यानत उत्तम भजन है, लीजै मन रटकै । भव भवके पातक सबै, जै हैं तो कटकै ॥ जिन नाम० ॥ ४ ॥

८ । राग—काफी ।

तू जिनवर स्वामी मेरा, मैं सेवक प्रभु हों तेरा ॥ टेक ॥ तुम सुमरन विन मैं बहु कीना, नाना जोनि बसेरा । भाग उदय तुम दरसन पायो, पाप भज्यो तजि खेरा ॥ तू जिनवर० ॥ १ ॥ तुम देवाधिदेव परमेसुर, दीजै दान सबेरा । जो तुम मोख देत नहिं हमको, कहाँ जायँ किंहि डेरा ॥ २ ॥ मात तात तूही बड़ भ्राता, तोसौं प्रेम घनेरा । द्यानत तार निकार जगततैं, फेर न ह्वै भवफेरा ॥ तू जिनवर० ॥ ३ ॥

९ । राग—काफी धमाल ।

सो ज्ञाता मेरे मन माना, जिन निज-निज, पर-पर जाना ॥ टेक ॥ छहौं दरवतैं भिन्न जानकै, नव तत्वनितैं आना । ताकौं देखै ताकौं जानै, ताहीके रसमें साना ॥ सो ज्ञाता० ॥ १ ॥ कर्म शुभाशुभ जो आवत हैं, सो तो पर पहिचाना । तीन भवनको राज न चाहै, यद्यपि गांठ दरब बहु ना ॥ सो ज्ञाता० ॥ २ ॥ अंखय अनन्ती सम्पति विलसै, भव-तन-भोग-

१ अक्षय ।

भगन ना । द्यानत ता ऊपर वलिहारी, सोई " जीवन मुकत" भना ॥ सो ज्ञाता० ॥ ३ ॥

१० । राग—केदारो ।

सुन मन! नेमिजीके वैन ॥ टेक ॥ कुमतिनासन ज्ञानभासन, सुखकरन दिन रैन ॥ सुन० ॥ १ ॥ वचन सुनि वहु होंहिं चक्री, वहु लहैं पद मैंन[1] । इंद चंद फनिंद पद लैं, शुद्ध आतम ऐन ॥ सुन० ॥ २ ॥ वैन सुन वहु मुकत पहुँचे, वचन विनु एकै न । हैं अनक्षर रूप अक्षर, सव सभा सुखदैन ॥ सुन० ॥ ३ ॥ प्रगट लोक अलोक सव किय, हरिय मिथ्या-सैन । वचन सरधा करौ द्यानत, ज्यों लहौ पद चैन ॥ सुन० ॥ ४ ॥

११ । राग—मल्हार ।

काहेको सोचत अति भारी, रे मन! ॥ टेक ॥ पूरव करमनकी थित वाँधी, सो तो टरत न टारी काहे० ॥ १ ॥ सव दरवनिकी तीन कालकी, विधि न्यारीकी न्यारी । केवलज्ञानविषैं प्रतिभासी, सो सो है है सारी ॥ काहे० ॥ २ ॥ सोच किये वहु वंध वढ़त हैं, उपजत है दुख ख्वारी । चिंता चिता समान वखानी, वुद्धि करत है कारी ॥ काहे० ॥ ३ ॥

---

1 कामदेव ।

रोग सोग उपजत चिंतातैं, कहौ कौन गुनवारी । द्यानत अनुभव करि शिव पहुँचे, जिन चिंता सव जारी ॥ काहे० ॥ ४ ॥

१२ । राग–केदारो ।

रे जिय ! जनम लाहो[1] लेह ॥ टेक ॥ चरन ते जिन भवन पहुँचैं, दान दैं कर जेह ॥ रे जिय० ॥१॥ उर[2] सोई जामैं दया है, अरु रुधिरको गेह । जीभ सो जिन नाम गावै, सांचसौं करै नेह ॥ रे जिय० ॥ २ ॥ आंख ते जिनराज देखैं, और आँखैं खेह । श्रवन ते जिनवचन सुनि शुभ, तप तपै सो देह ॥ रे जिय० ॥ ३ ॥ सफल तन इह भांति ह्वै है, और भांति न केह । ह्वै सुखी मन राम ध्यावो, कहैं सदगुरु येह ॥ रे जिय० ॥ ४ ॥

१३ ।

चल देखैं प्यारी, नेमि नवल व्रतधारी ॥ टेक ॥ रोग दोप विन शोभन[3] मूरति, मुकतिनाथ अविकारी ॥ चल० ॥ १ ॥ क्रोध विना किमि करम विनाशैं, यह अचरज मन भारी ॥ चल० ॥ २ ॥ वचन अनक्षर सव जिय समझैं, भापा न्यारी न्यारी ॥ चल० ॥ ३ ॥ चतुरानन[4] सव खलक[5] विलोकैं, पूरव मुख प्रभुका री

---

१ लाभ । २ हृदय । ३ सुहावनी । ४ चार मुख । ५ जगत ।

॥ चल० ॥ ४ ॥ केवलज्ञान आदि गुण प्रगटे, नेकु न मान किया री ॥ चल० ॥ ५ ॥ प्रभुकी महिमा प्रभु न कहि सकैं, हम तुम कौन विचारी ॥ चल० ॥ ६ ॥ द्यानत नेमिनाथ विन आली, कह मोकों को तारी ॥ चल० ॥ ७ ॥

१४ । राग—सोरठ कड़खा ।

रुल्यो चिरकाल, जगजाल चहुँगति विषें, आज जिनराज-तुम शरन आयो ॥ टेक ॥ सह्यो दुख घोर, नहिं छोर आवै कहत, तुमसौं कछु छिप्यो नहिं तुम बतायो ॥ रुल्यो० ॥ १ ॥ तु ही संसारतारक नहीं दूसरो, ऐसो मुह भेद न किन्ही सुनायो ॥ रुल्यो० ॥ २ ॥ सकल सुर असुर नरनाथ वंदत चरन, नाभिनन्दन निपुन मुनिन ध्यायो ॥ रुल्यो० ॥ ३ ॥ तु ही अरहन्त भगवन्त गुणवन्त प्रभु, खुले मुझ भाग अब दरश पायो ॥ रुल्यो० ॥ ४ ॥ सिद्ध हौं शुद्ध हौं बुद्ध अविरुद्ध हौं, ईश जगदीश बहु गुणनि गायो ॥ रुल्यो० ॥ ५ ॥ सर्व चिन्ता गई बुद्धि निर्मल भई, जब हि चित जुगलचरननि लगायो ॥ रुल्यो० ॥ ६ ॥ भयो निहचिन्त द्यानत चरन शर्न गहि, तार अब नाथ तेरो कहायो ॥ रुल्यो० ॥ ७ ॥

१५ । राग—मल्हार ।

जगतमें सम्यक उत्तम भाई ॥ टेक ॥ सम्यकसहित प्रधान नरकमें, धिक शठ सुरगति पाई ॥ जगत० ॥ १ ॥ श्रावकव्रत मुनिव्रत जे पालैं, ममता बुधि अधिकाई । तिनतैं अधिक असंजमचारी, जिन आतम लव लाई ॥ जगत० ॥ २ ॥ पंच-परावर्तन तैं कीने, बहुत बार दुखदाई । लख चौरासि स्वांग धरि नाच्यौ, ज्ञानकला नहिं आई ॥ जगत० ॥ ३ ॥ सम्यक बिन तिहुँ जग दुखदाई, जहँ भावै तहँ जाई । द्यानत सम्यक आतम अनुभव, सद्गुरु सीख बताई ॥ जगत० ॥४॥

१६ । राग—गौड़ी ।

भाई ! अब मैं ऐसा जाना ॥ टेक ॥ पुद्गल दरब अचेतन भिन्न है, मेरा चेतन बाना ॥ भाई० ॥ १ ॥ कलप[1] अनन्त सहत दुख बीते, दुखकौं सुख कर माना । सुख दुख दोऊ कर्म अवस्था, मैं कर्मनतैं आना[2] ॥भाई० ॥ २ ॥ जहाँ भोर था तहाँ भई निशि, निशिकी ठौर बिहाना । भूल मिटी निजपद पहिचाना, परमानन्द-निधाना ॥ भाई० ॥ ३ ॥ गूंगे का गुड़ खाँय कहैं किमि, यद्यपि स्वाद पिछाना । द्यानत जिन देख्या ते जानैं, मेंडक हंस पखाना[3] ॥ भाई० ॥ ४ ॥

---

१ कल्पकाल । २ अन्य, निराला । ३ कहावत । मेंडक और हंसकी लोकोक्ति ।

१७ । राग—ख्याल ।

आतम जान रे जान रे जान ॥ टेक ॥ जीवनकी इच्छा करै, कबहुँ न मांगै काल । (प्राणी !) सोई जान्यो जीव है, सुख चाहै दुख टाल ॥ आतम० ॥१॥ नैन वैनमें कौन है, कौन सुनत है बात । (प्राणी) देखत क्यों नहिं आपमें, जाकी चेतन जात ॥ आतम० ॥ २ ॥ बाहिर ढूंढ़ै दूर है, अंतर निपट नजीक । (प्राणी !) ढूंढनवाला कौन है, सोई जानो ठीक ॥ आतम० ॥ ३ ॥ तीन भवनमें देखिया, आतम सम नहिं कोय । (प्राणी !) द्यानत जे अनुभव करैं, तिनकौं शिवसुख होय ॥ आतम० ॥ ४ ॥

१८ । राग—सोरठा ।

मन ! मेरे राग भाव निवार ॥ टेक ॥ राग चिक्कनतैं लगत है कर्मधूलि अपार ॥ मन० ॥ १ ॥ राग आस्रव मूल है, वैराग्य संवर धार । जिन न जान्यो भेद यह, वह गयो नरभव हार ॥ मन० ॥ २ ॥ दान पूजा शील जप तप, भाव विविध प्रकार । राग विन शिव सुख करत हैं, रागतैं संसार ॥ मन० ॥ ३ ॥ वीतराग कहा कियो, यह बात प्रगट निहार । सोइ कर सुखहेत द्यानत, शुद्ध अनुभव सार ॥ मन० ॥ ४ ॥

१९ । राग—रामकली ।

हम न किसीके कोई न हमारा, झूठा है जगका ब्यो-हारा ॥ टेक ॥ तनसंबंधी सब परवारा, सो तन हमने जाना न्यारा ॥ हम० ॥ १ ॥ पुन्य उदय सुखका बढ़वा-रा, पाप उदय दुख होत अपारा । पाप पुन्य दोऊ संसारा, मैं सब देखन जाननहारा ॥ हम० ॥ २ ॥ मैं तिहुँ जग तिहुँ काल अकेला, पर संजोग भया बहु मेला । थिति पूरी करि खिर खिर जांहीं, मेरे हर्ष शोक कछु नाहीं ॥ हम न० ॥ ३ ॥ राग भावतैं सज्जन मानैं, दोष भावतैं दुर्जन जानैं । राग दोष दोऊ मम नाहीं, द्यानत मैं चेतनपदमाहीं ॥ हम न० ॥ ४ ॥

२० । राग—पंचम ।

भम्यो जी भम्यो, संसार महावन, सुख तो कबहुँ न पायो जी ॥ टेक ॥ पुदगल जीव एक करि जान्यो, भेद-ज्ञान न सुहायो जी ॥ भम्यो० ॥ १ ॥ मनवचकाय जीव संहारे, झूठो वचन बनायो जी । चोरी करके हरप बढ़ायो, विपयभोग गरवायो जी ॥ भम्यो० ॥२॥ नरकमाहिं छेदन भेदन बहु, साधारण बसि आयो जी । गरभ जनम नरभव दुख देखे, देव मरत विललायो जी ॥ भम्यो० ॥ ३ ॥ द्यानत अब जिनवचन सुनै मैं,

१ घाते । २ साधारण वनस्पति ।

भवमल पाप वहायो जी । आदिनाथ अरहन्त आदि-गुरु, चरनकमल चित लायो जी ॥ भस्यो० ॥ ४ ॥

२१ । राग—रामकली ।

जियको लोभ महा दुखदाई, जाकी शोभा (?)वरनी न जाई ॥ टेक ॥ लोभ करै मूरख संसारी, छांड़ै प-ण्डित शिव अधिकारी ॥ जियको० ॥ १ ॥ तजि घर-वास फिरै वनमाहीं, कनक कामिनी छांड़ै नाहीं । लोक रिझावनको व्रत लीना, व्रत न होय ठगाई सा कीना ॥ जियको० ॥ २ ॥ लोभवशात जीव हत डारै, झूठ बोल चोरी चित धारै । नारि गहै परिग्रह विसतारै, पांच पाप कर नरक सिधारै ॥ जियको ॥ ३ ॥ जोगी जती गृही वनवासी, वैरागी दरवेश[1] सन्यासी । अजस खान जसकी नहिं रेखा, द्यानत जिनकै लोभ विशे-खा[2] ॥ जियको० ॥ ४ ॥

२२ ।

रे मन ! भज भज दीनदयाल ॥ टेक ॥ जाके नाम लेत इक छिनमैं, कटैं कोट अघजाल ॥ रे मन० ॥१॥ परमब्रह्म परमेश्वर स्वामी, देखैं होत निहाल । सुमरन करत परम सुख पावत, सेवत भाजै काल ॥ रे मन० ॥ २ ॥ इंद फनिंद चक्री[3]धर गावैं, जाको नाम रसाल ।

---

१ फकीर । २ विशेषता । ३ चक्रवर्ती ।

जाको नाम ज्ञान परगासै, नाशै मिथ्याजाल ॥ रे मन० ॥ ३ ॥ जाके नाम समान नहीं कछु, ऊरध मध्य पताल। सोई नाम जपो नित द्यानत, छांड़ि विषय विकराल ॥ रे मन० ॥ ४ ॥

२३।

तुम प्रभु कहियत दीनदयाल ॥ टेक ॥ आपन जाय मुकतमैं बैठे, हम जु रुलत जगजाल ॥ तुम० ॥ १ ॥ तुमरो नाम जपैं हम नीके, मन वच तीनौं काल। तुम तो हमको कछू देत नहिं, हमरो कौन हवाल ॥ तुम० ॥ २ ॥ बुरे भले हम भगत तिहारे, जानत हो हम चाल। और कछू नहिं यह चाहत हैं, राग दोषकौं टाल ॥ तुम० ॥ ३ ॥ हमसौं चूक परी सो बकसो[1], तुम तो कृपाविशाल। द्यानत एक बार प्रभु जगतैं, हमको लेहु निकाल ॥ तुम० ॥ ४ ॥

२४। राग—ख्याल।

मैं नेमिजीका बंदा, मैं साहबजीका बंदा ॥ टेक ॥ नैंन चकोर दरसको तरसैं, स्वामी पूरनचंदा ॥ मैं नेमिजी० ॥ १ ॥ छहौं दरबमें सार बतायो, आतम आनँदकन्दा। ताको अनुभव नित प्रति कीजे, नासै सब दुख दंदा ॥ मैं नेमिजी ॥ २ ॥ देत धरम उपदेश

---

१ बख्शो साफ करो।

भविक प्रति, इच्छा नाहिं करंदा । राग दोप मद मोह नहीं नहिं, क्रोध लोभ छल छंदा ॥ मैं नेमिजी० ॥ ३ ॥ जाको जस कहि सकैं न क्योंही, इंद फनिंद नरिन्दा । सुमरन भजन सार है द्यानत, और वात सव धंदा ॥ मैं नेमिजी० ॥ ४ ॥

२५ ।

मैं निज आतम कव ध्याऊंगा ॥ टेक ॥ रागादिक परिनाम त्यागकै, समतासौं लौ लाऊंगा ॥ मैं निज० ॥ १ ॥ मन वच काय जोग थिर करकै, ज्ञान समाधि लगाऊंगा । कव हौं[1] खिपकश्रेणि[2] चढ़ि ध्याऊं, चारित मोह नशाऊंगा ॥ मैं निज० ॥ २ ॥ चारों करम घातिया खय[3] करि, परमातम पद पाऊंगा । ज्ञान दरश सुख वल भंडारा, चार अघाति वहाऊंगा ॥ मैं निज० ॥ ३ ॥ परम निरंजन सिद्ध शुद्धपद, परमानंद कहाऊंगा । द्यानत यह सम्पति जव पाऊं, वहुरि न जगमें आऊंगा ॥ मैं निज० ॥ ४ ॥

२६ ।

अरहंत सुमर मन वावरे ! ॥ टेक ॥ ख्याति[4] लाभ पूजा तजि भाई, अन्तर प्रभु लौ लाव रे ॥ अरहंत० ॥१॥ नरभव पाय अकारथ खोवै, विपय भोग जु वढ़ाव रे ।

---

१ मैं । २ क्षपकश्रेणी । ३ नाशकर । ४ यश, कीर्ति ।

प्राण गये पछितैहै मनवा, छिन छिन छीजै आव[1] रे ॥ अरहंत० ॥ २ ॥ जुवती[2] तन धन सुत मित[3] परिजन[4], गज तुरंग रथ चाव रे । यह संसार सुपनकी माया, आंख मीचि दिखराव रे ॥ अरहंत० ॥ ३ ॥ ध्याव ध्याव रे अब है दावरे, नाहीं मंगल गाव रे । द्यानत बहुत कहां लौं कहिये, फेर न कछू उपाव रे ॥ अरहंत० ॥ ४ ॥

२७।

वन्दौ नेमि उदासी, मद मारिवेकौं ॥ टेक ॥ रजमतसी जिन नारी छाँरी, जाय भये वनवासी ॥ वन्दौं० ॥ १ ॥ हय गय रथ पायक सब छांड़े, तोरी ममता फाँसी । पंच महाव्रत दुद्धर धारे, राखी प्रकृति पचासी ॥ वन्दौं० ॥ २ ॥ जाकै दरसन ज्ञान विराजत, लहि वीरज सुखरासी । जाकौं वंदत त्रिभुवन-नायक, लोकालोकप्रकासी ॥ वन्दौं० ॥ ३ ॥ सिद्ध शुद्ध परमातम राजैं, अविचल थान निवासी । द्यानत मन अलि[5] प्रभु पद-पंकज, रमत रमत अघ जांसी[6] ॥ वन्दौं० ॥ ४ ॥

२८ ।

आतम अनुभव कीजै हो ॥ टेक ॥ जनम जरा अरु मरन नाशकै, अनत काल लौं जीजै हो ॥ आतम०

---

१ आयु । २ स्त्री । ३ मित्र । ४ नौकरचाकर । ५ भ्रमर । ६ नाश होगा ।

॥ १ ॥ देव धरम गुरुकी सरधा करि, कुगुरु आदि तज दीजै हो। छहौं दरव नव तत्त्व परखकै, चेतन सार गहीजै हो॥ आतम० ॥ २ ॥ दरव करम नो करम भिन्न करि, सूक्षमदृष्टि धरीजै हो। भाव करमतैं भिन्न जानिकै, बुधि विलास न करीजै हो॥ आतम० ॥ ३ ॥ आप आप जानै सो अनुभव, द्यानत शिवका दीजै हो। और उपाय बन्यो नाहिं बनि है, करै सो दक्ष कहीजै हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥

२९।

कर रे! कर रे! कर रे!, तू आतम हित कर रे ॥ टेक ॥ काल अनन्त गयो जग भमतैं, भव भवके दुख हर रे॥ कर रे० ॥ १ ॥ लाख कोटि भव तपस्या करतैं, जितो कर्म तेरो जर रे। स्वास उस्वासमाहिं सो नासै, जब अनुभव चित धर रे॥ कर रे० ॥ २ ॥ काहे कष्ट सहै वन माहीं। राग दोष परिहर[1] रे। काज होय समभाव विना नाहिं, भावौ[2] पचि पचि मर रे॥ कर रे ॥ ३ ॥ लाख सीखकी सीख एक यह, आतम निज, पर पर रे। कोट ग्रंथको सार यही है, द्यानत लख भव तर रे॥ कर रे ॥ ४ ॥

---

१ त्याग। २ चाहे।

३० । राग—मल्हार ।

परमगुरु वरसत ज्ञान झरी ॥ टेक ॥ हरपि हरषि बहु गरजि गरजिकै, मिथ्यातपन हरी ॥ परमगुरु०॥१॥ सरधा भूमि सुहावनि लागै, संशय बेल हरी। भविजनमनसरवर भरि उमड़े, समुझि पवन सियरी ॥ परमगुरु० ॥ २ ॥ स्यादवाद नय बिजली चमकै, पर-मत-शिखर परी । चातक मोर साधु श्रावकके, हृदय सुभक्ति भरी ॥ परमगुरु० ॥ ३ ॥ जप तप परमानन्द बढ़्यो है, सुसमय नींव धरी । द्यानत पावन पावस आयो, थिरता शुद्ध करी ॥ परमगुरु०॥ ४ ॥

३१ । राग—काफी ।

अब हम आतमको पहचाना जी ॥ टेक ॥ जैसा सिद्धक्षेत्रमें राजत, तैसा घटमें जाना जी ॥ अब हम० ॥१॥ देहादिक परद्रव्य न मेरे, मेरा चेतन बाना जी ॥ अब हम० ॥ २ ॥ द्यानत जो जानै सो स्याना, नहिं जानैं सो दिवाना[1] जी ॥ अब हम० ॥ ३ ॥

३२ ।

मेरी वेर कहा ढील करी जी ॥ टेक ॥ सूलीसों सिंघासन कीनो, सेठ सुदर्शन विपति हरी जी ॥ मेरी वेर० ॥१॥ सीता सती अगनिमैं पैठी, पावक[2] नीर

१ पागल । २ अग्नि ।

करी सगरी जी । वारिषेणपै खड़ग चलायो, फूल-माल कीनी सुथरी जी ॥ मेरी वेर० ॥ २ ॥ धन्यां[1] वापी पस्यो निकाल्यो, ता घर रिद्ध अनेक भरी जी । सिरीपाल सागरतैं तास्यो, राजभोगकै मुकत वरी जी ॥ मेरी वेर० ॥३॥ सांप कियो फूलनकी माला, सोमापर तुम दया धरी जी । द्यानत मैं कछु जाँचत नाहीं, कर वैराग्य दशा हमरी जी ॥ मेरी वेर० ॥ ४ ॥

३३ ।

जिनके हिरदै भगवान वसैं, तिन आनका ध्यान किया न किया ॥ टेक ॥ चक्री एक मिलाप भयेतैं, और नर न मिलिया मिलिया ॥ जिनके० ॥ १ ॥ इक चिन्तामणि वांछितदायक, और नगं[2] न गहिया गहिया । पारस एक कनी[3] कर आवै, और धन न लहिया लहिया ॥ जिनके० ॥ २ ॥ एक भान[4] दश दिशि उजियारा, और ग्रह न उदिया उदिया । एक कल्प-तरु सब सुखदाता, और तरु न उगिया उगिया ॥ जिनके० ॥३॥ एक अभय महा दान देयके, और सुदान दिया न दिया । द्यानत ज्ञानसुधारस चाख्यो, अम्रत और पिया न पिया ॥ जिनके० ॥ ४ ॥

---

१ धन्यकुमार । २ रत्न । ३ टुकड़ा । ४ सूरज ।

३४। राग—परज।

माई! आज आनंद कछु कहे न बनै ॥टेक॥ नाभिराय मरुदेवी-नंदन, ब्याह उछाह त्रिलोक भनै ॥ माई०॥१॥ सीस मुकट गल माल अनूपम, भूपन वसनन को बरनै ॥ माई० ॥ २ ॥ गृह सुखकार रतनमय कीनों, चौंरी मंडप सुरगननै ॥ माई० ॥ ३ ॥ द्यानत धन्य सुनंदा-कन्या, जाको आदीश्वर परनै ॥ माई० ॥ ४ ॥

३५। राग—परज।

माई! आज आनंद हैं या नगरी ॥ टेक ॥ गज-गमनी शशि-वदनी तरुनी, मंगल गावत हैं सिगरी ॥ १ ॥ माई० ॥ नाभिरायघर पुत्र भयो है, किये हैं अजाचक जाचक री ॥ २ ॥ माई० ॥ द्यानत धन्य कूँख मरुदेवी, सुर सेवत जाके पँग री ॥ ३ ॥ माई० ॥

३६।

जिनके हिरदै प्रभुनाम नहीं तिन, नर अवतार लिया न लिया ॥ टेक ॥ दान विना घर-वास वासकै, लोभ-मलीन धियों न धिया ॥ जिनके० ॥ १ ॥ मदिरापान कियो घट अन्तर, जल मल सोधि पिया न पिया। आन प्रानके मांस भखेतैं, करुनाभाव हिया न हिया ॥ जिनके० ॥ २ ॥ रूपवान गुनखान वानि शुभ, शील-

---

१ कंठमें। २ चन्द्रमुखी। ३ चरण। ४ बुद्धि। ५ हृदय।

विहीन तिया[1] न तिया । कीरतवंत मृतक जीवत हैं, अपजसवंत जिया न जिया ॥ जिनके० ॥ ३ ॥ धाममाहिं कछु दाम न आये, बहु व्योपार किया न किया । द्यानत एक विवेक किये बिन, दान अनेक दिया न दिया ॥ जिनके० ॥ ४ ॥

३७ ।

विपतिमें धर धीर, रे नर ! विपतिमें धर धीर ॥टेक॥ सम्पदा ज्यों आपदा रे !, विनश जै है वीर ॥ रे नर० ॥१॥ धूप छाया घटत बढ़ै ज्यों, त्योंहि सुख दुख पीर ॥ रे नर० ॥ २ ॥ दोष द्यानत देय किसको, तोरि करम-जँजीर ॥ रे नर० ॥ ३ ॥

३८ ।

गुरु समान दाता नहिं कोई ॥ टेक ॥ भानु-प्रकाश न नाशत जाको, सो अँधियारा डारै खोई ॥ गुरु०॥ १ ॥ मेघसमान सबनपै बरसै, कछु इच्छा जाके नहिं होई । नरक पशूगति आगमांहितैं, सुरग मुकत सुख थापै सोई ॥ गुरु० ॥ २ ॥ तीन लोक मन्दिरमें जानौ, दीपकसम परकाशक-लोई । दीपतलैं अँधियार भर्यो है, अंतर बहिर विमल है जोई ॥ गुरु० ॥ ३ ॥ तारन तरन जिहाज सुगुरु हैं, सब कुटुम्ब डोबै जग-

---

१ त्रिया—स्त्री ।

तोई। द्यानत निशिदिन निरमल मनमें, राखो गुरु-पद-पंकज दोई ॥ गुरु० ॥ ४ ॥

३९ ।

आतम अनुभव करना रे भाई ॥ टेक ॥ जबलों भेद-ज्ञान नहिं उपजै, जनम मरन दुख भरना रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ आतम पढ़ नव तत्त्व बखानै, व्रत तप संजम धरना रे। आतम-ज्ञान बिना नहिं कारज, जोनी-संकट परना रे ॥ भाई० ॥२॥ सकल-ग्रंथ दीपक हैं भाई, मिथ्यातमके हरना रे। कहा करैं ते अंध पुरुपको, जिन्हैं उपजना मरना रे ॥ भाई० ॥३॥ द्यानत जे भवि सुख चाहत हैं, तिनको यह अनुसरना रे। "सोहं" ये दो अक्षर जपकैं, भव-जल-पार उतरना रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥

४० ।

धनि ते साधु रहत वनमाहीं ॥ टेक ॥ शत्रु मित्र सुख दुख सम जानें, दरसन देखत पाप पलाहीं ॥ धनि० ॥ १ ॥ अट्ठाईस मूलगुण धारैं, मन वच काय चपलता नाहीं। ग्रीषम शैल-शिखा हिमें तटिनी, पावस वरषा अधिक सहाहीं ॥ धनि० ॥ २ ॥ क्रोध मान

---

१ श्रद्धना, मानना। २ भाग जावें। नाश होवें। ३ गर्मीकी ऋतुमें। ४ शिखर। ५ ठंडमें। ६ नदीके तट।

छल लोभ न जानैं, राग दोष नाहीं उनपाहीं । अमल अखंडित चिद्गुणमंडित, ब्रह्मज्ञानमें लीन रहाहीं ॥ धनि० ॥ ३ ॥ तेई साधु लहैं केवलपद, आठ-काठ दह शिवपुर जाहीं । द्यानत भवि तिनके गुण गावैं, पावैं शिवसुख दुःख नसाहीं ॥ धनि० ॥ ४ ॥

४१ ।

अब हम आतमको पहिचान्यौ ॥ टेक ॥ जबहीसेती मोह सुभट बल, खिनक एकमें भान्यौ ॥ अब० ॥ १ ॥ राग-विरोध-विभाव भजे झर, ममता भाव पलान्यौ । दरसन ज्ञान चरनमें चेतन, भेदरहित परवान्यौ ॥ अब० ॥ २ ॥ जिहि देखैं हम अवर न देख्यो, देख्यो सो सरधान्यौ । ताकौ कहो कहैं कैसें करि, जा जानै जिन जान्यौ ॥ अब० ॥ ३ ॥ पूरब भाव सुपनवत देखे, अपनो अनुभव तान्यौ । द्यानत ता अनुभव स्वादत ही, जनम सफल करि मान्यौ ॥ अब० ॥ ४ ॥

४२ ।

हमको प्रभु श्रीपास सहाय ॥ टेक ॥ जाके दरसन देखत जब ही, पातक जाय पलाय ॥ हमको० ॥ १ ॥ जाको इंद फनिंद चक्रधर, वंदैं सीस नवाय । सोई

---

१ आत्मीक । २ अष्टकर्मरूपी ईंधन । ३ जिस समयसे । ४ झड़कर, निर्जरा होकर । ५ पाप ।

स्वामी अन्तरजामी, भव्यनिको सुखदाय॥ हमको०॥२॥ जाके चार घातिया बीते, दोष जु गये विलाय। सहित अनन्त चतुष्टय साहब, महिमा कही न जाय॥ हमको० ॥ ३ ॥ तकि या बड़ो मिल्यो है हमको, गहि रहिये मन लाय। द्यानत औसर बीत जायगो, फेर न कछू उपाय ॥ हमको० ॥ ४ ॥

४३।

ज्ञानी ज्ञानी ज्ञानी, नेमिजी! तुम ही हो ज्ञानी ॥टेक॥ तुम्हीं देव गुरु तुम्हीं हमारे, सकल दरब जानी ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ तुम समान कोउ देव न देख्या, तीन भवन छानी। आप तरे भविजीवनि तारे, ममता नहिं आनी ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ और देव सब रागी द्वेषी, कामी कै मानी। तुम हो वीतराग अकषायी, तजि राजुल रानी॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ यह संसार दुःख ज्वाला तजि, भये मुकतथानी। द्यानतदास निकास जगतैं, हम गरीब प्रानी ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥

४४।

देख्या मैंने नेमिजी प्यारा ॥ टेक ॥ मूरति ऊपर करों निछावर, तन धन जीवन जोबन सारा ॥ देख्या० ॥ १ ॥ जाके नखकी शोभा आगैं, कोटि काम छवि डारों वारा। कोटि संख्य रवि चन्द छिपत हैं, वपुकी

द्युति है अपरंपारा ॥ देख्या० ॥२॥ जिनके वचन सुनें जिन भविजन, तजि गृह मुनिवरको व्रत धारा । जाको जस इन्द्रादिक गावैं, पावैं सुख नासैं दुख भारा ॥ देख्या० ॥३॥ जाके केवलज्ञान विराजत, लोकालोक प्रकाशन हारा । चरन गहेकी लाज निवाहो, प्रभुजी द्यानत भगत तुम्हारा ॥ देख्या ॥ ४ ॥

४५ ।

आतमरूप अनूपम है, घटमाहिं विराजै हो ॥ टेक ॥ जाके सुमरन जापसों, भव भव दुख भाजै हो ॥ आतम० ॥ १ ॥ केवल दरसन ज्ञानमैं, थिरतापद छाजै हो । उपमाको तिहुँ लोकमें, कोऊ वस्तु न राजै हो ॥ आतम० ॥ २ ॥ सहै परीषह भार जो, जु महाव्रत साजै हो । ज्ञान विना शिव ना लहै, बहुकर्म उपाजै[1] हो ॥ आतम० ॥ ३ ॥ तिहूँ लोक तिहुँ कालमें, नहिं[2] और इलाजै हो । द्यानत ताकों जानिये, निज स्वारथ-काजै हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥

४६ ।

नहिं ऐसो जनम बारंबार ॥ टेक ॥ कठिन कठिन लह्यो मनुष भव, विषय भजि मति हार ॥ नहिं० ॥१॥ पाय चिन्तामन रतन शठ, छिंपत[3] उदधिमँझार । अंध

---

१ उपार्जित करै, कमावै । २ नहीं । ३ फैंकता है ।

हाथ बटेर आई, तजत ताहि गँवार ॥ नहिं० ॥ २ ॥
कबहुँ नरक तिरजंच कबहूँ, कबहुँ सुरगविहार । जगत-
महिं चिरकाल भमियो, दुलभ नर अवतार ॥ नहिं०
॥ ३ ॥ पाय अम्रत पाँय धोवै, कहत सुगुरु पुकार ।
तजो विषय कषाय द्यानत, ज्यों लहो भवपार ॥ नहिं०
॥ ४ ॥

४७ ।

तू तो समझ समझ रे! भाई ॥ टेक ॥ निशिदिन
विषय भोग लपटाना, धरम वचन न सुहाई ॥ तू तो०
॥ १ ॥ कर मनका[1] लै आसन मास्यो, वाहिज लोक
रिझाई । कहा भयो बक-ध्यान धरेतैं, जो मन थिर
न रहाई ॥ तू तो० ॥ २ ॥ मास मास उपवास किये
तैं, काया बहुत सुखाई । क्रोध मान छल लोभ न
जीत्या, कारज कौन सराई ॥ तू तो० ॥ ३ ॥ मन
वच काय जोग थिर करकैं, त्यागो विषयकषाई ।
द्यानत सुरग मोख सुखदाई, सद्गुरु सीख बताई ॥
तू तो० ॥ ४ ॥

४८ ।

घटमें परमातम ध्याइये हो, परम धरम धनहेत ।
ममता बुद्धि निवारिये हो, टारिये भरम निकेत ॥ घटमें०
॥ १ ॥ प्रथमहिं अशुचि निहारिये हो, सात धातुमय

---

१ मालाके गुरिया ।

देह । काल अनन्त सहे दुख जानैं, ताको तजो अब नेह ॥ घटमें० ॥ २ ॥ ज्ञानावरनादिक जमरूपी, निजतैं भिन्न निहार । रागादिक परनति लख न्यारी, न्यारो सुबुध विचार ॥ घटमें० ॥ ३ ॥ तहाँ शुद्ध आतम निरविकलप, ह्वै करि तिसको ध्यान । अलप कालमें घाँति[1] नसत हैं, उपजत केवलज्ञान ॥ घटमें० ॥ ४ ॥ चार अघाति नाशि शिव पहुँचे, विलसत सुख जु अनन्त । सम्यकदरसनकी यह महिमा, द्यानत लह भव अन्त ॥ घटमें० ॥ ५ ॥

४९ ।

समझत क्यों नहिं वानी, अज्ञानी जन ॥ टेक ॥ स्यादवाद-अंकित सुखदायक, भाषी केवलज्ञानी ॥ समझत० ॥ १ ॥ जास लखैं निरमल पद पावै, कुमति कुगतिकी हानी । उदय भया जिहिमें परगासी, तिहि जानी सरधानी ॥ समझत० ॥ २ ॥ जामें देव धरम गुरु वरनें, तीनौं मुकतिनिसानी । निश्चय देव धरम गुरु आतम, जानत विरला प्रानी ॥ समझत० ॥ ३ ॥ या जगमाहिं तुझे तारनको, कारन नाव बखानी । द्यानत सो गहिये निहचैसों, हूजे ज्यों शिवथानी ॥ समझत० ॥ ४ ॥

---

१ घातिया कर्म ।

५० ।

धिक ! धिक ! जीवन समकित विना ॥ टेक ॥ दान शील तप व्रत श्रुतपूजा, आतम हेत न एक गिना ॥ धिक० ॥ १ ॥ ज्यों विनु कंन्त[1] कामिनी शोभा, अंबुज[2] विनु सरवर ज्यों सुना । जैसे विना एकड़े[3] विन्दी, त्यों समकित विन सरव गुना ॥ धिक० ॥ २ ॥ जैसे भूप विना सव सेना, नींव विना मंदिर चुनना । जैसे चन्द विहूनी[4] रजनी[5], इन्हें आदि जानो निपुना ॥ धिक० ॥ ३ ॥ देव जिनेन्द्र, साधु गुरु, करुना, धर्मराग व्योहार भना । निहचै देव धरम गुरु आतम, द्यानत गहि मन वचन तना ॥ धिक० ॥ ४ ॥

५१ । गुजरातीभाषा–गीत ।

जीवा ! शूं[6] कहिये तंनें[7] भाई ॥ टेक ॥ पोतानूं[8] रूप अनूप तजीनें[9], शामाटें[10] विपयी थाई[11] ॥ जीवा० ॥ १ ॥ इन्द्रीना विषय विषथकी मोटा, ज्ञाननू अम्रत गाई । अमृत छोड़ीनें विपय विप पीधा, साता तो नथी पोई[12] ॥ जीवा० ॥ २ ॥ नरक निगोदना दुख सह आव्यो, वळी[13] तिहनें[14] मग धाई । एहवी[15] बात रूड़ी[16] न छै तमनें,

---

१ पति, भर्तार । २ कमल । ३ एक (१) का अंक । ४ रहित । ५ रात्रि । ६ क्या । ७ तुझे । ८ अपना । ९ तज करके । १० किसलिये । ११ हुआ । १२ नहीं प्राप्त हुई । १३ पुनः । १४ उसी । १५ ऐसी । १६ अच्छी ।

तीन भवनना राई ॥ जीवा० ॥ ३ ॥ लाख बातनी बात एस छै, सूंकीनै[1] विपयकपाई । द्यानत ते वारैं सुख लाधौ, एस गुरू समझाई ॥ जीवा० ॥ ४ ॥

५२ । राग—मल्हार ।

ज्ञान सरोवर सोई हो भविजन ॥ टेक ॥ भूमि छिमा करुना मरजादा, सम[2]-रस जल जहँ होई ॥ भविजन० ॥ १ ॥ परनति लहर हरख जलचर बहु, नय-पंकति परकारी । सम्यक कमल अष्टदल गुण हैं, सुमन भँवर अधिकारी ॥ भविजन० ॥ २ ॥ संजम शील आदि पल्लव हैं, कमला सुमति निवासी । सुजस सुवास कमल परिचयतैं, परसत भ्रम तप नासी ॥ भविजन० ॥ ३ ॥ भव-मल जात न्हात भविजनका, होत परम सुख साता । द्यानत यह सर और न जानैं, जानैं विरला ज्ञाता ॥ भविजन० ॥ ४ ॥

५३ ।

जीव! तैं मूढ़पना कित पायो ॥ टेक ॥ सब जग स्वारथको चाहत है, स्वारथ तोहि न भायो ॥ जीव० ॥ १ ॥ अशुचि अचेत दुष्ट तनमांहीं, कहा जान विरमायो । परम अतिन्द्री निजसुख हरिकै, विपय रोग लपटायो ॥ जीव० ॥ २ ॥ चेतन नाम भयो जड़ काहे,

---

१ त्यागकर । २ समता ।

अपनो नाम गमायो । तीन लोकको राज छांड़िकै, भीख मांग न लजायो ॥ जीव० ॥ ३ ॥ मूढ़पना मिथ्या जब छूटै, तब तू संत कहायो । द्यानत सुख अनन्त शिव विलसो, यों सदगुरु बतलायो ॥ जीव० ॥ ४ ॥

५४ । राग–सारंग ।

हम लागे आतमरामसों ॥ टेक ॥ विनाशीक पुद्-गलकी छाया, कौन रमै धनमानसों ॥ हम० ॥ १ ॥ समता सुख घटमें परगास्यो, कौन काज है कामसों । दुविधा-भाव जलांजुलि दीनौं, मेल भयो निज स्वामसों ॥ हम० ॥ २ ॥ भेदज्ञान करि निज परि देख्यौ, कौन विलोकै चामसौं । उरै[1] परैकी[2] बात न भावै, लौ लाई गुणग्रामसों ॥ हम० ॥ ३ ॥ विकलप भाव रंक सब भाजे, झरि चेतन अभिरामसों । द्यानत आतम अनुभव करिकै, छूटे भव दुखधामसों ॥ हम० ॥ ४ ॥

५५ ।

प्रभु अब हमको होहु सहाय ॥ टेक ॥ तुम विन हम बहु जुग दुख पायो, अब तो परसे पाँय ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ तीन लोकमें नाम तिहारो, है सबको सुख-दाय । सोई नाम सदा हम गावैं, रीझ जाहु पतियाय प्रभु० ॥ २ ॥ हम तो नाथ कहाये तेरे, जावें कहां सु

---

१ नजीक । २ दूर ।

बताय । बाँह गहेकी लाज निबाहौ, जो हो त्रिभुवन-राय ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ द्यानत सेवकने प्रभु इतनी, वि-नती करी बनाय । दीनदयाल दया धर मनमें, जमतैं लेहु बचाय ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

५६ ।

बसि संसारमें मैं, पायो दुःख अपार ॥ टेक ॥ मिथ्याभाव हिये धर्यो नहिं, जानों सम्यकचार[1] ॥ बसि० ॥ १ ॥ काल अनादि हि हौं[2] रुल्यौ हो, नरक निगोदमँझार । सुर नर पद बहुते धरे पद, पद प्रति आतम धार ॥ बसि० ॥ २ ॥ जिनको फल दुख-पुंज है हो, ते जानें सुखकार । भ्रम मद पीय विकल भयो नहिं, गह्यो सत्य व्योहार ॥ बसि० ॥ ३ ॥ जिन-बानी जानी नहीं हो, कुगति-विनाशनहार । द्यानत अब सरधा करी दुख, मेटि लह्यो सुखसार ॥ बसि० ॥ ४ ॥

५७ ।

धनि धनि ते मुनि गिरिवनवासी ॥ टेक ॥ मार[3] मार जगजार[4] जारते, द्वादश व्रत तप अभ्यासी ॥ धनि० ॥ १ ॥ कौड़ी लाल[5] पास नहिं जाके, जिन छेदी आ-सापांसी[6] । आतम-आतम, पर-पर जानैं, द्वादश तीन प्रकृति नासी ॥ २ ॥ जा दुख देख दुखी सब जग है,

---

१ चारित्र । २ मैं । ३ कामदेव । ४ जाल । ५ रत्न । ६ फांसी ।

सो दुख लख सुख है तासी । जाकों सब जग सुख मानत है, सो सुख जान्यो दुखरासी ॥ धनि० ॥ ३ ॥ बाहज भेष कहत अंतर गुण, सत्य मधुर हितमित-भासी । द्यानत ते शिवपंथपथिक हैं, पांवें परंत पातक जासी ॥ धनि० ॥ ४ ॥

५८ । राग—कल्याण (सर्व लघु)

कहत सुगुरु करि सुहित भविकजन ! ॥ टेक ॥ पुद्गल अधरम धरम गगनजम, सब जड़ मम नहिं यह सुमरहु मन ॥ कहत० ॥ १ ॥ नर पशु नरक अमर पर पद लखि, दरव करम तन करम पृथक भन । तुम पद अमल अचल विकलप बिन, अजर अमर शिव अभय अखय गन ॥ कहत० ॥ २ ॥ त्रिभुवनपतिपद तुम पटतर नहिं, तुम पद अतुल न तुल रविशशिगन । वचन कहन मन गहन शकति नहिं, सुरत गमन निज निज गम परनन ॥ कहत० ॥ ३ ॥ इह विधि बँधत खुलत इह विधि जिय, इन विकलपमहिं शिवपद सधँत न । निरविकलप अनुभव मन सिधि करि, करम सघन बनदहन दहँन-कन ॥ कहत० ॥ ४ ॥

---

१ चरण । २ नमत । ३ नाश होवेंगे । ४ अलग । ५ सिद्ध होता । ६ नाश करनेको । ७ अग्नि कण ।

५९ ।

हो भैया मोरे ! कहु कैसें सुख होय ॥ टेक ॥ लीन कषाय अधीन विषयके, धरम करै नहिं कोय ॥ हो भैया० ॥ १ ॥ पाप उदय लखि रोवत भोंदू !, पाप तजै नहिं सोय । स्वान-वान ज्यों पाहन सूंघै, सिंह हनै रिपु जोय ॥ हो भैया० ॥ २ ॥ धरम करत सुख दुख अघसेती, जानत हैं सब लोयं । कर दीपक लै कूप परत है, दुख पैहै भव दोयं । हो भैया० ॥३॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म भुलायो, देव धरम गुरु खोय । उलट चाल तजि अब सुलटै जो, द्यानत तिरै जग-तोयं ॥ भैया० ॥ ४ ॥

६० ।

प्रभु मैं किहि विधि थुति करौं तेरी ॥ टेक ॥ गणधर कहत पार नहिं पावैं, कहा बुद्धि है मेरी ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ शक्र जनम भरि सहस जीभ धरि, तुम जस होत न पूरा । एक जीभ कैसैं गुण गावै, उलू कहै किमि सूरा ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ चमर छत्र सिंघासन वरनों, ये गुण तुमतैं न्यारे । तुम गुण कहन वचन वल नाहीं, नैन गिनैं किमि तारे ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

---

१ आदत । २ से । ३ लोग । ४ पाओगे । ५ दोनों भव । ६ संसाररूपी जल । ७ इंद्र । ८ उल्लूपक्षी । ९ सूर्य ।

६१।

भज श्रीआदिचरन मन मेरे, दूर होंय भव भव दुख तेरे ॥ टेक ॥ भगति विना सुख रंच न होई, जो ढूंढै तिहुँ जगमें कोई ॥ भज० ॥ १ ॥ प्रान-पयान-समय[1] दुख भारी, कंठविषैं कफकी अधिकारी। तात मात सुत लोग घनेरा, ता दिन कौन सहाई तेरा ॥ भज० ॥ २ ॥ तू वसि चरण चरण तुझमाहीं, एकमेक है दुविधा नाहीं। तातैं जीवन सफल कहावै, जनम जरा-मृत पास न आवै ॥ भज० ॥ ३ ॥ अब ही अवसर फिर जम घेरैं, छांड़ि लरक-बुध[2] सदगुरु टेरैं। द्यानत और जतन कोउ नाहीं, निरभय होय तिहूँ जगमाहीं ॥ भज० ॥ ४ ॥

६२।

प्राणी लाल! धरम अगाऊ[3] धारौ ॥ टेक ॥ जबलौं धन जोवन हैं तेरे, दान शील न विसारौ ॥ प्राणी० ॥ १ ॥ जबलौं करपद दिढ़ हैं तेरे, पूजा तीरथ सारौ। जीभ नैन जबलौं हैं नीके, प्रभु गुन गाय निहारौ ॥ प्राणी० ॥ २ ॥ आसन श्रवन सबल हैं तोलौं, ध्यान शब्द सुनि धारौ। जरा न आवै गद[4] न सतावै, संजम परउपकारौ ॥ प्राणी० ॥ ३ ॥ देह शिथिल मति वि-

१ निकलते समय। २ वालबुद्धि। ३ पहले। ४ वीमारी।

कल न तौलौं, तप गहि तत्त्व विचारौ । अन्तसमाधि-पोत[1] चढ़ि अपनो, द्यानत आतम तारौ ॥ प्राणी० ॥४॥

६३ । राग–सोरठ ।

नेमि नवल देखैं चल री । लहैं मनुप भवको फल री ॥ टेक ॥ देखनि जात जात दुख तिनको, भान[2] जथा तम-दल दल री । जिन उर नाम बसत हैं जिनको, तिनको भय नहिं जल थल री ॥ नेमि० ॥१॥ प्रभुके रूप अनूपम ऊपर, कोट काम कीजे वैल[3] री । समोसरनकी अदभुत शोभा, नाचत शक्र सची रल री ॥ नेमि० ॥ २ ॥ भोर उठत पूजत पद प्रभुके, पातक भजत सकल टल री । द्यानत सरन गहौ मन! ताकी, जै हैं भवबंधन गल री ॥ नेमि० ॥ ३ ॥

६४ ।

भवि! पूजौ मन वच श्रीजिनन्द, चितचकोर सुख-करन इंद[4] ॥ टेक ॥ कुमतिकुमुदिनीहरनसूर[5], विघन-सघनवनदहन[6] भूर ॥ भवि० ॥ १ ॥ पाप उरग[7] प्रभु नाम मोर, मोह-महा-तम दलन भोर ॥ भवि० ॥ २ ॥ दुख-दालिद-हर अनर्घ-रैन[8], द्यानत प्रभु दैं परम चैन ॥ भवि० ॥ ३ ॥

---

१ जहाज । २ सूरज । ३ न्योछावर । ४ चन्द्रमा । ५ सूरज । ६ अग्नि । ७ सर्प । ८ निर्दोष रत्न ।

६५।

मगन रहु रे! शुद्धातममें मगन रहु रे ॥ टेक ॥ रागदोष परकी उतपात, निहचै शुद्ध चेतनाजात ॥ मगन० ॥ १ ॥ विधि निषेधको खेद निवारि, आप आपमें आप निहारि ॥ मगन० ॥ २ ॥ बंध मोक्ष विकल्प करि दूर, आनँदकन्द चिदातम सूर ॥ मगन० ॥ ३ ॥ दरसन ज्ञान चरन समुदाय, द्यानत ये ही मोक्ष उपाय ॥ मगन० ॥ ४ ॥

६६।

आतम जानो रे भाई! ॥ टेक ॥ जैसी उज्जल आरसी[1] रे, तैसी आतम जोत। काया-करमनसों जुदी रे, सबको करै उदोत ॥ आतम० ॥ १ ॥ शयन दशा जाग्रत दशा रे, दोनों विकलपरूप। निरविकलप शुद्धातमा रे, चिदानंद चिद्रूप ॥ आतम० ॥ २ ॥ तन वचसेती भिन्न कर रे, मनसों निज लौं लाय। आप आप जब अनुभवै रे, तहां न मन वच काय ॥ आतम० ॥ ३ ॥ छहौं दरव नव तत्त्वतैं रे, न्यारो आतमराम। द्यानत जे अनुभव करैं रे, ते पावैं शिवधाम ॥ आतम० ॥ ४ ॥

६७।

दरसन तेरा मन भावै ॥ दरसन० ॥ टेक ॥ तुमकौं

---

१ दर्पण।

देखि त्रिपति नहिं सुरपति, नैन हजार बनावै ॥ दरसन० ॥ १ ॥ समोसरनमें निरखै सचिपति, जीभ सहस गुन गावै । कोड़ कामको रूप छिपत है, तेरो दरस सुहावै ॥ दरसन० ॥ २ ॥ आँख लगै अंतर है तो भी, आनँद उर न समावै । ना जानों कितनों सुख हरिको, जो नहिं पलक लगावै ॥ दरसन० ॥ ३ ॥ पाप नासकी कौन बात है, द्यानत सम्यक पावै । आसन ध्यान अनूपम स्वामी, देखैं ही बन आवै ॥ दरसन० ॥ ४ ॥

६८ ।

री ! मेरे घट ज्ञान घनागम छायो ॥ री० ॥ टेक ॥ शुद्ध भाव बादल मिल आये, सूरज मोह छिपायो ॥ री० ॥ १ ॥ अनहद घोर घोर गरजत है, भ्रम आताप मिटायो । समता चपला चमकनि लागी, अनुभौ-सुख झर लायो ॥ री० ॥ २ ॥ सत्ता भूमि बीज समकितको, शिवपद खेत उपायो । उद्धत (?) भाव सरोवर दीसै, मोर सुमन हरपायो ॥ री० ॥ ३ ॥ भव-प्रदेशतैं बहु दिन पीछैं, चेतन पिय घर आयो । द्यानत सुमति कहै सखियनसों, यह पावस मोहि भायो ॥ री० ॥ ४ ॥

६९ ।

हो स्वामी ! जगत जलधितैं तारो ॥ हो० ॥ टेक ॥

---

१ इन्द्र । २ इन्द्रको ।

मोह मच्छ अरु काम कच्छतैं, लोभ लहरतैं उवारो ॥ हो० ॥ १ ॥ खेद खारजल दुख दावानल, भरम भँवर भय टारो ॥ हो० ॥ २ ॥ द्यानत वार वार यौं भाषै, तू ही तारनहारो ॥ हो० ॥ ३ ॥

७०। राग—वसन्त।

मोहि तारो हो देवाधिदेव, मैं मनवचतनकरि करौं सेव ॥ टेक ॥ तुम दीनदयाल अनाथनाथ, हमहूको राखो आप साथ ॥ मोह० ॥ १ ॥ यह मारवाड़ संसार देश, तुम चरनकलपतरु हर कलेश ॥ मोह० ॥ २ ॥ तुम नाम रसायन जीय पीय, द्यानत अजरामर भव त्रितीय ॥ मोह० ॥ ३ ॥

७१। राग—केदारो।

रे जिय! क्रोध काहे करै ॥ टेक ॥ देखकै अविवेकि प्रानी, क्यों विवेक न धरै ॥ रे जिय० ॥ १ ॥ जिसे जैसी उदय आवै, सो क्रिया आचरै। सहज तू अपनो बिगारै, जाय दुर्गति परै ॥ रे जिय० ॥ २ ॥ होय संगति-गुन सबनिकों, सरब जग उच्चरै। तुम भले कर भले सबको, बुरे लखि मति जरै ॥ रे जिय० ॥ ३ ॥ वैद्य परविप हर सकत नाहिं, आप भखि को मरै। बहु कषाय निगोद-वासा, छिमा द्यानत तरै ॥ रे जिय० ॥४॥

१ इस पदमें दो पद्धरी छन्द हैं। २ स्वभाव।

७२ ।

फूली वसन्त जहँ[1] आदीसुर शिवपुर गये ॥ टेक ॥ भारतभूप बहत्तर जिनगृह, कनकमयी सब निरमये[2] ॥ फूली० ॥ १ ॥ तीन चौवीस रतनमय प्रतिमा, अंग रंग जे जे भये । सिद्ध समान सीस सम सबके, अद्भुत शोभा परिनये ॥ फूली० ॥ २ ॥ बालि आदि आहूठ[3] कोड़ मुनि, सबनि मुकति सुख अनुभये । तीन अठाई फागनि (?) खग मिल, गावैं गीत नये नये ॥ फूली० ॥३॥ वसुं[4] जोजन वसु पैड़ी (?) गंगा, फिरी बहुत सुरआलये । द्यानत सो कैलास नमौं हौं, गुन कापै[5] जा[6] वरनये ॥ फूली० ॥ ४ ॥

७३ ।

तुम ज्ञानविभव फूली वसन्त, यह मन मधुकर[7] सुखसों रमन्त ॥ टेक ॥ दिन बड़े भये वैराग भाव, मिथ्यामत रजनीको[8] घटाव ॥ तुम० ॥ १ ॥ बहु फूली फैली सुरुचि वेलि, ज्ञाताजन समता संग केलि ॥ तुम० ॥ २ ॥ द्यानत वानी पिक[9] मधुररूप, सुरनरपशु-आनँदघनसुरूप ॥ तुम० ॥ ३ ॥

---

१ जहां (कैलाशगिरिपर) । २ बनवाये । ३ साढ़े तीन कोटि । ४ आठ । ५ किससे । ६ जावें । ७ भ्रमर । ८ रात्रि । ९ कोयल ।

७४।

ज्ञानी जीव-दया नित पालैं ॥ टेक ॥ आरँभतैं पर-घात होत है, क्रोध घात निज टालैं ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ हिंसा त्यागि दयाल कहावै, जलै कषाय वदनमें । बाहिर त्यागी अन्तर दागी, पहुँचै नरकसदनमें[1] ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ करै दया कर आलस भावी, ताको कहिये पापी । शांत सुभाव प्रमाद न जाकै, सो परमारथ-व्यापी ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ शिथिलाचार निरुद्यम[2] रहना, सहना बहु दुख भ्राता । द्यानत बोलन डोलन जीमनैं[3], करैं जतनसों ज्ञाता ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥

७५।

कारज एक ब्रह्महीसेती ॥ टेक ॥ अंग संग नाहिं बहिरभूत सब, धन दारा[4] सामग्री तेती ॥ कारज० ॥ १ ॥ सोल सुरग नव ग्रैविकमें दुख, सुखित सातमें[5] ततका[6] वेती । जा शिवकारन मुनिगन ध्यावैं, सो तेरे घट आनँदखेती ॥ कारज० ॥ २ ॥ दान शील जप तप व्रत पूजा, अफल ज्ञान विन किरिया केती । पंच दरब तोतैं नित न्यारे, न्यारी रागदोष विधि जेती ॥ कारज० ॥ ३ ॥ तू अविनाशी जगपरकासी, द्यानत भासी

---

१ नरकरूपी घरमें । २ उद्योगहीन । ३ भोजन, भक्षण । ४ स्त्री । ५ सातवें नरकमें । ६ तत्त्वका जाननेवाला ।

मुकलावेती । तजौ लाल! मनके विकलप सब, अनुभव-मगन सुविधा एती ॥ कारज० ॥ ४ ॥

७६ ।

चेतन खेलै होरी ॥ टेक ॥ सत्ता भूमि छिमा वसन्तमें, समता प्रानप्रिया सँग गोरी ॥ चेतन० ॥ १ ॥ मनको माट प्रेमको पानी, तामें करुना केसर घोरी। ज्ञान ध्यान पिचकारी भरिभरि, आपमें छोरै होरा होरी ॥ चेतन० ॥ २ ॥ गुरुके वचन मृदंग वजत हैं, नय दोनों डफ ताल टकोरी । संजम अतर विमल व्रत चोवा, भाव गुलाल भरै भर झोरी ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ धरम मिठाई तप बहु मेवा, समरस आनँद अमल कटोरी। द्यानत सुमति कहै सखियनसों, चिरजीवो यह जुगजुग जोरी ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

७७ ।

भोर[1] भयो भज श्रीजिनराज, सफल होंहिं तेरे सब काज ॥ टेक ॥ धन सम्पत मनवांछित भोग, सब विधि आन बनैं संजोग ॥ भोर० ॥ १ ॥ कलपवृच्छ ताके घर रहै, कामधेनु नित सेवा वहै। पारस चिन्तामनि समुदाय, हितसों आय मिलैं सुखदाय ॥ भोर० ॥ २ ॥ दुर्लभतैं सुलभ्य है जाय, रोग सोग दुख दूर पलाय । सेवा देव करैं मन लाय, विघन उलट मंगल

---

१ इस पदकी सब तुकें १५ मात्राकी चौपाई होती हैं ।

ठहराय ॥ भोर० ॥ ३ ॥ डाँयन भूत पिशाच न छलै, राजचोरको जोर न चलै । जस आदर सौभाग्य प्रकास, द्यानत सुरग मुकतिपदवास ॥ भोर० ॥ ४ ॥

७८ ।

आयो सहज वसन्त खेलैं सब होरी होरा ॥ टेक ॥ उत बुधि दया छिमा बहु ठाढ़ीं, इत जिय रतन सजै गुन जोरा ॥ आयो० ॥ १ ॥ ज्ञान ध्यान डफ ताल बजत हैं, अनहद शब्द होत घनघोरा । धरम सुराग गुलाल उड़त हैं, समता रंग दुहूंने घोरा ॥ आयो० ॥ २ ॥ परसन[1] उत्तर भरि पिचकारी, छोरत दोनों करि करि जोरा । इततैं[2] कहैं नारि तुम काकी[3], उततैं[4] कहैं कौनको छोरा[5] ॥ आयो० ॥ ३ ॥ आठ काठ अनुभव पावकमें, जल बुझ शांत भई सब ओरा । द्यानत शिव आनन्दचन्द छबि, देखैं सज्जन नैन चकोरा ॥ आयो० ॥ ४ ॥

७९ ।

अजितनाथसों मन लावो रे ॥ टेक ॥ करसों ताल वचन मुख भाषों, अर्थमें चित्त लगावो रे ॥ अजित० ॥ १ ॥ ज्ञान दरस सुख बल गुनधारी, अनन्त चतुष्टय ध्यावो रे । अवगाहना अबाध अमूरत, अगुरु अलघु

१ प्रश्न । २ इधरसे । ३ किसकी ? । ४ उधरसे । ५ लड़का ।

बतलावो रे ॥ अजित० ॥ २ ॥ करुनासागर गुनरत-नांगर, जोतिउजागर आवो रे । त्रिभुवननायक भव-भयघायक, आनँददायक गावो रे ॥ अजित० ॥ ३ ॥ परमनिरंजन पातकभंजन, भविरंजन ठहरावो रे । द्यानत जैसा साहिब सेवो, तैसी पदवी पावो रे ॥ अजित० ॥ ४ ॥

८० । राग–आसावरी ।

अब हम अमर भये न मरैंगे ॥ टेक ॥ तन-कारन मिथ्यात दियो तज, क्यों करि देह धरैंगे ॥ अब० ॥ १ ॥ उपजै मरै कालतैं प्रानी, तातैं काल हरैंगे । राग दोष जग बंध करत हैं, इनको नाश करैंगे ॥ अब० ॥ २ ॥ देह विनाशी मैं अविनाशी, भेदज्ञान पकरैंगे । नासी जासी हम थिरवासी, चोखे हो निखरैंगे ॥ अब० ॥ ३ ॥ मरे अनन्त बार बिन समझैं, अब सब दुख बिसरैंगे । द्यानत निपट निकट दो अक्षर[3], बिन सुमरैं सुमरैंगे ॥ अब० ॥ ४ ॥

८१ । राग–आसावरी ।

भाई ! ज्ञानी सोई कहिये ॥ टेक ॥ करम उदय सुख दुख भोगतैं, राग विरोध न लहिये ॥ भाई० ॥ १ ॥ कोऊ ज्ञान क्रियातैं कोऊ, शिवमारग बतलावै ।

१ रत्नोंकी खानि । २ शुद्धचिदानंद । ३ "आतमा" ।

नय निहचै विवहार साधिकै, दोऊ चित्त रिझावै ॥ भाई० ॥ २ ॥ कोई कहै जीव छिनभंगुर, कोई नित्य बखानै । परजय दरवित नय परमानै, दोऊ समता आनै ॥ भाई० ॥ ३ ॥ कोई कहै उदय है सोई, कोई उद्यम बोलै । द्यानत स्यादवाद सुतुलामें, दोनों वस्तैं तोलै ॥ भाई० ॥ ४ ॥

८२ । राग—आसावरी ।

भाई! कौन धरम हम पालैं ॥ टेक ॥ एक कहैं जिहि कुलमें आये, ठाकुरको कुल गा लैं ॥ भाई० ॥१॥ शिवमत बौध सु वेद नयायक, मीमांसक अरु जैना । आप सराहैं आगम गाहैं, काकी सरधा ऐना ॥ भाई० ॥ २ ॥ परमेसुरपै हो आया हो, ताकी बात सुनी जै । पूछैं बहुत न बोलैं कोई, बड़ी फिकर क्या कीजै ॥ भाई० ॥ ३ ॥ जिन सब मतके मत संचय करि, मारग एक बताया । द्यानत सो गुरु पूरा पाया, भाग हमारा आया ॥ भाई० ॥ ४ ॥

८३ । राग—गौरी ।

हमारो कारज कैसें होय ॥ टेक ॥ कारण पंच मुकति मारगके, तिनमेंके हैं दोय ॥ हमारो० ॥ १ ॥ हीन संघनन लघु आयूपा, अल्प मनीषा जोय । कच्चे

---

१ उत्तम तराजूमें । २ वस्तुएँ । ३ किसकी । ४ बुद्धि ।

भाव न सब्वे साथी, सब जग देख्यो टोय ॥ हमारो० ॥ २ ॥ इंद्री पंच सुविषयनि दौरैं, मानैं कह्या न कोय । साधारन[1] चिरकाल वस्यो मैं, धरम विना फिर सोय ॥ हमारो० ॥ ३ ॥ चिन्ता बड़ी न कछु बनि आवै, अब सब चिन्ता खोय । द्यानत एक शुद्ध निजपद लखि, आपमें आप समोय ॥ हमारो० ॥ ४ ॥

८४ । राग—गौरी ।

हमारो कारज ऐसें होय ॥ टेक ॥ आतम आतम पर पर जानैं, तीनौं संशय खोय ॥ हमारो० ॥ १ ॥ अंत समाधिमरन करि तन तजि, होय शक्र[2] सुरलोय विविध भोग उपभोग भोगवै, धरमतनों फल सोय ॥ हमारो० ॥ २ ॥ पूरी आयु विदेह भूप ह्वै, राज सम्पदा भोय[3] । कारण पंच लहै गहै दुद्धर, पंच महाव्रत जोय ॥ हमारो० ॥ ३ ॥ तीन जोग थिर सहै परीसह, आठ करम मल धोय । द्यानत सुख अनन्त शिव विलसै, जनमैं मरै न कोय ॥ हमारो० ॥ ४ ॥

८५ । राग—गौरी ।

देखो ! भाई श्रीजिनराज विराजैं ॥ टेक ॥ कंचन-मनिमय सिंहपीठपर, अन्तरीछ[4] प्रभु छाजैं ॥ देखो० ॥ १ ॥ तीन छत्र त्रिभुवन जस जंपैं, चौंसठि चमर

---

१ साधारण वनस्पति । २ इन्द्र । ३ भोगकर । ४ अधर निरालंब ।

समाजैं । बानी जोजन घोर मोर सुनि, डर अहि[1] पातक भाजैं ॥ देखो० ॥ २ ॥ साड़े बारह कोड़ दुंदुभी, आदिक बाजे बाजैं । वृक्ष अशोक दिपत भामण्डल, कोड़ि सूर[2] शशि लाजैं ॥ देखो० ॥ ३ ॥ पहुपवृष्टि जलकन मंद पवन, इंद्र सेव नित साजैं । प्रभु न बुलावैं द्यानत जावैं, सुरनर पशु निज काजैं ॥ देखो० ॥ ४ ॥

८६ । राग—गौरी ।

देखो भाई! आतमराम विराजै ॥ टेक ॥ छहों दरव नव तत्त्व ज्ञेय हैं, आप सुज्ञायक छाजै ॥ देखो० ॥ १ ॥ अर्हंत सिद्ध सूरि गुरु मुनिवर, पाचौं पद जिहिमाहीं । दरसन ज्ञान चरन तप जिहिमें, पटतर कोऊ नाहीं ॥ देखो० ॥ २ ॥ ज्ञान चेतना कहिये जाकी, बाकी पुदगलकेरी । केवलज्ञान विभूति जासुकै, आन विभौ भ्रमचेरी ॥ देखो० ॥ ३ ॥ एकेन्द्री पंचेन्द्री पुदगल, जीव अतिन्द्री ज्ञाता । द्यानत ताही शुद्ध दरवको जानपनो सुखदाता ॥ देखो० ॥ ४ ॥

८७ । राग—गौरी ।

अब मोहि तार लेहु महावीर ॥ टेक ॥ सिद्धारथनन्दन जगवंदन, पापनिकन्दन धीर ॥ अब० ॥ १ ॥ ज्ञानी ध्यानी दानी जानी, बानी गहर गँभीर । मोषके

1 सर्प । 2 सूर्य ।

कारन दोषनिवारन, रोषविदारन वीर ॥ अव० ॥ २ ॥
आनँदपूरत समतासूरत, चूरत आपद पीर । बालजती
दृढ़व्रती समकिती, दुखदावानलनीर ॥ अव० ॥ ३ ॥
गुन अनन्त भगवन्त अन्त नाहिं, शशि कपूर हिम[3] हीर ।
द्यानत एक हु गुन हम पावैं, दूर करैं भवभीर ॥ अव०
॥ ४ ॥

८८ । राग—गौरी ।

जय जय नेमिनाथ परमेश्वर ॥ टेक ॥ उत्तम पुरु-
षनिको अति दुर्लभ, बालशीलधरनेश्वर ॥ जय० ॥ १ ॥
नारायन बहु भूप सेव करैं, जय अघतिमिरदिनेश्वर ।
तुम जस महिमा हम कहा जानै, भाखि न सकत
सुरेश्वर ॥ जय० ॥ २ ॥ इन्द्र सबै मिल पूजैं ध्यावैं, जय
भ्रमतपतनिशेश्वर । गुन अनन्त हम अन्त न पावैं,
वरन न सकत गनेश्वर[6] ॥ जय० ॥ ३ ॥ गणधर सकल
करैं थुति ठाढ़े, जय भव-जल-पोतेश्वर । द्यानत हम
छदमस्थ कहा कहैं, कह न सकत सरवेश्वर ॥ जय०
॥ ४ ॥

८९ । राग—गौरी ।

आदिनाथ तारन तरनं ॥ टेक ॥ नाभिरायमरुदेवी-
नन्दन, जनम अयोध्या अघहरनं ॥ आदि० ॥ १ ॥

---

१ क्रोध । २ मूर्ति । ३ बरफ । ४ सूर्य । ५ चंद्रमा । ६ गण-
धर । ७ श्रेष्ठजहाजसदृश ।

कलपवृच्छ गये जुगल दुखित भये, करमभूमि विधि सुखकरनं । अपछर नृत्य मृत्य लखि चेते, भव तन भोग जोग धरनं ॥ आदि० ॥ २ ॥ कायोत्सर्ग छंमास धर्यो दिढ़, वन खग मृग पूजत चरनं । धीरजधारी वरसअहारी, सहस वरस तप आचरनं ॥ आदि० ॥३॥ करम नासि परगासि ज्ञानको, सुरपति कियो समोसरनं । सब जन सुख दे शिवपुर पहुँचे, द्यानत भवि तुम पद शरनं ॥ आदि० ॥ ४ ॥

९० । राग—गौरी ।

सैली जयवन्ती यह हूजो ॥ टेक ॥ शिवमारगको राह बतावे, और न कोई दूजो ॥ सैली० ॥ १ ॥ देव धरम गुरु साँचे जानैं, झूठो मारग त्याग्यो । सैलीके परसाद हमारो, जिनचरनन चित लाग्यो ॥ सैली० ॥ २ ॥ दुख चिरकाल सह्यो अति भारी, सो अब सहज विलायो । दुरितहरन सुखकरन मनोहर, धरम पदारथ पायो ॥ सैली० ॥ ३ ॥ द्यानत कहै सकल सन्तनको, नित प्रति प्रभुगुन गावो । जैनधरम परधान ध्यानसौं, सब ही शिवसुख पावो ॥ सैली० ॥ ४ ॥

---

१ छह महीने । २ पक्षी । ३ प्रगटकर । ४ साधर्मियोंकी मण्डली । ५ पाप ।

९१ । राग—सोरठ ।

देखो! भेक[1] फूल लै निकस्यो, विन पूजा फल पायो ॥ टेक ॥ हरषित भाव मस्यो गजपगतल, सुरगत अमर कहायो ॥ देखो० ॥ १ ॥ मालिनि-सुता देहली पूजी, अपछर इन्द्र रिझायो । हाली चरुसों दृढ़व्रत पाल्यो, दारिद तुरत नसायो ॥ देखो० ॥ २ ॥ पूजा टहल करी जिन पुरुषनि, तिन सुरभवन वनायो । चक्री भरत नयौ[2] जिनवरको, अवधिज्ञान उपजायो ॥ देखो० ॥ ३ ॥ आठ दरव लै प्रभुपद पूजै, ता पूजन सुर आयो । द्यानत आप समान करत हैं, सरधासों सिर नायो ॥ देखो० ॥ ४ ॥

९२ । राग—सोरठ ।

भाई! आपन पाप कमाये आये, क्यों न परीसह सहिये ॥ टेक ॥ आगैं नूतन वंध रुकत है, पूरव करमनि दहिये ॥ भाई० ॥ १ ॥ न्यौति जिमाया जिनको चहिये, घर आये नाहिं गहिये । पर-वश तो सव जीव सहत हैं, स्ववश सहैं धनि[3] कहिये ॥ भाई० ॥ २ ॥ ऋणके दाम भेज घर दीजे, माँगैं क्यों ले रहिये । कोटिजनमतपदुर्लभ जे पद, ते पद सहज हिं लहिये ॥ भाई० ॥ ३ ॥ दोष दुष्ट धन लेहु लालची, प्रान जास

१ मेंडक । २ प्रणाम किया । ३ धन्य ।

वात कहूं चितमें जब आवै, तुम अन्तरकी जानौं।
दीनदयाल निकाल जगततैं, द्यानत दास पिछानौं॥
प्रभु०॥ ४॥

९३।

वंदे तू वंदगी कर याद॥ टेक॥ जिन कामोंमें तू लगा है, वे वातें सब वाद[1]॥ वंदे०॥ १॥ कौन तेरा तू है किसका, एकला सु अनाद। लोकरंजनके लिये ना, पड़ि करमके नाद॥ वंदे०॥२॥ भोजन आसन नींद सुदिढ़, छोड़ दे उनमाद[2]। संग त्याग सु सदा जाग रे, भज समाधीस्वाद॥ वंदे०॥ ३॥ जीवत मृत्यक हो रहा है, तजिये हरप विपाद। द्यानत ब्रह्मज्ञानसुख रमिये, ना करिये वकवाद॥ वंदे०॥ ४॥

९४।

वंदे! तू वंदगी ना भूल॥ टेक॥ चाहता है सुख पोपिवेको, यह तौ सूल उसूल॥ वंदे०॥ १॥ जो कोई तुझे सूल[3] वोवै, वो उसे तू फूल। तुझे फूलके फूल होंगे, उसे सूलके सूल॥ वंदे०॥ २॥ आया है क्या लेके वंदे, क्या ले जायगा धूल। कर खैरातं[4] साहिवके नामसे, पाप जलै ज्यों तूल॥ वंदे०॥ ३॥ एक साइत फरामोसन हूजै, सीख सुनो यह मूल। द्यानत पाक वेएव साहिवके, नामको कर कुवूल॥ वंदे॥ ४॥

---

१ वृथा। २ उन्मत्तता। ३ कांटे। ४ दान।

९५ ।

आतमरूप सुहावना, कोई जानै रे भाई । जाके जानत पाइये, त्रिभुवनठकुराई ॥ टेक ॥ मन इन्द्री न्यारे करौ, मन और विचारौ । विषय विकार सबै मिटैं, सहजैं सुख धारौ ॥ आतम० ॥ १ ॥ बाहिरतैं मन रोककैं, जब अन्तर आया । चित्त कमल सुलझ्यो तहाँ, चिन्मूरति पाया ॥ आतम० ॥ २ ॥ पूरक कुंभक रेचतैं, पहिलैं मन साधा । ज्ञान पवन मन एकता, भई सिद्ध समाधा ॥ आतम० ॥ ३ ॥ जिनि इहि विध मन वश किया, तिन आतम देखा । द्यानत मौनी व्है रहे, पाई सुखरेखा ॥ आतम० ॥ ४ ॥

९६ । राग—सोरठ ।

भाई! ज्ञानका राह दुहेला[1] रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ मैं ही भगत बड़ा तपधारी, ममता गृह झकझेला रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ मैं कविता सब कवि सिरऊपर, बानी पुद्गलमेला रे । मैं सब दानी माँगै सिर द्यौं, मिथ्याभाव सकेला रे ॥ भाई०॥२॥ मृतक देह वस फिर तन आऊं, मार जिवाऊं छेला रे । आप जलाऊं फेर दिखाऊं, क्रोध लोभतैं खेला रे॥ भाई० ॥ ३ ॥ वचन सिद्ध भाषै सोई है, प्रभुता बेलन बेला रे । द्यानत चंचल चित पारा थिर, करै सुगुरुका चेला रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥

---

१ कठिन—दुर्धर ।

९७

भाई ! ज्ञानका राह सुहेला रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ दरब न चहिये देह न दहिये, जोग भोग न नवेला रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ लड़ना नाहीं मरना नाहीं, करना बेला तेला रे। पढ़ना नाहीं गढ़ना नाहीं, नाच न गावन मेला रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ न्हाना नाहीं खांना नाहीं, नाहिं कमाना धेला रे । चलना नाहीं जलना नाहीं, गलना नाहीं देला रे ॥भाई० ॥ ३ ॥ जो चित चाहै सो नित दाहै, चाह दूर करि खेला रे । द्यानत यामें कौन कठिनता, बे परवाह अकेला रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥

९८ ।

प्रभु तेरी महिमा किहि मुख गावैं ॥ टेक ॥ गरभ छमास अगाउ कनक नग (?) सुरपति नगर बनावैं ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ क्षीर उदधि जल मेरु सिंहासन, मल मल इन्द्र न्हुलावैं । दीक्षा समय पालकी बैठो, इन्द्र कहार कहावैं ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ समोसरन रिध ज्ञान महातम, किहिविधि सरब बतावैं । आपन जातकी बात कहा शिव, बात सुनैं भवि जावैं ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ पंच कल्यानक थानक स्वामी, जे तुम मन वच ध्यावैं । द्यानत तिनकी कौन कथा है, हम देखैं सुख पावैं ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

---

१ सहज । २ स्नान करना । ३ अभिषेक करावैं ।

९९

प्रभु तेरी महिमा कहिय न जाय ॥ टेक ॥ थुति करि सुखी दुखी निंदातैं, तेरैं समता भाय ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ जो तुम ध्यावै थिर मन लावै, सो किंचित् सुख पाय । जो नहिं ध्यावै ताहि करत हो, तीन भवनको राय ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ अंजन चोर महाअपराधी, दियो स्वर्ग पहुँचाय । कथानाथ श्रेणिक समदृष्टी, कियो नरक दुखदाय ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ सेव असेव कहा चलै जियकी, जो तुम करो सु न्याय । द्यानत सेवक गुन गहि लीजै, दोप सबै छिटकाय ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

१०० । राग—विलावल ।

प्रभु तुम सुमरनहीमें तारे ॥ टेक ॥ सूअर सिंह नौल[1] वानरने, कहौ कौन व्रत धारे ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ सांप जाप करि सुरपद पायो, स्वान श्याल भय जारे । भेक[2] बोक[3] गज अमर कहाये, दुरगति भाव विदारे ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ भील चोर मातंग[4] जु गनिका, बहुतनिके दुख टारे । चक्री भरत कहा तप कीनौ, लोकालोक निहारे ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ उत्तम मध्यम भेद न कीन्हों, आये शरन उबारे । द्यानत राग दोष विन स्वामी, पाये भाग हमारे ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

---

१ न्योला । २ मेंडक । ३ वकरा । ४ चांडाल ।

१०१। राग—भैरों।

ऐसो सुमरन कर मेरे भाई, पवन थँभै मन कितहूँ न जाई॥ टेक॥ परमेसुरसों साँच रहीजै, लोकरंजना भय तज दीजै॥ ऐसो०॥ १॥ जंम[1] अरु नेम[2] दोउ विधि धारो, आसन प्राणायाम सँभारो। प्रत्याहार धारना कीजै, ध्यान-समाधि-महारस पीजै॥ ऐसो०॥ २॥ सो तप तपो वहुरि नहिं तपना, सो जप जपो वहुरि नहिं जपना। सो व्रत धरो वहुरि नहिं धरना, ऐसे मरो वहुरि नहिं मरना॥ ऐसो०॥ ३॥ पंच परावर्तन लखि लीजै, पांचों इन्द्रीको न पँतीजै[3]। द्यानत पांचों लच्छि लहीजै, पंच परम गुरु शरन गहीजै॥ ऐसो०॥४॥

१०२। राग—विलावल।

कहिवेकों मन सूरँमा[4], करवेकों काचा॥ टेक॥ विषय छुड़ावै औरपै, आपन अति माँचा[5]॥ कहिवे० मिश्री मिश्रीके कहैं, मुँह होय न मीठा। नीम कहैं मुख कटु हुआ, कहुँ सुना न दीठा[6]॥ कहिवे०॥ २॥ कहनेवाले वहुत हैं, करनेकों कोई। कथनी लोक-रिझावनी, करनी हित होई॥ कहिवे०॥ ३॥ कोड़ि जनम कथनी कथै, करनी विनु दुखिया। कथनी विनु करनी करै, द्यानत सो सुखिया॥ कहिवे०॥ ४॥

---

१ यम। २ नियम। ३ विश्वास कीजिये। ४ शूरवीर। ५ मग्न हुआ। ६ देखा।

१०३ । राग—विलावल ।

श्रीजिननाम अधार, सार भजि ॥ टेक ॥ अगम अतट संसार उदधितैं, कौन उतारै पार ॥ श्रीजिन० ॥ १ ॥ कोटि जनम पातक कटैं, प्रभु नाम लेत इक वार । ऋद्धि सिद्धि चरननिसों लागै, आनँद होत अपार ॥ श्रीजिन० ॥ २ ॥ पशु ते धन्य धन्य ते पंखी, सफल करैं अवतार । नाम विना धिक् मानवको[1] भव, जल वल ह्वै है छार ॥ श्रीजिन० ॥ ३ ॥ नाम समान आन नाहिं जग सब, कहत पुकार पुकार । द्यानत नाम तिहूँ-पन जपि लै, सुरगमुकतिदातार ॥ श्रीजिन० ॥ ४ ॥

१०४ ।

देखे सुखी सम्यकवान ॥ टेक ॥ सुख दुखको दुखरूप विचारैं, धारैं अनुभवज्ञान ॥ देखे० ॥ १ ॥ नरक सातमेंके दुख भोगैं, इन्द्र लखैं तिन-मान[2] । भीख मांगके उदर भरैं, न करैं चक्रीको ध्यान ॥ देखे० ॥ २ ॥ तीर्थंकर पदकों नाहिं चावैं, जदपि उदय अप्रमान । कुष्ट आदि बहु व्याधि दहत न, चहत मकरध्वज[3]-थान ॥ देखे० ॥ ३ ॥ आधि व्याधि निरवाध अनाकुल, चेतनजोति पुमान । द्यानत मगन सदा तिहिमाहीं, नाहीं खेद निदान ॥ देखे० ॥ ४ ॥

---

१ मनुष्यभव । २ तिनकेके वरावर । ३ कामदेव ।

१०५ ।

सब जगको प्यारा, चेतनरूप निहारा ॥ टेक॥ दरव भाव नो करम न मेरे, पुदगल दरव पसारा ॥ सब० ॥ १ ॥ चार कषाय चार गति संज्ञा, बंध चार परकारा। पंच वरन रस पंच देह अरु, पंच भेद संसारा ॥ सब० ॥ २ ॥ छहों दरव छह काल छलेश्या, छैमत[1] भेदतैं पारा । परिग्रह मारगना[2] गुन-थानक, जीवथानसों न्यारा ॥ सब० ॥ ३ ॥ दरसनज्ञानचरनगुनमण्डित, ज्ञायक चिह्न हमारा। सोऽहं सोऽहं और सु औरै, द्यानत निहचै धारा ॥ सब० ॥ ४ ॥

१०६ । राग—विहागरा ।

जो तैं आतमहित नहिं कीना ॥ टेक ॥ रामा[3] रामा धन धन कीना, नरभव फल नहिं लीना ॥ जो तैं० ॥ १ ॥ जप तप करकैं लोक रिझाये, प्रभुताके रस भीनाँ[4]। अंतर्गत परिनाम न सोधे, एको[5] गरज सरी[6] ना ॥ जो तैं० ॥ २ ॥ बैठि सभामें बहु उपदेशे, आप भये परवीना । ममता डोरी तोरी नाहीं, उत्तमतैं भये हीना ॥ जो तैं० ॥ ३ ॥ द्यानत मन वच काय लायके, जिन अनुभव चित दीना। अनुभव धारा ध्यान विचारा, मंदर कलश नवीना ॥ जो तैं० ॥ ४ ॥

---

१ षट्मत । २ मार्गणा । ३ स्त्री। ४ मगन होकर। ५ एक भी। ६ सिद्ध न हुई।

१०७ । राग—विलावल ।

ऋषभदेव जनम्यौ धन घरी ॥ टेक ॥ इन्द्र नचैं गंधर्व बजावैं, किन्नर वहु रस भरी ॥ ऋषभ० ॥ १ ॥ पट आभूषन पुहुपमालसों[1], सहसवाहु सुरतरु[2] व्है हरी। दश अवतार स्वांग विधि पूरन, नाच्यो शक्र[3] भगति उर धरी ॥ ऋषभ० ॥ २ ॥ हाथ हजार सबनिपै अपछर, उछरत नभमें चहुँदिशि फरी । करी करन अपछरी उछारत, ते सब नटैं गगनमें[4] खरी ॥ ऋषभ० ॥ ३ ॥ प्रगट गुपत भूपर अंवरमें[5], नाचैं सवै अमर[6] अमरी[7] । द्यानत घर चैत्यालय कीनौं, नाभिरायजी हो लहरी ॥ ऋषभ० ॥ ४ ॥

१०८ ।

मानुष जनम सफल भयो आज ॥ टेक ॥ सीस सफल भयो ईस[8] नमत ही, श्रवन सफल जिनवचन समाज ॥ मानुष० ॥ १ ॥ भाल[9] सफल जु दयाल तिलकतैं, नैन सफल देखे जिनराज । जीभ सफल जिनवानि गानतैं, हाथ सफल करि पूजन आज ॥ मानुष० ॥ २ ॥ पाँय[10] सफल जिन भौन गौनतैं[11], काय सफल नाचैं बल गाज । वित्त[12] सफल जो प्रभुकौं लागै, चित्त

---

१ फूलोंकी माला । २ कल्पवृक्ष । ३ इन्द्र । ४ आकाशमें । ५ आकाशमें । ६ देव । ७ देवाङ्गना । ८ ईश्वर, अरहन्तदेव । ९ ललाट । १० पांव । ११ जानेसे । १२ द्रव्य ।

सफल प्रभु ध्यान इलाज ॥ मानुष० ॥ ३ ॥ चिन्ता-मनि चिंतित-वर-दाई, कलपवृच्छ कलपनतैं काज । देत अचिंत अकल्प महासुख, द्यानत भक्ति गरीबनि-बाज ॥ मानुष० ॥ ४ ॥

१०९ । राग—ख्याल ।

री चल वंदिये चल वंदिये, री, महावीर जिनराय ॥ पाप निकन्दिये महावीर जिनराय, वारी वारी महिमा कहिय न जाय ॥ टेक ॥ विपुलाचल परवतपर आया, समवसरन बहु भाय ॥ री चलि० ॥ १ ॥ गौतमरिखंसे[1] गनधर जाके, सेवत सुरनर पाय ॥ री चल० ॥ २ ॥ बिल्ली मूसे गाय सिंहसों, प्रीति करै मन लाय ॥ री चल० ॥ ३ ॥ भूपतिसहित चेलना रानी, अंग अंग हुलसाय ॥ री चल० ॥ ४ ॥ द्यानत प्रभुको दरसन देखैं, सुरग मुकति सुखदाय ॥ री चल० ॥ ५ ॥

११० । राग—सारंग ।

मेरे मन कब ह्वै है वैराग ॥ टेक ॥ राज समाज अ-काज विचारौं, छारौं विषय कारे नाग ॥ मेरे० ॥ १ ॥ मंदिर वास उदास होयकैं, जाय वसौं वन बाग ॥ मेरे० ॥ २ ॥ कब यह आसा कांसा फूटै, लोभ भाव जाय भाग ॥ मेरे० ॥ ३ ॥ आप समान सबै जिय जा-

---

१ ऋषिसरीखे ।

नौं, राग दोषकों त्याग ॥ मेरे० ॥ ४ ॥ द्यानत यह विधि जब बनि आवै, सोई घड़ी बड़भाग ॥ मेरे० ॥५॥

१११ । राग—ख्याल ।

लागा आतमरामसों नेहरा ॥ टेक ॥ ज्ञानसहित मरना भला रे, छूट जाय संसार । धिक! परौ यह जीवना रे, मरना बारंबार ॥ लागा० ॥ १ ॥ साहिब साहिब मुंहतैं कहते, जानैं नाहीं कोई । जो साहिबकी जाति पिछानैं, साहिब कहिये सोई ॥ लागा० ॥ २ ॥ जो जो देखौ नैनोंसेती, सो सो विनसै जाई । देखनहारा मैं अविनाशी, परमानन्द सुभाई ॥ लागा० ॥३॥ जाकी चाह करैं सब प्रानी, सो पायो घटमाहीं । द्यानत चिन्तामनिके आये, चाह रही कछु नाहीं ॥ लागा० ॥ ४ ॥

११२ । राग—गौरी ।

सबको एक ही धरम सहाय ॥ टेक ॥ सुर नर नारक तिरयक् गतिमें, पाप महा दुखदाय ॥ सबको० ॥ १ ॥ गज हरि[1] दह अहि[2] रण गद[3] वारिधि[4], भूपति भीर पलाय । विघन उलटि आनन्द प्रगट ह्वै, दुलभ सुलभ ठहराय ॥ सबको० ॥ २ ॥ शुभतैं दूर बसत ढिग आवै, अघतैं करतैं जाय । दुखिया धर्म करत दुख नासै, सुखिया सुख अधिकाय ॥ सबको० ॥ ३ ॥ ताड़न

१ सिंह । २ सर्प । ३ बीमारी । ४ समुद्र ।

तापन छेदन कसना, कनकपरीच्छा भाय। द्यानत देव धरम गुरु आगम, परखि गहो मनलाय॥ सबको०॥४॥

११३। राग—गौरी।

तुमको कैसे सुख है मीत! ॥ टेक ॥ जिन विषयनि सँग बहु दुख पायो, तिनहीसों अति प्रीति॥ तुमको० ॥ १ ॥ उद्यमवान बाग[1] चलनेको, तीरथसों भयभीत। धरम कथा कथनेको मूरख, चतुर मृषा[2]-रस-रीत॥ तुमको० ॥ २ ॥ नाट[3] विलोकनमें बहु समझौ, रंच न दरस[4]-प्रतीत। परमागम सुन ऊंघन लागौ, जागौ विकथा गीत ॥ तुमको० ॥ ३ ॥ खान पान सुनके मन हरपै, संजम सुन है ईत। द्यानत तापर चाहत होगे, शिवपद सुखित निचीत[5] ॥ तुमको० ॥ ४ ॥

११४।

वीर! री पीर कासों कहिये॥ टेक॥ ध्रौव्य[6] अनूपम अचल मुकति गति, छांड़ि चहूँगति दुख क्यों सहिये ॥ वीर० ॥ १ ॥ चेतन अमल शरीर मलिन जड़, तासों प्रीति कहौ क्यों चहिये। अनुभव अम्रत[7] विषय विषम फल, त्यागि सुधारसँ विष क्यों गहिये॥ वीर० ॥ २ ॥ तिहुँ जगठाकुर रतनत्रयनिधि, चाकर

---

१ बगीचेकी शैर करनेको तयार। २ झूठ। ३ नाटक। ४ जिनदर्शन। ५ निश्चिन्त। ६ नित्य, स्थिर। ७ अमृत।

दीन भये क्यों रहिये । द्यानत पीर सुलटि प्रभु भेपज[1], रोम रोम आनँद लौं लहिये ॥ वीर० ॥ ३ ॥

११५ । राग—वसन्त ।

कहै रांघौ[2] सीता ! चलहु गेह ॥ टेक ॥ नैननिमें आय रह्यो सनेह ॥ कहै० ॥ १ ॥ हमऊपर तो तुम हो उदास, किन देखो सुतमुख चन्द्रभास ॥ कहै ॥ २ ॥ लछमन भामण्डल हनूं[3] आय, सब विनती करि लगि रहे पाय ॥ कहै० ॥ ३ ॥ द्यानत कछु दिन घर करो वास, पीछैं तप लीज्यो मोह नास ॥ कहै० ॥ ४ ॥

११६ । राग—वसन्त ।

कहै सीताजी सुनो रामचन्द ॥ टेक ॥ संसार महादुखवृच्छकन्द ॥ कहै० ॥ १ ॥ पंचेद्री भोग भुजंग जानि, यह देह अपावन रोगखानि ॥ कहै० ॥ ॥ २ ॥ यह राज रजमयी पापमूल, परिग्रह आरँभमें खिन न भूल ॥ कहै० ॥ ३ ॥ आपद सम्पद घर बंधु गेह, सुत संकल फाँसी नारि नेह ॥ कहै० ॥ ४ ॥ जिय रुल्यो निगोद अनन्त काल, विनु जानैं ऊरध मधि पाताल ॥ कहै० ॥ ५ ॥ तुम जानत करत न आप काज, अरु मोहि निषेधो क्यों न लाज ॥ कहै० ॥

---

१ दवाई । २ रघुवर, रामचन्द्र । ३ हनुमान् ।

॥ ६ ॥ तब केश उपारि सबै खिमाय[1], दीक्षा धरि कीन्हौं तप सुभाय ॥ कहैं० ॥ ७ ॥ द्यानत ठारै दिन ले सन्यास, भयो इन्द्र सोलहैं सुरग वास ॥ कहैं० ॥ ८ ॥

११७। राग—वसन्त।

भवि कीजे हो आतमसँभार ॥ टेक ॥ राग दोष परिनाम डार ॥ भवि० ॥ १ ॥ कौन पुरुष तुम कौन नाम, कौन ठौर करो कौन काम ॥ भवि० ॥ २ ॥ समय समयमें बंध होय, तू निचिन्त न वारै कोय ॥ भवि० ॥ ३ ॥ जब ज्ञान पवन मन एक होय, द्यानत सुख अनुभवै सोय ॥ भवि० ॥ ४ ॥

११८।

अपनो जानि मोहि तार ले, स्वामी शान्ति कुंथु अर[2] देव ॥ टेक ॥ अपनो जानकै भक्त पिछानकै, सुरपति कीनीं सेव ॥ कामदेव जिन चक्रवर्तिपद, तीन भोग स्वयमेव ॥ अपनो० ॥ १ ॥ तीन कल्यानक हथनापुरमें, गरभ जनम तप भेव। दशौं दिशा दश धर्म प्रकाश्यो, नास्यो अघ तम एव ॥ अपनो० ॥ २ ॥ सहस अठोतर नाम सुलच्छन, अच्छै[3] विना सुख वेव। द्यानतदास आस प्रभु तेरी, नास जनम मृतै[4] टेव ॥ अपनो० ॥ ३ ॥

---

१ क्षमा मांगकर। २ अरनाथ तीर्थंकर। ३ इन्द्रिय। ४ मरण।

११९।

जिनके भजनमें मगन रहु रे! ॥ टेक ॥ जो छिन खोवै वातनिमांहिं, सो छिन भजन करैं अघ जाहिं ॥ मगन० ॥ १ ॥ भजन भला कहतैं क्या होय, जाप जपैं सुख पावै सोय ॥ मगन० ॥ २ ॥ बुद्धि न चहिये तन दुख नाहिं, द्रव्य न लागै भजनकेमाहिं ॥ मगन० ॥३॥ षट दरसनमें नाम प्रधान, द्यानत जपैं वड़े धनमान ॥ मगन० ॥ ४ ॥

१२०।

भैया! सो आतम जानो रे! ॥ टेक ॥ जाके वसतैं वसत है रे, पाँचों इन्द्री गाँव। जास विना छिन एकमें रे, गाँव न नाँव न ठाँव[1] ॥ भैया० ॥ १ ॥ आप चलै अरु ले चलै रे, पीछैं सौ मन भार। ता विन गज हल ना सकै रे, तन खींचै संसार ॥ भैया० ॥ २ ॥ जाको जारैं[2] मारतैं रे, जरै मरै नहिं कोय। जो देखै सब लोकको रे, लोक न देखै सोय ॥ भैया० ॥ ३ ॥ घटघटव्यापी देखिये रे, कुंथू[3] गजसम रूप। जानै मानै अनुभवै रे, द्यानत सो चिद्रूप ॥ भैया सो० ॥ ४ ॥

१२१।

सुन सुन चेतन! लाड़ले, यह चतुराई कौन हो ॥

१ स्थान। २ जलाने। ३ कीटक-कीड़ा।

टेक ॥ आतम हित तुम परिहर्यो, करत विषय-चिंतौन[1] हो ॥ सुन० ॥ १ ॥ गहरी नीव खुदाइकै हो, मकाँ[2] किया मजबूत । एक घरी रहि ना सकै हो, जब आवै जमदूत हो ॥ सुन० ॥ २ ॥ स्वारथ सब जगवल्हो[3] हो, विनु स्वारथ नाहिं कोय। वच्छा त्यागै गायको रे, दूध विना जो होय ॥ सुन० ॥ ३ ॥ और फिकर सब छांड़ि दे हो, दो अक्षर लिख लेह । द्यानत भज भगवन्तको हो, अर भूखेको देह हो ॥ सुन० ॥ ४ ॥

१२२ ।

हे जिनराजजी, मोहि दुखतैं लेहु छुड़ाइ ॥ टेक ॥ तनदुख, मनदुख, स्वजनदुख, धनदुख कह्यो न जाइ ॥ हे जिन० ॥ १ ॥ इष्टवियोग अनिष्टसमागम, रोग सोग बहु भाइ ॥ हे जिन० ॥ २ ॥ गरभ जनम मृत बाल विरध दुख, भोगे धरि धरि काइ ॥ हे जिन० ॥३॥ नरक निगोद अनन्ती विरियां, करि करि विषय कषाइ॥ हे जिन० ॥ ४ ॥ पंच परावर्तन बहु कीनें, तुम जानों जिनराइ ॥ हे जिन० ॥ ५ ॥ भववन भ्रमतम दुखदव जम हर, तुम विन कौन सहाइ ॥ हे जिन० ॥६॥ द्यानत हम कछु चाहत नाहीं, भव भव दरस दिखाइ ॥ हे जिन० ॥ ७ ॥

---

१ चिन्तवन । २ मकान-घर । ३ वल्लभ-प्रिय । ४ शरीर ।

१२३

आतमज्ञान लखैं सुख होइ ॥ टेक ॥ पंचेन्द्री सुख मानत भोंदू, यामें सुखको लेश न कोइ ॥ आतम० ॥ १ ॥ जैसे खाज खुजावत मीठी, पीछैं दुखतैं दे रोइ। रुधिरपान करि जोंक सुखी है, सूँतत[1] वहुदुख पावै सोइ ॥ आतम० ॥ २ ॥ फरस दन्ति[2]-रस मीन-गंध अलि[3], रूप शलभ[4] मृग नाद हि लोइ। एक एक इन्द्र नितैं प्राणी, दुखिया भये गये तन खोइ ॥ आतम० ॥ ३ ॥ जैसे कूकर हाड़ चचोरैं, त्यों विषयी नर भोगैं[5] भोइं ॥ द्यानत देखो राज त्यागि नृप, वन वसि सहैं परीषह जोइ ॥ आतम० ॥ ४ ॥

१२४

मैं एक शुद्ध ज्ञाता, निरमलसुभावराता ॥ टेक ॥ दृग[6]ज्ञान चरन धारी, थिर चेतना हमारी ॥ मैं० ॥१॥ तिहुँ काल परसों न्यारा, निरद्वंद निरविकारा ॥ मैं० ॥ २ ॥ आनन्दकन्द चन्दा, द्यानत जगत सदंदा ॥ ॥ ३ ॥ अब चिदानन्द प्यारा, हम आपमें निहारा ॥ मैं० ॥ ४ ॥

१२५

सुन ! जैनी लोगो, ज्ञानको पंथ कठिन है ॥ टेक ॥

---

१ पिया हुआ खून खैंचकर वाहिर निकालते समय। २ हाथी। ३ भौंरा। ४ पतंग। ५ भोग। ६ दर्शन।

सब जग चाहत है विषयनिको, ज्ञानविषैं अनबन है ॥ सुनो० ॥ १ ॥ राज काज जग घोर तपत है, जूझ मरैं जहा रन है । सो तो राज हेय करि जानैं, जो कौड़ी गाँठ न है ॥ सुनो० ॥ २ ॥ कुवचन बात तनकसी ताको, सह न सकै जग जन है । सिरपर आन चलावैं आरे, दोष न करना मन है ॥ सुनो० ॥ ३ ॥ ऊपरकी सब थोथी बातैं, भावकी बातैं कम है । द्यानत शुद्ध भाव है जाके, सो त्रिभुवनमें धन है ॥ सुनो० ॥ ४ ॥

१२६ । राग—मलार ।

सुनो जैनी लोगो ! ज्ञानको पंथ सुगम है ॥ टेक ॥ टुक आतमके अनुभव करतैं, दूर होत सब तम है ॥ सुनो० ॥ १ ॥ तनक ध्यान करि कठिन करम गिरि, चचंल मन उपशम है ॥ सुनो० ॥ २ ॥ द्यानत नैसुक राग दोष तज, पास न आवै जम है ॥ सुनो० ॥ ३ ॥

१२७ । राग—धनासरी ।

कर सतसंगति रे भाई ! ॥ टेक ॥ पांन परत नरपतकर सो तो, पाननिसों कर असनाई ॥ कर० ॥ १ ॥ चंदन पास नींम चन्दन है, काठ चढ़यो लोह तर जाई । पारस परस कुधातु कनक है, बूंद उदधि—पदवी पाई ॥ कर० ॥ २ ॥ करई तूंबरि संगतिके फल, मधुर मधुर सुर

१ त्यागने योग्य । २ पत्ता पानोंकी (ताम्बूलकी) मित्रतासे राजाके हाथमें पहुंच जाते हैं । ३ लोहा ।

करि गाई । विष गुन करत संग औषधके, ज्यों वच खाय मिटै वाई[1] ॥ कर० ॥ ३ ॥ दोष घटै प्रगटै गुन मनसा, निरमल ह्वै तजि चपलाई । द्यानत धन्य धन्य जिनके घट, सतसंगति सरधा आई ॥ कर० ॥ ४ ॥

१२८ । राग–धनासरी ।

जैन नाम भज भाई रे! ॥ टेक ॥ जा दिन तेरा कोई नाहीं, ता दिन नाम सहाई रे ॥ जैन० ॥ १ ॥ अगनि नीर ह्वै शत्रु वीरं[2] ह्वै, महिमा होत सवाई । दारिद् जावै धन बहु आवै, जा मन नाम दुहाई रे ॥ जैन० ॥ ॥ २ ॥ सोई साध सन्त सोई धन, जिन प्रभुसों लौ लाई । सोई जती सती सो ताकी, उत्तम जात कहाई रे ॥ जैन० ॥ ३ ॥ जीव अनेक तरे सुमरनसों, गिनती गनिय न जाई । सोई नाम जपो नित द्यानत, तजि विकथा दुखदाई रे ॥ जैन० ॥ ४ ॥

१२९ । राग–गौरी ।

चेत रे! प्रानी! चेत रे!, तेरी आव है थोरी ॥ टेक ॥ सागरथिति धरि खिर गये, बँधे कालकी डोरी ॥ चेत० ॥ १ ॥ पाप अनेक उपायकै, माया बहु जोरी । अन्त समय सँग ना चलै, चलै पापकी बौरी[3] ॥ चेत० ॥ २ ॥ मात पिता सुत कामिनी, तू कहत है मोरी । देहकी देह तेरी नहीं जासों, प्रीति है तोरी ॥ चेत० ॥ ३ ॥

---

१ वायुरोग । २ भाई । ३ पोटरी ।

सिख सुन ले तू कान दे, हो धरमके धोरी। कहै द्यानत यह सार है, सब बातैं कोरी॥ चेत०॥ ४॥

१३०। राग—गौरी।

रे भाई! सँभाल जगजालमें काल दरहाल रे॥ रे भाई०॥ टेक॥ कोड़ जोधाको जीतै छिनमें, एकलो एक हि सूर। कोड़ सूर अस धूर कर डारै, जमकी भौंह करूर॥ रे भाई०॥१॥ लोहमें कोट सौ कोट बनाओ, सिंह रखो चहुँओर। इंद फनिंद नरिंद चौकि दैं, नाहिं छोड़ै मृतु जोर॥ रे भाई०॥ २॥ शैल जलै जस आग बलै सो, क्यों छोड़ै तिन सोय॥ देव सबै इक काल भखै है, नरमें क्या बल होय॥ रे भाई०॥३॥ देहधारी भये भूपर जे जे, ते खाये सब मौत। द्यानत धर्मको धार चलो शिव, मौतको करके फौत॥ रे भाई०॥ ४॥

१३१।

पायो जी सुख आतम लखकै॥ पायो०॥ टेक॥ ब्रह्मा विष्णु महेश्वरको प्रभु, सो हम देख्यो आप हरखकै॥ पायो०॥ १॥ देखनि जाननि समझनिवाला, जान्यो आपमें आप परखकै॥ पायो०॥२॥ द्यानत सब रस विरस लगै हैं, अनुभौ ज्ञानसुधारस चखकै॥ पायो०॥३॥

१३२। राग—गौरी।

सबसों छिमा छिमा कर जीव!॥ टेक॥ मन वच तनसों वैर भाव तज, भज समता जु सदीव॥ सबसों०

॥ १ ॥ तपतरु उपशम जल चिर सींच्यो, तापस शिव-फल हेत । क्रोध अगनि छनमाहिं जरावै, पावै नरक-निकेत ॥ सबसौं० ॥ २ ॥ सब गुनसहित गहत रिस मनमें, गुन औगुन ह्वै जात । जैसैं प्रानदान भोजन है, सविष भये तन घात ॥ सबसौं० ॥ ३ ॥ आप समान जान घट घटमें, धर्ममूल यह वीर । द्यानत भवदुख-दाह बुझावै, ज्ञानसरोवरनीर ॥ सबसौं० ॥ ४ ॥

१३३ । राग—आसावरी ।

गहु सन्तोष सदा मन रे ! जा सम और नहीं धन रे ॥ गहु० ॥ टेक ॥ आसा कांसा भरा न कबहूं, भर देखा बहुजन रे । धन संख्यात अनन्ती तिसना, यह बानक किमि बन रे ॥ गहु० ॥ १ ॥ जे धन ध्यावैं ते नाहिं पावैं, छांड़ैं लगत चरन रे । यह ठगहारी साधुनि डारी, छरद अहारी निधन रे ॥ गहु० ॥ २ ॥ तरुकी छाया नरकी माया, घटै बढ़ै छन छन रे । द्यानत अवि-नाशी धन लागैं, जागैं त्यागैं ते धन रे ॥ गहु० ॥ ३ ॥

१३४ । राग—आसावरी ।

रे भाई ! मोह महा दुखदाता ॥ टेक ॥ वसत वि-रानी अपनी मानैं, विनसत होत असाता ॥ रे भाई० ॥ १ ॥ जास मास जिस दिन छिन विरियाँ, जाको

होसी घाता । ताको राखन सकै न कोई, सुर नर नाग विख्याता ॥ रे भाई० ॥ २ ॥ सब जग मरत जात नित प्रति नहिं, राग बिना बिललाता । बालक मरैं करै दुख धाय न, रुदन करै बहु माता ॥ रे भाई० ॥३॥ मूंसे हनैं बिलाव दुखी नहिं, मुरग हनैं रिसैं खाता (?) । द्यानत मोह-मूल ममताको, नास करै सो ज्ञाता ॥ रे भाई० ॥४॥

१३५ । राग—आसावरी ।

सोग न कीजे बावरे ! मरें पीतम लोग ॥ सोग० ॥ टेक ॥ जगत जीव जलबुदबुदा, नदि नाव सँजोग ॥ सोग० ॥ १ ॥ आदि अन्तको संग नहिं, यह मिलन वियोग । कई बार सबसों भयो, सनबंध मनोग ॥ सोग० ॥ २ ॥ कोट बरप लौं रोइये, न मिलै वह जोग । देखैं जानैं सब सुनैं, यह तन जमभोग ॥ सोग० ॥ ३ ॥ हरिहर ब्रह्मासे खये, तू किनमें टोग (?) । द्यानत भज भगवन्त जो, विनसै यह रोग ॥ सोग० ॥ ४ ॥

१३६ । राग—रामकली ।

रे जिया ! सील सदा दिढ़ राखि हिये ॥ टेक ॥ जाप जपत तप तपत विविध विधि, सील बिना धिक्कार जिये ॥ रे जि० ॥ १ ॥ सील सहित दिन एक जीवनो, सेव करैं सुर अरघ दिये । कोटि पूर्व थिति सील विहीना, नारकी दैं दुख वज्र लिये ॥ रे जि० ॥ २ ॥ ले व्रत भंग

---

१ होगा । २ चूहेके । ३ क्रोध । ४ प्रियजन ।

करत जे प्रानी, अभिमानी मदपान पिये । आपद पावैं विघन बढ़ावैं, उर नहिं कछु लेखांन[1] किये ॥ रे जि० ॥ ३ ॥ सील समान न को[2] हित जगमें, अहित न मैथुन सम गिनिये । द्यानत रतन जतनसों गहिये, भवदुख दारिद-गन दहिये ॥ रे जि० ॥ ४ ॥

१३७ । राग—आसावरी ।

श्रीजिनधर्म सदा जयवन्त ॥ श्री० ॥ टेक ॥ तीन लोक तिहुँ कालनिमाहीं, जाको नाहीं आदि न अन्त ॥ श्री० ॥ १ ॥ सुगुन छियालिस दोष निवारैं, तारन तरन देव अरहंत । गुरु निरग्रंथ धरम करुनामय[3], उपजैं त्रेसठ पुरुष महंत ॥ श्री० ॥ २ ॥ रतनत्रय दशलच्छन सोलह,-कारन साध सरावक[4] सन्त । छहौं दरव नव तत्त्व सरधकै, सुरग मुकतिके सुख विलसन्त ॥ श्री० ॥ ३ ॥ नरक निगोद भम्यो बहु प्रानी, जान्यो नाहिं धरम-विरतंत । द्यानत भेदज्ञान सरधातैं, पायो दरव अनादि अनन्त ॥ श्री० ॥ ४ ॥

१३८ ।

जब वानी खिरी महावीरकी तब, आनँद भयो अ-पार ॥ जब० ॥ टेक ॥ सब प्रानी मन ऊपजी हो, धिक धिक यह संसार ॥ जब० ॥ १ ॥ बहुतनि सम-कित आदर्यो हो, श्रावक भये अनेक । घर तजकैं बहु

१ हिसाब । २ कोई दूसरा । ३ दयामयी । ४ श्रावक ।

वन गये हो, हिरदै धस्यो विवेक ॥ जव० ॥ २ ॥ केई भावैं भावना हो, केई गहैं तप घोर । केई जपैं प्रभु नामको ज्यों, भाजैं कर्म कठोर ॥ जव० ॥ ३ ॥ वहुतक तप करि शिव गये हो, वहुत गये सुरलोक । द्यानत सो वानी सदा ही, जयवन्ती जग होय ॥ जव० ॥ ४ ॥

१३९ । राग—ख्याल ।

ये कोई निपट अनारी, देख्या आतमराम ॥ ये० ॥ टेक ॥ जिनसों मिलना फेरि विछुरना, तिनसों कैसी यारी । जिन कामोंमें दुख पावै है, तिनसों प्रीति करारी ॥ ये० ॥ १ ॥ वाहिर चतुर मूढ़ता घरमें, लाज सवै परिहारी । ठगसों नेह वैर साधुनिसों[1], ये वातैं विसतारी ॥ ये० ॥ २ ॥ सिंह डाढ़ भीतर सुख मानै, अक्कल सवै विसारी । जा तरु आग लगी चारौं दिश, वैठि रह्यो तिहँ डारी[2] ॥ ये० ॥ ३ ॥ हाड़ मांस लोहूकी थैली, तामें चेतनधारी । द्यानत तीनलोकको ठाकुर, क्यों हो रह्यो भिखारी ॥ ये० ॥ ४ ॥

१४० । राग—विलावल ।

आतम काज सँवारिये, तजि विषय किलोलैं ॥ आतम० ॥ टेक ॥ तुम तो चतुर सुजान हो, क्यों करत अलोलैं ॥ आतम० ॥ १ ॥ सुख दुख आपद सम्पदा, ये

---

१ साधु (सज्जन) पुरुषोंसे. २ डाली, शाखा.

कर्म[1] झकोलैं । तुम तो रूप अनूप हो, चैतन्य अमोलैं ॥ आतम० ॥ २ ॥ तन धनादि अपने कहो, यह नाहिं तुम तोलैं[2] । तुम राजा तिहुँ लोकके, ये जात निठोलैं[3] ॥ आतम० ॥ ३ ॥ चेत चेत द्यानत अबै, इमि सद्गुरु बोलैं । आतम निज पर पर लखौ, अरु बात ढकोलैं[3] ॥ आतम० ॥ ४ ॥

१४१ ।

वीतराग नाम सुमर, वीतराग नाम ॥ टेक ॥ भजन विना किये यार, होगा बदनाम ॥ वीतराग० ॥ १ ॥ जाको करै धूमधाम, सो तो धूमेंधाम[4] । पातशाह[5] होय चुके, सखो[6] कौन काम ॥ वीतराग० ॥ २ ॥ वातैं परवीन करै, काम करै खाम । काल सिंह आवत है, पकर एक ठाम ॥ वीतराग० ॥ ३ ॥ आठ जाम लागि रह्यौ, चाम निरख दाम । द्यानत कबहूँ न भूल, साहिब अभिराम ॥ वीतराग० ॥ ४ ॥

१४२ । राग—आसावरी ।

आज आनन्द बधावा ॥ आज० ॥ टेक ॥ जनम्यो आदीसुर, नाभीके भौन । कीनौं सब इन्द्र मिलि, मेरुपै न्हौंन ॥ आज० ॥ १ ॥ ऐरावत शक्र[7] चढ़यो, गोदमें किशोर । नाचत हैं अपछरा सु सत्ताइस कोर[8] ॥ आज० ॥ २ ॥

---

१ झकोरैं । २ समान । ३ बाहियात । ४ बादलोंके समान अस्थिर । ५ बादशाह । ६ सिद्ध हुआ । ७ इन्द्र । ८ करोड़ ।

अजोध्या नगर सव, घेरयो देवि देव । नर नारी अच-रज यहं, देखैं सव एव ॥ आज० ॥३॥ द्यानत मरुदेवी-पद, सची सीस नाय । धन धन जग माता, हमैं सुख दाय ॥ आज० ॥ ४ ॥

१४३ । राग–होरी ।

मिथ्या यह संसार है, झूठा यह संसार है रे ॥ मिथ्या० ॥ टेक ॥ जो देही पट्रससों पोपै, सो नहिं संग चलै रे । औरनिको तोहि कौन भरोसो, नाहक मोह करै रे, भाइ ॥ मिथ्या० ॥१ ॥ सुखकी वातैं बूझै नाहीं, दुखको सुक्ख लखै रे । मूढ़ोंमाहीं माता[1] डोलै, साधौं पास डरै रे, भाई ॥ मिथ्या० ॥ २ ॥ झूठ कमाता झूठी खाता, झूठी जाप जपै रे । सच्चा साईं सूझै नांहीं, क्यों करि पार लगैरे, भाई ॥ मिथ्या० ॥ ३ ॥ जमसौं डरता फूला फिरता, करता मैं मैं मैं रे । द्यानत स्याना सोही जाना, जो प्रभु ध्यान धरै रे, भाई ॥ मिथ्या० ॥ ४ ॥

१४४ । राग–धमाल ।

रे भाई ! करुना जान रे ॥ रे भाई० ॥ टेक ॥ सव जिय आप समान हैं रे!, घाट[2] बाध[3] नहिं कोय । जाकी हिंसा तू करै रे !, तेरी हिंसा होय ॥ रे भाई० ॥ १ ॥ छह दरसनवाले कहैं रे !, जीवदया सरदार । पालै

---

१ उन्मत्त होकर । २ हीन । ३ अधिक ।

कोई एक है रे !, कथनी कथै हजार ॥ रे भाई० ॥ २ ॥ आधे दोहेमें कह्या रे !, कोट ग्रंथको सार । परपीड़ा सो पाप है रे !, पुन्य सु परउपगार ॥ रे भाई० ॥ ३ ॥ सो तू परको मति कहै रे !, वुरी जु लागै तोय। लाख वातकी वात है रे ! द्यानत ज्यों सुख होय ॥ रे भाई० ॥ ४ ॥

१४५ । राग—ख्याल ।

कहुं दीठा नेमिकुमार ॥ टेक ॥ व्याहन आया वहु दल लाया, रथ ऊपर असवार । इन्द्र सरीखे चाकर जाके, शोभा वार न पार ॥ कहुं० ॥ १ ॥ नारायन अति क्रूर कमाया, घेरे जीव अपार । शोर जु कीने करुना भीने, दीने वंध निवार ॥ कहुं० ॥ २ ॥ पट भूषन वहु भार डारके, पंच महाव्रत धार । गये कहां कछु सुधि हू पाई, मोह कहो इह वार ॥ कहुं० ॥ ३ ॥ जो सुध लावै मोह मिलावै, सोई पीतम सार । द्यानत कहै करोंगी सोई, देखौं नैन निहार ॥ कहुं० ॥ ४ ॥

१४६ । राग—गौरी ।

राम भरतसों कहैं सुभाइ, राज भोगवो थिर मन लाइ ॥ राम० ॥ टेक ॥ सीता लीनी रावन घात, हम आये देखनको भ्रात ॥ राम० ॥ १ ॥ माताको कछु दुख मति देहु, घरमें धरम करो धरि नेह ॥ राम० ॥२॥

१ देखा ।

द्यानत दीच्छा लैंगे साथ, तात वचन पालो नरनाथ ॥ राम० ॥ ३ ॥

१४७ । राग—गौरी ।

कहैं भरतजी सुन हो राम ! राज भोगसों मोहि न काम ॥ टेक ॥ तब मैं पिता साथ मन किया, तात मात तुम करन न दिया ॥ कहैं० ॥ १॥ अब लौं बरस वृथा सब गये, मनके चिन्ते काज न भये ॥ कहैं० ॥२॥ चिन्तै थे कब दीक्षा बनै, धनि तुम आये करने मनै ॥ कहैं० ॥ ३ ॥ आप कहा था सब मैं करा, पिता करेकौं अब मन धरा ॥ कहैं० ॥ ४ ॥ यों कहि दृढ़ वैराग्य प्रधान, उठ्यो भरत ज्यों भरत सुजान ॥ कहैं० ॥ ॥ ५ ॥ दीक्षा लई सहस नृप साथ, करी पहुपवरषा[1] सुरनाथ ॥ कहैं० ॥ ६ ॥ तप कर मुकत भयो वर वीर, द्यानत सेवक सुखकर धीर ॥ कहैं० ॥ ७ ॥

१४८ । राग—मल्हार ।

हम तो कबहुँ न निज घर आये ॥ टेक ॥ पर घर फिरत वहुत दिन वीते, नाम अनेक धराये ॥ हम तो० ॥ १ ॥ परपद निजपद मानि मगन है, पर परनति लपटाये । शुद्ध बुद्ध सुखकंद मनोहर, आतम गुण नहिं गाये ॥ हम तो० ॥ २ ॥ नर पशु देव नरक निज मान्यो, परजयबुद्ध कहाये । अमल अखंड अतुल

१ पुष्पवृष्टि फूलोंकी वर्षा ।

अविनाशी, चेतन भाव न भाये ॥ हम तो० ॥ ३ ॥ हित अनहित कछु समझ्यो नाहीं, मृगजलबुध[1] ज्यों धाये । द्यानत अब निज-निज, पर-पर है, सदगुरु बैन सुनाये ॥ हम तो० ॥ ४ ॥

१४९ । राग—दुलरीकी ढाल ।

श्रीजिनदेव ! न छांड़ि हों, सेवा मन वच काय हो ॥ श्री० ॥ टेक ॥ सब देवनिके देव हो, सब गुरुके गुरुराय हो ॥ श्री० ॥ १ ॥ गरभ जनम तप ज्ञान शिव, पंचकल्यानक-ईश हो । पूजैं त्रिभुवनपति सदा, तुमको श्रीजगदीश हो ॥ श्री० ॥ २ ॥ दोष अठारह छय गये, गुणहि छियालिस खान हो । महा दुखीको देत हो, बड़े रतनको दान हो ॥ श्री० ॥ ३ ॥ नाम थापना दरबको, भाव खेत[2] अरु काल हो । षट विधि मंगल जे करैं, दुख नासै सुखमाल हो ॥ श्री० ॥ ४ ॥ एक दरब कर जो भजै, सो पावै सुख सार हो । आठ दरब ले हम जजैं, क्यों नहिं उतरैं पार हो ॥ श्री० ॥ ॥ ५ ॥ गुन अनन्त भगवन्तजी, कहि न सकैं सुरराय हो । बुद्धि तनक[3]सी मोविषैं, तुम ही होहु सहाय हो ॥ श्री० ॥ ६ ॥ तातैं वन्दों जगगुरू ! वन्दों दीनदयाल हो । वन्दों स्वामी लोकके, वन्दों भविजनपाल हो ॥ ॥ श्री० ॥ ७ ॥ विनती कीनीं भावसों, रोम रोम

१ जैसे मृगजल समझकर (दौड़ता है) । २ क्षेत्र । ३ थोड़ीसी ।

हरपाय हो । इस संसार असारमें, द्यानत भक्ति उपाय हो ॥ श्री० ॥ ८ ॥

१५० । राग—विलावल ।

मानुषभव पानीं दियो, जिन राम न जाना ॥ मानुप० ॥ टेक ॥ पाप अनेक उपायकै, गयो नरक निदाना ॥ मानुप० ॥ १ ॥ पुन्य उदय सम्पत मिली, फूल्या न समाना । पाप उदय जब खिर गई, हा ! हा ! विल्लाना ॥ मानुप० ॥ २ ॥ तीरथ बहुतेरे फिरे, अरचे पाखाना[1] । राम कहूँ नाहिं पाइयो, हूए हैराना ॥ मानुप० ॥ ३ ॥ राम मिलनके कारनैं, दीए बहु दाना । आठ पहर शुक ज्यों रटे, नहिं रूप पिछाना ॥ मानुप० ॥ ४ ॥ तलैं कहैं ऊपर कहै, पावै न ठिकाना । देखै जानैं कौन है, यह ज्ञान न आना ॥ मानुप० ॥ ५ ॥ वेद पढ़ैं केई तप तपैं, कोई जाप जपाना । रैन दिना खोटी घड़ैं, चाहैं कल्याना ॥ मानुप० ॥ ६ ॥ राम सबै घट घट बसै, कहिं दूर न जाना । ज्यों चकमकमें आग है, त्यों तन भगवाना ॥ मानुप० ॥ ७ ॥ तिनका ओट पहार है, जानैं न अयाना । द्यानत निपट नजीक है, लख चेतनवाना ॥ मानुप० ॥ ८ ॥

१५१ । राग—आसावरी ।

अब मैं जान्यो आतमराम ॥ अब० ॥ टेक ॥ काम

---

१ पत्थर-प्रतिमा ।

न आवै गोधन धाम ॥ अब० ॥ १ ॥ जिहँ जान्या विन दुख बहु सह्यो, सो गुरुसंगति सहजैं लह्यो ॥ अब० ॥ २ ॥ किये अज्ञानमाहिं जे कर्म, सब नाशे प्रगट्यो निज धर्म ॥ अब० ॥ ३ ॥ जास न रूप गंध रस फास, देख्यो करि अनुभौ अभ्यास ॥ अब० ॥ ४ ॥ जो परमातम सो ममरूप, जो मम सो परमातम भूप ॥ अब० ॥ ५ ॥ सर्व जीव हैं मोहि समान, मेरे वैर नहीं तिन-मान ॥ अब० ॥ ६ ॥ जाको ढूंढै तीनौं लोक, सो मम घटमें है गुण थोक ॥ अब० ॥ ७ ॥ जो करना था सो कर लिया, द्यानत निज गह पर तज दिया ॥ अब० ॥ ८ ॥

१५२ । राग—धमाल ।

चेतन प्राणी चेतिये हो, अहो भवि प्रानी चेतिये हो, छिन छिन छीजत आव ॥ टेक ॥ घड़ी घड़ी घड़ियाल रटत है, कर निज हित अब दाव ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ १ ॥ जो छिन विषय भोगमें खोवत, सो छिन भजि जिन नाम । वातैं नरकादिक दुख पैहै, यातैं सुख अभिराम ॥ चेतन० ॥ २ ॥ विषय भुजंगमके डसे हो, रुले बहुत संसार । जिन्हैं विषय व्यापै नहीं हो, तिनको जीवन सार ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ चार गतिनिमें दुर्लभ नर भव, नर विन मुकति न होय । सो तैं पायो भाग उदय हो, विषयनि—सँग मति खोय ॥ चेतन०

॥ ४ ॥ तन धन लाज कुटुँबके कारन, मूढ़ करत है पाप। इन ठगियोंसे ठगायकै हो, पावै वहु दुख आप ॥ चेतन० ॥ ५ ॥ जिनको तू अपने कहै हो, सो तो तेरे नाहिं। कै तो तू इनकौं तजै हो, कै ये तुझे तज जाहिं ॥ चेतन० ॥ ६ ॥ पलक एककी सुध नही हो, सिरपर गाजै काल। तू निचिन्त क्यों वावरे हो, छांड़ि दे सव भ्रमजाल ॥ चेतन० ॥ ७ ॥ भजि भगवन्त महन्तको हो, जीवन-प्राणअधार। जो सुख चाहै आपको हो, द्यानत कहै पुकार ॥ चेतन० ॥ ८ ॥

१५३। राग—विलावल।

भजि मन प्रभु श्रीनेमिको, तजी राजुल नारी ॥ टेक ॥ जाके दरसन देखतैं, भाजै दुख भारी ॥ भजि० ॥ १ ॥ ज्ञान भयो जिनदेवको, इन्द्र अवधि विचारी। धनपतिने समोसरनकी, कीनी विधि सारी ॥ भजि० ॥ ॥ २ ॥ तीन कोट चहुं थंभश्री, देखैं दुखहारी। द्वादश कोठे वीचमें, वेदी विस्तारी ॥ भजि० ॥३॥ तामैं सोहैं नेमिजी, छ्यालिस गुणधारी। जाकी पूजा इन्द्रने, करी अष्टप्रकारी ॥ भजि० ॥ ४ ॥ सकल देव नर जिहिं भजैं, वानी उच्चारी। जाको जस जम्पंत मिलै, सम्पत अविकारी ॥ भजि० ॥ ५ ॥ जाकी वानी सुनि भये, केवल दुतिकारी। गनधर मुनि श्रावक सुधी, ममतावुधि डारी

---

१ गानेसे।

॥ भजि० ॥ ६ ॥ राग दोष मद मोह भय, जिन तिन्हा टारी । लोक अलोक त्रिकालकी, परजाय निहारी ॥ भजि० ॥ ७ ॥ ताको मन वच कायसों, वन्दना हमारी। द्यानत ऐसे स्वामिकी, जइये बलिहारी ॥ भजि० ॥ ८ ॥

१५४ ।

प्राणी लाल ! छांड़ो मन चपलाई ॥ प्राणी० ॥ टेक ॥ देखो तन्दुलमच्छ[1] जु मनतैं, लहै नरक दुखदाई ॥ ॥ प्राणी० ॥ १ ॥ धारै मौन दया जिनपूजा, काया बहुत तपाई । मनको शल्य[2] गयो नहिं जब लों, करनी सकल गंवाई ॥ प्राणी० ॥ २ ॥ बाहूबल मुनि ज्ञान न उपज्यो, मनकी खुटक न जाई । सुनतैं मान तज्यो मनको तब, केवलजोति जगाई ॥ प्राणी० ॥ ३ ॥ प्रसनचंद रिषि नरक जु जांते, मन फेरत शिव पाई । तनतैं वचन वचनतैं मनको, पाप कह्यो अधिकाई ॥ प्राणी० ॥ ४ ॥ देहिं दान गहि शील फिरैं बन, परनिन्दा न सुहाई । वेद पढ़ैं निरग्रंथ रहैं जिय, ध्यान विना न बड़ाई ॥ प्राणी० ॥ ५ ॥ त्याग फरस रस गंध वरण सुर, मन इनसों लौ लाई । घर ही कोस पचास भ्रमत ज्यों, तेलीको वृषँ[3] भाई ॥ प्राणी० ॥ ६ ॥ मन कारण है सब कारजको, विकलप बंध बढ़ाई । निरविकलप मन मोक्ष करत है, सूधी बात बताई ॥ प्राणी० ॥ ७ ॥ द्यानत

१ महामच्छके कर्णमें रहनेवाला मच्छ । २ शल्य खटक । ३ बैल

जे निज मन वश करि हैं, तिनकों शिवसुख थाई । वार वार कहुं चेत संवेरो, फिर पाछैं पछताई ॥ प्राणी० ॥८॥

१५५ । राग—काफी ।

भाई! ज्ञान विना दुख पाया रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ भव दश आठ उस्वास स्वासमें, साधारन लपटाया रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ काल अनन्त यहां तोहि वीते, जव भई मंद कषाया रे । तव तू तिस निगोद सिंधूतैं, थावर होय निसारा रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ क्रम क्रम निकस भयो विकलत्रय, सो दुख जात न गाया रे । भूख प्यास परवश सहि पशुगति, वार अनेक विकाया रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ नरकमाहिं छेदन भेदन वहु, पुतरी अगन जलाया रे । सीत तपत दुरगंध रोग दुख, जानैं श्रीजिनराया रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥ भ्रमत भ्रमत संसार महावन, कवहूँ देव कहाया रे । लखि परविभौ सह्यौ दुख भारी, मरन समय विललाया रे ॥ भाई० ॥ ५ ॥ पाप नरक पशु पुन्य सुरग वसि, काल अनन्त गमाया रे । पाप पुन्य जव भये वरावर, तव कहुँ नरभव पाया रे ॥ ॥ भाई० ॥ ६ ॥ नीच भयो फिर गरभ खयो फिर, जनमत काल सताया रे । तरुणपनै तू धरम न चेतै, तन-धन-सुत लौ लाया रे ॥ भाई० ॥ ७ ॥ दरवलिंग

१ जल्दी । २ निकला ।

धरि धरि वहु मरि तू, फिरि फिरि जग भमि आया रे। द्यानत सरधाजुत गहि मुनिव्रत, अमर होय तजि काया रे ॥ भाई० ॥ ८ ॥

१५६ । राग—काफी ।

भाई! कहा देख गरवाना रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ गहि अनन्त भव तैं दुख पायो, सो नहिं जात वखाना रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ माता रुधिर पिताके वीरज, तातैं तू उपजाना रे। गरभ वास नवमास सहे दुख, तल सिर पांव उचाना रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ मात अहार चिगल मुख निगल्यो, सो तू असन गहाना रे। जंती तार सुनार निकालै, सो दुख जनम सहाना रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ आठ पहर तन मलि मलि धोयो, पोष्यो रैन विहाना रे। सो शरीर तेरे संग चल्यो नाहिं, खिनमें खाक समाना रे ॥ भाई० ॥ ४ ॥ जनमत नारी, वाढ़त भोजन, समरथ दरव नसाना रे। सो सुत तू अपनो कर जानै, अन्त जलावै प्राना रे ॥ भाई० ॥ ५ ॥ देखत चित्त मिलाप हरै धन, मैथुन प्राण पलाना रे। सो नारी तेरी है कैसे, मूवें प्रेत प्रमाना रे ॥ भाई० ॥ ६ ॥ पांच चोर तेरे अन्दर पैठे, तैं ठाना मित्राना रे। खाय पीय धन ज्ञान लूटके, दोष तेरे सिर ठाना रे ॥ भाई० ॥७॥ देव धरम गुरु रतन अमोलक, कर अन्तर सरधाना रे।

द्यानत ब्रह्मज्ञान अनुभव करि, जो चाहै कल्याना रे। ॥ भाई० ॥ ८ ॥

१५७। राग—काफी।

कर मन! निज-आतम-चिंतौन ॥ कर० ॥ टेक ॥ जिहि विनु जीव भम्यो जग-जौन ॥ कर० ॥ १ ॥ आतममगन परम जे साधि, ते ही त्यागत करम उपाधि ॥ कर० ॥ २ ॥ गहि व्रत शील करत तन शोख, ज्ञान विना नहिं पावत मोख ॥ कर० ॥ ३ ॥ जिहितैं पद अरहन्त नरेश, राम काम हरि इंद फणेश ॥ कर० ॥ ४ ॥ मनवांछित फल जिहितैं होय, जिहिकी पटतर अवर न कोय ॥ कर०॥५॥ तिहूँ लोक तिहुँकाल-मँझार, वरन्यो आतमअनुभव सार ॥ कर० ॥ ६ ॥ देव धरम गुरु अनुभव ज्ञान, मुकति नीव पहिली सो[1]-पांन ॥ कर० ॥ ७ ॥ सो जानैं छिन व्है शिवराय, द्यानत सो गहि मन वच काय ॥ कर० ॥ ८ ॥

१५८। राग—काफी।

भाई! जानो पुदगल न्यारा रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ क्षीर नीर जड़ चेतन जानो, धातु पखान विचारा रे ॥ भाई० ॥१ ॥ जीव करमको एक जानतो, भाख्यो[2] श्रीगणधारा रे। इस संसार दुःखसागरमें, तोहि भ्रमावनहारा रे ॥ भाई० ॥ २ ॥ ग्यारह अंग पढ़े सब

१ पैड़ी। २ गणधरने।

पूरव, भेद-ज्ञान न चितारा रे । कहा भयो सुवटाकी[1] नाईं, रामरूप न निहारा रे ॥ भाई० ॥ ३ ॥ भवि उपदेश मुकत पहुँचाये, आप रहे संसारा रे । ज्यों मलाह[2] पर पार उतारै, आप वारका वारा रे ॥ भाई० ॥४॥ जिनके वचन ज्ञान परगासैं, हिरदै मोह अपारा रे । ज्यों मशालची और दिखावै, आप जात अँधियारा रे ॥ भाई० ॥ ५ ॥ बात सुनैं पातक मन नासै, अपना मैल न झारा रे । बांदी[3] परपद मलि मलि धोवै, अपनी सुधि न सँभारा रे ॥ भाई० ॥ ६ ॥ ताको कहा इलाज कीजिये, बूड़ा अम्बुधि धारा रे । जाप जप्यो बहु ताप तप्यो पर, कारज एक न सारा रे ॥ भाई० ॥ ७ ॥ तेरे घटअन्तर चिनमूरति, चेतनपदउजियारा रे । ताहि लखै तासौं बनि आवै, द्यानत लहि भव पारा रे ॥ भाई० ॥ ८ ॥

१५९ । राग—सोरठ ।

भजो आतमदेव, रे जिय ! भजो आतमदेव ॥ रे जिय० ॥ टेक ॥ लहो शिवपद एव ॥ रे जिय० ॥ ॥ १ ॥ असंख्यात प्रदेश जाके, ज्ञान दरस अनन्त । सुख अनन्त अनन्त वीरज, शुद्ध सिद्ध महन्त ॥ रे जिय० ॥ २ ॥ अमल अचलातुल अनाकुल, अमन अवच अदेह । अजर अमर अखय अभय प्रभु, रहित-

---

१ तोतेके समान । २ मल्लाह । ३ दासी ।

विकलप नेह॥ रे जिय० ॥३॥ क्रोध मद वल लोभ न्यारो, वंध मोख विहीन। राग दोष विमोह नाहीं, चेतना गुणलीन ॥ रे जिय० ॥ ४ ॥ फरस रस सुर गंध सपरस, नाहिं जामें होय। लिंग मारगना नहीं, गुणथान नाहीं कोय ॥ रे जिय० ॥ ५ ॥ ज्ञान दर्शन चरनरूपी, भेद सो व्योहार। करम करना क्रिया निहचै, सो अभेद विचार॥ रे जिय०॥६॥ आप जाने आप करके, आपमाहीं आप। यही व्योरा मिट गया तव, कहा पुन्यरु पाप॥ रे जिय० ॥ ७ ॥ है कहै है नहीं नाहीं, स्याद्वाद प्रमान। शुद्ध अनुभव समय द्यानत, करौ अम्रतपान॥ रे जिय० ॥८॥

१६० । राग—आसावरी ।

भाई ब्रह्मज्ञान नहिं जाना रे ॥ भाई० ॥ टेक ॥ सव संसार दुःख सागरमें, जामन मरन कराना रे ॥ भाई० ॥ १ ॥ तीन लोकके सव पुद्गल तैं, निगल निगल उगलाना रे। छँर्दि डारके फिर तू चाखै, उपजै तोहि न ग्लाना रे॥ भाई० ॥ २ ॥ आठ प्रदेश विना तिहुँ जगमें, रहा न कोइ ठिकाना रे। उपजा मरा जहां तू नाहीं, सो जानै भगवाना रे॥ भाई० ॥ ३ ॥ भव भवके नख केस नालका, कीजे जो इक ठाना रे। हौंय अधिक ते गिरि सुमेरुतैं, भाखा वेद पुराना रे॥ भाई० ॥ ४ ॥ जननी थँन-पय जनम जनमको, जो तैं कीना पाना रे। सो तो

१ कै वमन। २ स्तनका दूध।

अधिक सकल सागरतैं, अजहूं नाहिं अघाना रे ॥ भाई० ॥ ५ ॥ तोहि मरण जे माता रोईं, आसूँ जल सगलाना रे । अधिक होय सब सागरसेती, अजहूँ त्रास न आना रे ॥ भाई० ॥ ६ ॥ गरभ जनम दुख बाल विरध दुख, वार अनन्त सहाना रे । दरवलिंग धरि जे तन त्यागे, तिनको नाहिं प्रमाना रे ॥ भाई० ॥ ७ ॥ विन समभाव सहे दुख एते, अजहूँ चेत अयाना रे । ज्ञानसुधारस पी लहि द्यानत, अजर अमरपद थाना रे ॥ भाई० ॥ ८ ॥

१६१ । राग—धमाल ।

साधो ! छांड़ो विषय विकारी । जातैं तोहि महा दुखकारी ॥ साधो० ॥ टेक ॥ जो जैनधर्मको ध्यावै, सो आतमीक सुख पावै ॥ साधो० ॥ १ ॥ गज फरसविषैं दुख पाया, रस मीन गंध अलि[1] गाया । लखि दीप शलभ[2] हित कीना, मृग नाद सुनत जिय दीना ॥ साधो० ॥ २ ॥ ये एक एक दुखदाई, तू पंच रमत है भाई । यह कौनें, सीख बताई, तुमरे मन कैसैं आई ॥ साधो० ॥ ३ ॥ इनमाहिं लोभ अधिकाई, यह लोभ कुगतिको भाई । सो कुगतिमाहिं दुख भारी, तू त्याग विषय मतिधारी ॥ साधो० ॥ ४ ॥ ये सेवत सुखसे लागैं, फिर अन्त प्राणको त्यागैं । तातैं ये विषफल

१ भ्रमर । २ पतंग ।

कहिये, तिनको कैसे कर गहिये ॥ साधो० ॥ ५ ॥ तबलौं विषया रस भावै, जबलौं अनुभव नहिं आवै । जिन अमृत पान ना कीना, तिन और रसन चित दीना ॥ साधो० ॥ ६ ॥ अब बहुत कहां लौं कहिए, कारज कहि चुप ह्वै रहिये । ये लाख बातकी एक, मत गहो विषयकी टेक ॥ साधो० ॥ ७ ॥ जो तजै विषयकी आसा, द्यानत पावै शिववासा । यह सतगुरु सीख बताई, काहू विरले जिय आई ॥ साधो० ॥ ८ ॥

१६२ । राग—आसावरी ।

हमको कैसें शिवसुख होई ॥ हमको० ॥ टेक ॥ जे जे मुकत जानके कारण, तिनमेंको नहि कोई ॥ हमको० ॥ १ ॥ मुनिवरको हम दान न दीना, नहिं पूज्यो जिनराई । पंच परम पद वन्दे नाहीं, तपविधि बन नहिं आई ॥ हमको० ॥ २ ॥ आरत रुद्र कुध्यान न त्यागे, धरम शुकल नहिं ध्याई । आसन मार करी आसा दिढ़, ऐसे काम कमाई ॥ हमको० ॥ ३ ॥ विषय कषाय विनाश न हूआ, मनको पंगु न कीना । मन वच काय जोग थिर करकैं, आतमतत्त्व न चीना ॥ हमको० ॥ ४ ॥ मुनि श्रावकको धरम न धार्‌यो, समता मन नहिं आनी । शुभ करनी करि फल अभिलाष्यो, ममतानुध अधिकानी ॥ हमको० ॥ ५ ॥ रामा रामा धन धन कारन, पाप अनेक उपायो । तब हू तिसना भई न पूरन,

जिनवानी यों गायो॥ हमको०॥ ६॥ राग दोष परनाम न जीते, करुना मन नहिं आई। झूठ अदत्त कुशील गह्यो दिढ़, परिग्रहसों लौ लाई॥ हमको०॥ ७॥ सातौं विसन गहे मद धार्यो, सुपरभेद नहिं पाई। द्यानत जिनमारग जाने विन, काल अनन्त गमाई॥ हमको०॥ ८॥

१६३।

भज रे भज रे मन! आदिजिनंद, दूर करैं तेरे अघवृंद[1]॥ भज०॥ टेक॥ नाभिराय मरुदेवी नंद, सकल लोकमें पूनमचन्द॥ भज०॥ १॥ जाको ध्यावत त्रिभुवनइंद, मिथ्यातमनाशन जु दिनंद[2]॥ भज०॥ २॥ शुद्ध बुद्ध प्रभु आनँदकंद, पायो सुख नास्यो दुखदंद॥ भज०॥ ३॥ जाको ध्यान धरैं जु मुनिन्द, तेई पावत परम अनंद॥ भज०॥ ४॥ जिनको मन-वच-तन-करि वंद, द्यानत लहिये शिवसुखकंद॥ भज०॥ ५॥

१६४।

सुन चेतन इक बात हमारी, तीन भुवनके राजा। रंक भये बिललात फिरत हो, विषयनि सुखके काजा॥१॥ चेतन तुम तो चतुर सयाने, कहां गई चतुराई। रंचक विषयनिके सुखकारण, अविचल ऋद्धि गमाई॥ २॥ विषयनि सेवत सुख नहिं राई, दुख है मेरु

१ पापसमूह। २ सूरज।

समाना । कौन सर्यांनप कीनी भौंदू, विपयनिसों लपटाना ॥ ३ ॥ इस जगमें थिर रहना नाहीं, तैं रहना क्यों माना । सूझत नाहिं कि भांग खाइ है, दीसै परगट जाना ॥ ४ ॥ तुमको काल अनन्त गये हैं, दुख सहते जगमाहीं । विपय कपाय महारिपु तेरे, अजहूँ चेतन नाहीं ॥ ५ ॥ ख्याति लाभ पूजाके काजें, बाहिज भेप बनाया । परमतत्त्वको भेद न जाना, वादि अनादि गँवाया ॥ ६ ॥ अति दुर्लभ तैं नर भव लहकैं, कारज कौन समारा । रामा रामा धन धन सॉटैं, धर्म अमोलक हारा ॥ ७ ॥ घट घट साईं मैंनू दीसै, मूरख मरम न पावै । अपनी नाभिसुवास लखे विन, ज्यों मृग चहुँ दिशि धावै ॥ ८ ॥ घट घटसाईं घटसा नाईं, घटसों घटमें न्यारो । घूंघटका पट खोल निहारो, जो निजरूप निहारो ॥ ९ ॥ ये दश माझ (?) सुनैं जो गावै, निरमल मनसा करके । द्यानत सो शिवसम्पति पावै, भवदधि पार उतरके ॥ १० ॥

१६५ । राग—सोरठ ।

जिनराय ! मोह भरोसो भारी ॥ जैन० ॥ टेक ॥ सुर नरनाथ विभूति देहु तौ, अव नाहिं लागत प्यारी ॥ जिनराय० ॥ १ ॥ सिरीपाल भूपाल विथा गई, लहि सम्पत अधिकारी । सूली सेठ अगनितैं सीता, कहा

१ सयानपन । २ बदलेमें । ३ कस्तूरीकी सुगंधि ।

भयो जो उवारी॥ जिनराय० ॥२॥ विदित रूप पुर(?) तसकर तुमतैं, भये अमर अवतारी । भवसुदत्त अरु सालभद्रकी, किहि कारण रिधि सारी ॥ जिनराय० ॥३॥ भेक[1] स्वान गज सिंह भये सुर, विषय रीति विस्तारी । कुश्न पिता सुत(?)वहु रिधि पाई, विनाशीक हम धारी ॥ जिनराय० ॥ ४ ॥ जातिविरोध जात जीवनिके, मूरति देखि तिहारी । मानतुङ्गके बन्धन टूटे, यह शोभा तुम न्यारी ॥ जिनराय० ॥ ५ ॥ तारन तरन सुविरद तिहारो, यह लखि चिन्ता डारी । द्यानत शिवपद आप हि देहो, बनी सु वात हमारी ॥ जिनराय० ॥ ६ ॥

१६६ ।

प्रानी ! ये संसार असार है, गर्व न कर मनमाहिं ॥ प्रानी० ॥ टेक ॥ जे जे उपजैं भूमिपै, जमसों छूटैं नाहिं ॥ प्रानी० ॥ १ ॥ इन्द्र महा जोधा वली, जीत्यो रावनराय । रावन लछमनने हत्यो, जम गयो लछमन खाय ॥ प्रानी० ॥ २ ॥ कंस जरासँध सूरमा, मारे कृष्ण गुपाल । ताको जरदकुमारने, मास्यो सोऊ[2] काल ॥ प्रानी० ॥ ३ ॥ कई वार छत्री हते, परशुराम वल साज । मास्यो सोउ सुभूमिने[3], ताहि हन्यो जमराज ॥ प्रानी० ॥ ४ ॥ सुर नर खग सब वश करे, भरत नाम चक्रेश । वाहूवलपै हारकै, मान रह्यो नहिं लेश ॥

१ मेंडक । २ जरत्कुमारको । ३ सुभूमिचक्रवर्तीने ।

॥ प्रानी० ॥ ५ ॥ जिनकी भौंहैं फरकतैं, डरते इन्द फनिंद । पाँयनि परवत फोरते, खाये काल-मृगिंद[2] ॥ प्रानी० ॥ ६ ॥ नारी संकलसारखी, सुत फाँसी अनिवार । घर बंदीखाना कहा, लोभ सु चौकीदार ॥ प्रानी० ॥ ७ ॥ अन्तर अनुभव कीजिये, बाहिर करुणाभाव । दो वातनिकरि हूजिये, द्यानत शिवपुरराव ॥ प्रानी० ॥ ८ ॥

१६७ ।

जैनधरम धर जीयरा ! सो चार प्रकार ॥ जैन० ॥ ॥ टेक ॥ दान शील तप भावना, निहचै व्योहार ॥ जैन० ॥ १ ॥ निहचै चारोंको धनी, चेतन शिवकार । परम्परा शिव देत है, शुभभावविथार[3] ॥ जैन० ॥ २ ॥ दान दये बहु सुख लये, को कहै विचार । निरधन बामण दानतैं, लहै रतन अपार ॥ जैन० ॥ ३ ॥ घर तजि वन दिढ़ शील जे, पालैं मुनि सार । अनुव्रत सीता शीलतैं, पावक जलधार ॥ जैन० ॥ ४ ॥ तपकी महिमा को कहै, जानै नरनार । सिंघ तनिक तपस्या करी, भयो देवकुमार ॥ जैन० ॥ ५ ॥ भावन भावैं धन्य जे, तजि परिग्रहभार । मेंडक पूजा भावसों, गयो सुरगमँझार ॥ जैन० ॥ ६ ॥ नमस्कार यह जोग है, यह मंगलधार । ये ही उत्तम लोकमें, यह शरन निहार ॥

---

१ पैरोंके वलसे । २ काल्रूपी सिंह । ३ शुभभावोंका विस्तार ।

॥ जैन० ॥ ७ ॥ घातैं घातैं जीवको, रख लेहु उबार । द्यानत धर्म न भूलिये, संसार असार ॥ जैन० ॥ ८ ॥

१६८ । राग—आसावरी जोगिया ।

ज्ञानी ऐसो ज्ञान विचारै ॥ ज्ञानी० ॥ टेक ॥ राज सम्पदा भोग भोगवै, वंदीखाना धारै ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ धन जोवन परिवार आपतैं, ओछी ओर निहारै । दान शील तप भाव आपतैं, ऊंचेमाहिं चितारै ॥ ज्ञानी० ॥ ॥ २ ॥ दुख आये धीरज धर मनमें, सुख वैराग सँभारै । आतम दोष देखि नित झूरै, गुन लखि गरव विडारै ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ आप बड़ाई परकी निन्दा, मुखतैं नाहिं उचारै । आप दोष परगुन मुख भाषै, मनतैं शल्य निवारै ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥ परमारथ विधि तीन जोगसौं, हिरदै हरष विथारै । और काम न करै जु करै तो, जोग एक दो हारै ॥ ज्ञानी० ॥ ५ ॥ गई वस्तुको सोचै नाहीं, आगमचिन्ता[1] जारै । वर्तमान वर्तै विवेकसौं, ममता बुद्धि विसारै ॥ ज्ञानी० ॥ ६ ॥ बालपने विद्या अभ्यासै, जोवन तप विस्तारै । वृद्धपने सन्यास लेयकै, आतम काज सँभारै ॥ ज्ञानी० ॥ ७ ॥ छहों दरव नव तत्त्वमाहिंतैं, चेतन सार निकारै । द्यानत मगन सदा तिसमाहीं, आप तरै पर तारै ॥ ज्ञानी० ॥ ८ ॥

---

१ आगामी-भविष्यकी चिन्ता ।

१६९ । राग—आसावरी ।

ज्ञानी ऐसो ज्ञान विचारै ॥ ज्ञानी० ॥ टेक ॥ नारि नपुंसक नर पद काया, आप अकाय निहारै ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ बामन वैश्य शूद्र औ क्षत्री, चारों भग लिँग लागे । भग वी[1] जासी भोग वि जासी, हम अविनाशी जागे ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ पंडित मूरख पोथिनिमाहीं, पोथी नैनन सूझै । नैन जोति रवि चन्द उदयतैं, तेऊ अस्तत बूझै ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥ कायर सूर लड़नमें गि-नियै, लड़त जीव दुख पावै । सब हममें हम हैं सब-माहीं, मेरे कौन सतावै ॥ ज्ञानी० ॥ ४ ॥ कौन बजा-वे अरु को गावै, नाचै कौन नचावै । सुपने सा जग ख्याल मँड़ा हैं, मेरे मन यों आवै ॥ ज्ञानी० ॥ ५ ॥ एक कमाऊ एक निखट्टू, दोनों दरब पसारा । आवै सुख जावै दुख पावै, मैं सुख दुखसों न्यारा ॥ ज्ञानी० ॥ ६ ॥ एक कुटुम्बी एक फकीरा, दोनों घर वन चा-हैं । घर भी काको वन भी काको, ममता-दाहनि-दाहैं ॥ ज्ञानी० ॥ ७ ॥ सोवत जागत ब्रत अरु खातैं, गर्व निगर्व निहारै । द्यानत ब्रह्म मगन निशि वासर, करम-उपाधि विडारै ॥ ज्ञानी० ॥ ८ ॥

१७० । राग—आसावरी जोगिया ।

भाई ! ब्रह्म विराजै कैसा ? ॥ भाई० ॥ टेक ॥ जा-को जान परमपद लीजे, ठीक करीजे जैसा ॥ भाई०

---

१ भी ।

॥ १ ॥ एक कहै यह पवन रूप है, पवन देहको लागै। जब नारीके उदर समावै, क्यों नहिं नारी जागै ॥ भाई० ॥ २ ॥ एक कहै यह बोलै सो ही, बैन कानतैं सुनिये। कान जीवको जानैं नाहीं, यह तो बात न सुनिये[1] ॥ भाई० ॥ ३ ॥ एक कहै यह फूल-वासना, बाँस[2] नाक सब जानै। नाक ब्रह्मको वेदै नाहीं, यह भी बात न मानै ॥ भाई० ॥ ४ ॥ भूमि आग जल पवन व्योमैं[3] मिलि, एक कहै यह हूवा। नैनादिक तत्त्वनिको देखैं, लखैं न जीया मूवा ॥ भाई० ॥ ५ ॥ धूप चाँदनी दीप जोतसौं, ये तो परगट सूझै। एक कहै है लोहूमें सो, मृतक भरो नहिं बूझै ॥ भाई० ॥ ६ ॥ एक कहै किनहू नहिं जाना, ब्रह्मादिक वहु खोजा। जानौ जीव कह्यौ क्यों तिनने, भाषैं जान्यो होजा ॥ भाई० ॥ ७ ॥ इत्यादिक मतकलिपत बातैं, जो बोलैं सो विघटै। द्यानत देखनहारो चेतन, गुरुकिरपातैं प्रगटै ॥ भाई० ॥ ८ ॥

१७१। राग—आसावरी जोगिया।

भाई कौन कहै घर मेरा ॥ भाई० ॥ टेक ॥ जे जे अपना मान रहे थे, तिन सबने निरवेरा ॥ भाई० ॥ १ ॥ प्रात समय नृप मन्दिर ऊपर, नाना शोभा देखी। पहर चढ़े दिन कालचालतैं, ताकी धूल न पेखी ॥

---

१ समझिये। २ गंध। ३ आकाश।

॥ भाई० ॥ २ ॥ राज कलश अभिषेक लच्छमी, पहर चढ़ैं दिन पाई । भई दुपहर चिता तिस जलती, मीतों[1] टोक जलाई ॥ भाई० ॥ ३ ॥ पहर तीसरे नाचैं गावैं, दान वहुत जन दीजे । सांझ भई सब रोवन लागे, हाहाकार करीजे ॥ भाई० ॥ ४ ॥ जो प्यारी नारीको चाहै, नारी नरको चाहै । वे नर और किसीको चाहैं, कामानल[2] तन दाहै ॥ भाई० ॥ ५ ॥ जो प्रीतम लखि पुत्र निहोरै, सो निज सुतको लोरै । सो सुत निज सुतसों हित जोरै, आवत कहत न ओरै[3] ॥ भाई० ॥ ६ ॥ कोड़ाकोड़ि दरव जो पाया, सागरसीम[4] दुहाई । राज किया मन अब जम आवै, विषकी खिचड़ी खाई ॥ भाई० ॥७ ॥ तू नित पोखै वह नित सोखै, तू हारै वह जीतै । द्यानत जु कछु भजन बन आवै, सोई तेरो मीतै[5] ॥ भाई० ॥ ८ ॥

१७२ । राग—आसावरी जोगिया ।

काया ! तू चल संग हमारे ॥ काया० ॥ टेक ॥ निशि दिन दोनों रहैं एकठे, अब क्यों नेह निवारै ॥ काया० ॥ १ ॥ पट आभूषन सौंधे आछे, अन्न पात्र नित दीने । ते सब ले दल मल करि डारे, फिर दीनें रस भीने ॥ काया० ॥ २ ॥ पांच वरन रस पांच गंध दो, फरस

१ मित्रोंने । २ कामरूपी अग्नि. । ३ छोर-ठिकाना । ४ समुद्रके छोरतक । ५ मित्र ।

आठ सुर सातैं । सब भुगताये सूम कहाये, दान दियो नहिं जातैं ॥ काया० ॥ ३ ॥ तेरे कारन जीव सँहारे, बोल्यो झूठ अपारा । चोरी की परनारी सेई, डूबे परिग्रह धारा ॥ काया० ॥ ४ ॥ तोहि सगे उद्यम करि पोषे, भूलि न अपना कोई । एतेपर तू रीझै नाहीं, बुद्धि कहांतैं खोई ॥ काया० ॥ ५ ॥ द्यानत सुख दीये तू जानै, कृतघनि! लख उपगारा । मिथ्या मोहति मरत प्रलापै, भववनडोलनहारा ॥ काया० ॥ ६ ॥

१७३ । राग—आसावरी जोगिया ।

जीव! तैं मेरी सार न जानी ॥ जीव० ॥ टेक ॥ हम तुम बहुत बार मिल बिछुरे, आदि किन्हीं न पिछानी ॥ जीव० ॥ १ ॥ पाप पुन्य दो धुरके साथी, नरक सुरगलौं दौरैं । कह तैनैं को दिढ़ करि पोष्यो, सो करि है तुम गौरैं ॥ जीव० ॥ २ ॥ सीस आंख मुख कान पान पद, सब ही पच पच मूए । तैं अपनो हित क्यों नहिं कीना, हम कब आड़े हूए ॥ जीव० ॥ ३ ॥ जो कोई जन चाकर राखै, कण दै काम करावै । तू क्यों सोय रह्यो निशिवासर, पछताये क्या पावै ॥ जीव० ॥४॥ मैं करंई तूँबरि जो जानै, परिग्रह भार निकारै । छयकर राग दोष तप सोखै, भव जल पार उतारै ॥ जीव० ॥५॥ नर कायाको सुरपति तरसैं, कब मैं लैऊं दिच्छा ।

१ बीचमें पड़े—विरोधी हुए ।

आगैं पंच महाव्रत धरिये, करि यों द्यानत सिच्छा ॥ जीव० ॥ ६ ॥

१७४ । राग—रामकली ।

ऋषभदेव ऋषदेव सहाई ॥ ऋषभ० ॥ टेक ॥ अजित अजितरिपु संभव संभव, अभिनन्दन नन्दन लव लाई ॥ ऋषभ० ॥ १ ॥ सुमति सुमति भवि पदम पदम अलि, देत सुपास सुपास भलाई । चितचकोरचंदा चंदप्रभ, पुहपदन्त पुहपनि भजि भाई ! ॥ ऋषभ० ॥ २ ॥ शीतल शीतल जड़ता नासैं, श्रेयान श्रेयान जोत जगाई । वासुपूज्य वासव पद पूजैं, विमल विमल कीरति जग छाई ॥ ऋषभ ० ॥ ३ ॥ गुन अनन्त अघ अन्त अनंत हैं, धरम धरमवरपा वरपाई । शान्ति शान्त कुंथ्यादि जन्तुपर, कुंथुनाथ करुणा करवाई ॥ ऋषभ० ॥ ४ ॥ अरह अरहविधि मल्ल मल्लिवर, मुनिसुव्रत मुनि सुव्रत दाई । नमि नमि सुरनर नेमि धरमरथ, नेमिप्रभू काटैं भव-काई ॥ ऋषभ० ॥ ५ ॥ पास पास छेदी चहुँगतिकी, महावीर महावीर वड़ाई । द्यानत परमानँद पद कारन, चौवीसी नामारथ गाई ॥ ऋषभ० ॥ ६ ॥

१७५ ।

झूटा सपना यह संसार ॥ झूठा० ॥ टेक ॥ दीसत

---

१ कमल । २ भ्रमर । ३ पुष्पोंसे । ४ धरणेन्द्र । ५ धर्मरूपीरथकी नेमि अर्थात् धुरी । ६ नामोंका अर्थ ।

है विनसत नहिं वार ॥ झूठा० ॥ १ ॥ मेरा घर सबतैं सिरदार, रह न सकै पल एकमँझार ॥ झूठा० ॥ २ ॥ मेरे धन सम्पति अति सार, छांड़ि चलै लागै न अवार ॥ झूठा० ॥ ३ ॥ इन्द्रीविषै विषैफल धार, मीठे लगैं अन्त खयकार ॥ झूठा० ॥ ४ ॥ मेरो देह काम उनहार, सो तन भयो छिनकमें छार ॥ झूठा० ॥ ५ ॥ जननी तात भ्रात सुत नार, स्वारथ विना करत हैं ख्वार ॥ झूठा० ॥ ६ ॥ भाई शत्रु होंहिं अनिवार, शत्रु भये भाई बहु प्यार ॥ झूठा० ॥ ७ ॥ द्यानत सुमरन भजन अधार, आग लगैं कछु लेहु निकार ॥ झूठा० ॥ ८ ॥

१७६ ।

किसकी भगति किये हित होहि ॥ किसकी० ॥ टेक ॥ झूठ वात ना भावै मोहि ॥ किसकी० ॥ १ ॥ राम भजो दूजो जग नाहिं, आयो जोनीसंकटमाहिं[1] ॥ किसकी० ॥ २ ॥ कृष्ण भजो किन तीनों काल, निरदै ह्वै मार्‌यो शिशुपाल ॥ किसकी० ॥ ३ ॥ ब्रह्मा भजो सर्वजग-व्याप, खोई सृष्टि सह्यो दुख आप ॥ किसकी० ॥ ४ ॥ रुद्र भजो सबतैं सिरदार, सब जीवनिको मारनहार ॥ किसकी० ॥ ५ ॥ एक रूपको कीजे ध्यान, चिन्ता करै उसे हैरान ॥ किसकी० ॥ ६ ॥ भजो गनेश सदा रे! भाय, सो गजमुख परगट पशु-

१ योनिसंकटमें—गर्भवासमें ।

काय ॥ किसकी० ॥ ७ ॥ इन्द्र भजो निवसै सुरलोय, सो भी मरै अमर नहिं होय ॥ किसकी० ॥ ८ ॥ देवी भजो भजैं सब लोग, बकरे मारैं महा अजोग ॥ किसकी० ॥ ९ ॥ भजो शीतला थिर मन लाय, देखो ! डाँयनि लड़के खाय ॥ किसकी० ॥ १० ॥ किनहिं न जान्यो अपरंपार, झूठे सरव भगत संसार ॥ किसकी० ॥ ११ ॥ द्यानत नाम भजो सुखमूल, सो प्रभु कहाँ किधौं नभ[1]-फूल ॥ किसकी० ॥ १२ ॥

१७७।

परमेसुरकी कैसी रीत, मोहि बताओ मेरे मीत ॥ परमेसुर० ॥ टेक ॥ उपजावै संसारी सोय, मारे सो हत्यारो होय ॥ परमेसुर० ॥ १ ॥ जल थल अगन गगन भुविमाहिं, लघु दीरघ कीजे किहि ठाहिं ॥ परमेसुर० ॥ २ ॥ घट घट व्यापी सबमें वही, एक एक क्यों मारै सही ॥ परमेसुर० ॥ ३ ॥ पाप पुन्य करवावै आप, वेद कहै क्यों सुमरन जाप ॥ परमेसुर० ॥ ४ ॥ मारै दुष्ट सुष्ट[2] प्रतिपाल, दुष्ट बनावै क्यों विकराल ॥ परमेसुर० ॥ ५ ॥ जानै नहीं दुष्ट अज्ञान, ज्ञान विना कैसें भगवान ॥ परमेसुर० ॥ ६ ॥ राग न द्वेष न ज्ञायकरूप, द्यानत दरपन ज्यों चिद्रूप ॥ परमेसुर० ॥ ७ ॥

---

१ आकाशपुष्प। २ सज्जन।

१७८ ।

एक ब्रह्म तिहुँलोकमँझार, ऐसैं कहैं बनै नहिं यार ॥ एक० ॥ टेक ॥ और हुकमतैं मारै और, और पुकार करै उस ठौर ॥ एक० ॥ १ ॥ पट रस भोजन जीमैं धीर, भीख न पावै एक फकीर ॥ एक० ॥ २ ॥ धरमी सुरगमाहिं सुख करै, पापी नरक जाय दुख भरै ॥ एक० ॥ ३ ॥ एकरूप अविनाशी वस्त, खंड खंड क्यों भया समस्त ॥ एक० ॥ ४ ॥ शुद्ध निरंजन शुचि अविकार, क्यों कर ल्यो गरभ अवतार ॥ एक० ॥ ५ ॥ करम विना इच्छा क्यों भई, इच्छा भई शुद्धता गई ॥ एक० ॥ ६ ॥ जीव अनन्त भरे भुविमाहिं, द्यानत कर्म कटैं शिव जाहिं ॥ एक० ॥ ७ ॥

१७९ ।

त्रिभुवनमें नामी, कर करुना जिनस्वामी ॥ त्रिभुवन० ॥ टेक ॥ चहुँगति जनम मरन किमि भाख्यो, तुम सब अंतरजामी ॥ त्रिभुवन० ॥ १ ॥ करमरोगके वैद तुम्ही हो, करों पुकार अकामी । द्यानत पूरव पुन्य उदयतैं, शरन तिहारी पामी ॥ त्रिभुवन० ॥ २ ॥

१८० । राग—पंचम ।

सुन री ! सखी ! जहाँ नेम गये तहाँ, मोकहँ ले पहुँचावो री—हां ॥ सुन० ॥ टेक ॥ घर आँगन न सुहाय खिनक मुझ, अब ही पीव मिलावो री—हां ॥ सुन०

॥१॥ धन जोबन मेरे काम न ऐहै, प्रभुकी बात सुनावो री—हां ॥ सुन० ॥ २ ॥ द्यानत दरस दिखाय स्वामिको, भवआताप बुझावो री—हां ॥ ॥ सुन० ॥ ३ ॥

१८१।

तजि जो गये पिय मोह अनाहक (?), यह दुख कैसें भरिहौं री ॥ तजि० ॥ टेक ॥ मोसौं मोह रंच नहिं कीनों, मैं जा पाँयनि परिहौं री ॥ तजि० ॥ १ ॥ और ठौर मोहि दोप लगैगो, पीतमको सँग करिहौं री। द्यानत कृपा करैं स्वामी जब, तब भवसागर तरिहौं री ॥ तजि० ॥२॥

१८२।

हां चल री! सखी जहाँ आप विराजत, नेमि नवल व्रतधारी री! ॥ टेक ॥ जाय कहैं प्रभुसों विनती करि, किहिं औगुन जु विसारी री ॥ हां चल० ॥१॥ रजमति कहत बात मैं जानी, करी मुकतसों यारी री! द्यानत ता वनिताके ऊपर, तन मन वारौं डारी री! ॥ हां चलि० २

१८३।

कहा री! करौं कित जाऊं सखी मैं, नेमि गये वन ओरैं री ॥ टेक ॥ कहा चूक प्रभुसों मैं कीनीं, जो पीउ मोह न लोरै[1] री ॥ कहा री० ॥ १ ॥ अब वहां जैहौं विनती करिहौं, सनमुख ह्वै कर जोरै री। द्यानत हमें तारल्यो स्वामी, लैहुँ बलाइ[2] किरोरैं[3] री ॥ कहा री० ॥२॥

---

१ साथ रक्खें-प्यार करैं। २ वलैया। ३ करोड़ों।

१८४ ।

हमारे ये दिन यों ही गये जी ॥ हमारे० ॥ टेक ॥ कर न लियो कछु जप तप जी, कछु जप तप, वहु पाप बिसाहे नये जी ॥ हमारे० ॥ १ ॥ तन धन ही निज मान रहे, निज मान रहे, कवहूँ न उदास भये जी। द्यानत जे करि हैं करुना, करि हैं करुना, तेइ जीव लेखेमें लये जी ॥ हमारे० ॥ २ ॥

१८५ ।

मैं नूं भावैजी प्रभु चेत ना, मैं नूं भावै जी० ॥ टेक ॥ गुण रतनत्रय आदि विराजै, निज गुण काहू देत ना ॥ मैं नूं० ॥ १ ॥ सिद्ध विशुद्ध सदा अविनाशी, परगुण कवहूं लेत ना ॥ मैं नूं० ॥ २ ॥ द्यानत जो ध्याऊं सो पाऊं, पुद्गलसों कछु हेत ना ॥ मैं नूं० ॥ ३ ॥

१८६ । राग—धमाल ।

मैं वन्दा स्वामी तेरा ॥ मैं० ॥ टेक ॥ भव-भय-भंजन आदि निरंजन, दूर करो दुख मेरा ॥ मैं० ॥ १ ॥ नाभिरायनन्दन जगवन्दन, मैं चरननका चेरा ॥ मैं० ॥ ॥ २ ॥ द्यानतऊपर करुना कीजे, दीजे शिवपुर-डेरा ॥ मैं० ॥ ३ ॥

---

१ कमाये । २ मतलव ।

१८७।

त्यागो त्यागो मिथ्यातम, दूजो नहीं जाकी सम, तोह दुख दाता तिहूँ, लोक तिहूँ काल ॥ त्यागो० ॥१॥ चेतन अमलरूप, तीन लोक ताको भूप, सो तो डार्यो भवकूप, दे नहिं निकाल ॥ त्यागो० ॥ २ ॥ एकसौ चालीस आठ, प्रकृतिमें यह गांठ, जाके त्यागैं पावै शिव, गहैं भव जाल ॥ त्यागो० ॥ ३ ॥ द्यानत यही जतन, सुनो तुम भविजन, भजो जिनराज तातैं, भाजैं है हाल ॥ त्यागो० ॥ ४ ॥

१८८।

मानों मानों जी चेतन यह, विषै भाग छांड़ देहु, विषै की समान कोऊ, नाहीं विष आन ॥ मानों० ॥ टेक ॥ तात मात पुत्र नार, नदी नाव ज्यों निहार, जोवन गुमान जानों, चपैला समान ॥ मानों० ॥ १ ॥ हाथी रथ प्यादे वार्जे, इनसों न तेरो काज, सुपने समान देख, कहा गरवान ॥ मानों० ॥ २ ॥ ये तो देहके मिलापी, तू तो देहसों अव्यापी, ज्ञान दृष्टि धर देखि, चेतिये सुजान ॥ मानों० ॥ ३ ॥

१८९।

दुरगति गमन निवारिये, घर आव सयाने नाहँ हो

---

१ इसके प्रत्येक चरणके अन्तमें एक 'है' शब्द मिलानेसे इकतीसा कवित्त (मनहरन) बन जाता है। २ इसके अन्तचरणोंमें 'रे' मिलानेसे मनहरन बन जावेगा। ३ बिजली। ४ घोड़े। ५ नाथ।

॥ दुरगति० ॥ टेक ॥ पर घर फिरत बहुत दिन बीते, सहित विविध दुखदाह हो । निकसि निगोद पहुँचवो शिवपुर, बीच बसैं क्या लाह[1] हो ॥ दुरगति० ॥ २ ॥ द्यानत रतनत्रय मारग चल, जिहिं मग चलत हैं सौह[2] हो ॥ दुरगत० ॥ ३ ॥

१९० ।

स्वामी नाभिकुमार ! हमकौं क्यों न उतारो पार ॥ स्वामी० ॥ टेक ॥ मंगलमूरति है अविकार, नाम भजैं भजैं विघन अपार ॥ स्वामी० ॥ १ ॥ भवभयभंजन महिमा सार, तीन लोकजिय तारनहार ॥ स्वामी० ॥२॥ द्यानत आये शरण तुम्हार, तुमको है सब शरम हमार ॥ स्वामी० ॥ ३ ॥

१९१ ।

चेतन ! मान हमारी बतियां ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ यह देही तुझ लार न चलसी, क्यों पोषै दिन रतियां ॥ चेतन० ॥ १ ॥ जीवघाततैं नरक जायसी, आँच सहोगे ततियां ॥ चेतन० ॥ २ ॥ द्यानत सुरग मुकति सुखदाई, करुणा आनो छतियां ॥ चेतन० ॥ ३ ॥

१९२ ।

कब हौं मुनिवरको व्रत धरिहौं ॥ कब० ॥ टेक ॥ सकल परिग्रह तिन[3] सम तजिकै, देहसों नेह न करि-

---

१ लाभ । २ महाजन । ३ तृण —तिनकाके समान ।

हौं ॥ कब० ॥ १ ॥ कब बावीस परीषह सहिकै, राग दोष परिहरिहौं ॥ कब० ॥ २ ॥ द्यानत ध्यान-यान[1] कब चढ़िकै, भवदधि पार उतरिहौं ॥ कब० ॥ ३ ॥

१९३।

आतम अनुभव सार हो, अब जिय सार हो, प्राणी ॥ आतम० ॥ टेक ॥ विषयभोगफणिंने[2] तोहि काट्यो, मोह लहर चढ़ी भार हो ॥ आतम० ॥ १ ॥ याको मंत्र ज्ञान है भाई, जप तप लहरिउतार हो ॥ आतम० ॥ २ ॥ जनमजरामृत रोग महा ये, तैं दुख सह्यो अपार हो ॥ आतम० ॥ ३ ॥ द्यानत अनुभव-औषध पीके, अमर होय भव पार हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥

१९४।

प्राणी ! सोऽहं सोऽहं ध्याय हो ॥ प्राणी० ॥ टेक ॥ बाती दीपं[3] परस दीपक है, बूंद जु उदधि कहाय हो। तैसैं परमातम ध्यावै सो, परमातम ह्वै जाय हो ॥ प्राणी० ॥ १ ॥ और सकल कारज है थोथो, तोहि महा दुखदाय हो। द्यानत यही ध्यानहित कीजे, हूजे त्रिभुवनराय हो ॥ प्राणी० ॥ २ ॥

१९५।

चेतन ! तुम चेतो भाई, तीन जगतके नाथ ॥

---

१ ध्यानरूपी जहाज। २ भुजंगने। ३ दीपका स्पर्श करके, दीपकके संयोगसे।

चेतन० ॥ टेक ॥ ऐसो नरभव पायकैं, काहे विषया लवलाई ॥ चेतन० ॥ १ ॥ नाहीं तुमरी लाईकी[1], जोवन धन देखत जाई । कीजे शुभ तप त्यागकै, द्यानत हूजे अकषाई ॥ चेतन० ॥ २ ॥

१९६ ।

नेमिजी तो केवलज्ञानी, ताहीको ध्याऊं ॥ नेमिजी० ॥ टेक ॥ अमल अखंडित चेतनमंडित, परमपदारथ पाऊं ॥ नेमिजी० ॥ १ ॥ अचल अवाधित निज गुण छाजत, वचनमें कैसे वताऊं । द्यानत ध्याइये शिवपुर जाइये, वहुरि न जगमें आऊं ॥ नेमि० ॥ २ ॥

१९७ ।

चेतनजी ! तुम जोरत हो धन, सो धन चलत नहीं तुम लार ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ जाको आप जान पोपत हो, सो तन जलकै ह्वै है छार ॥ चेतन० ॥ १ ॥ विषय भोगके सुख मानत हो, ताको फल है दुःख अपार । यह संसार वृक्ष सेमरको[2], मान कह्यो हौं कहत पुकार ॥ चेतन० ॥ २ ॥

१९८ ।

प्राणी ! तुम तो आप सुजान हो, अव जी सुजान हो ॥ प्राणी० ॥ टेक ॥ अशुचि अचेत विनश्वर रूपी,

---

१ योग्यता । २ सेमर वृक्षके फूल देखनेमें सुन्दर होते हैं, परन्तु उनमें जो फल लगते हैं, वे निस्सार होते हैं ।

पुद्गल तुमतैं आन हो । चेतन पावन अखय अरूपी, आतमको पहिचान हो ॥ प्राणी० ॥१॥ नाव धरेकी लाज निवाहो, इतनी विनती मान हो। भव भव दुखको जल दे द्यानत, मित्र! लहो शिवथान हो ॥ प्राणी० ॥ २ ॥

१९९।

आपमें आप लगा जी सु हौं तो ॥ आप० ॥ टेक ॥ सुपनेका सुख दुख किसके, सुख दुख किसके, मैं तो अनुभवमाहिं जगा जी-सु हौं तो ॥ आप० ॥ १ ॥ पुद्गल तो ममरूप नहीं, ममरूप नहीं, जैसेका तैसा सगा जी-सु हौं तो ॥ आप० ॥ २ ॥ द्यानत मैं चेतन वे जड़, वे जड़ हैं, जड़सेती पगा जी, सु हौं तो ॥ आप० ॥ ३ ॥

२००।

वीतत ये दिन नीके, हमको ॥ वीतत० ॥ टेक ॥ भिन्न दरव तत्वनितैं धारे, चेतन गुण हैं जीके ॥ वीतत० ॥ १ ॥ आप सुभाव आपमैं जान्यो, सोइ धर्म है टीके ॥ वीतत० ॥ २ ॥ द्यानत निज अनुभव रस चाख्यो, पररस लागत फीके ॥ वीतत० ॥ ३ ॥

२०१।

कौन काम अब मैंने कीनों, लीनों सुर अवतार हो ॥ कौन० ॥टेक॥ गृह तजि गहे महाव्रत शिवहित, विफल फल्यो आचार हो ॥ कौन० ॥१॥ संयम शील ध्यान तप

खय भयो, अव्रत विषय दुखकार हो । द्यानत कब यह थिति पूरी है, लहों मुकतपद सार हो ॥ कौन० ॥२॥

२०२।

रे ! मन गाय लै, मन गाय लै, श्रीजिनराय ॥ रे मन० ॥ टेक ॥ भवदुख चूरैं आनंद पूरैं, मंगलके समुदाय ॥ रे मन० ॥ १ ॥ सबके स्वामी अन्तरजामी, सेवत सुरपति पाय । कर ले पूजा और न दूजा, द्यानत मन-वच-काय ॥ रे मन० ॥ २ ॥

२०३ । राग—प्रभाती ।

देखे जिनराज आज, राजऋद्धि पाई ॥ देखे० ॥ टेक ॥ पहुपवृष्टि महा इष्ट, देवदुंदुभी सुमिष्ट, शोक करै भृष्ट सो, अशोकतरु बड़ाई ॥ देखे० ॥ १ ॥ सिंहासन झलमलात, तीन छत्र चित सुहात, चमर फरहरात मनो, भगति अति बढ़ाई ॥ देखे० ॥ २ ॥ द्यानत भामण्डलमें, दीसैं परजाय सात, बानी तिहुँकाल झरै, सुरशिवसुखदाई ॥ देखे० ॥ ३ ॥

२०४।

साधजीने बानी तनिक सुनाई ॥ साधजी० ॥ टेक ॥ गौतम आदि महा मिथ्याती, सरधा निहचै आई ॥ साधजी० ॥ १ ॥ नृप विभूति छयवान विचारी, बारह भावन भाई ॥ साधजी० ॥ २ ॥ द्यानत हीन शकति हू देखौ, श्रावक पदवी पाई ॥ साधजी० ॥ ३ ॥

२०५।

वे प्राणी! सुज्ञानी, जान जान जिनवानी ॥ वे० ॥ ॥ टेक ॥ चन्द सूर हू दूर करैं नाहिं, अन्तरतमकी हानी ॥ वे० ॥ १ ॥ पच्छ सकल नय भच्छ करत है, स्याद्-वादमें सानी ॥ वे० ॥ २ ॥ द्यानत तीनभवन-मन्दिरमें, दीवट एक बखानी ॥ वे० ॥ ३ ॥

२०६।

लाग रह्यो मन चेतनसों जी ॥ लाग० ॥ टेक ॥ सेवक सेवसेव सेवक, मिल, सेवा कौंन करै पनसों जी ॥ लाग० ॥ १ ॥ ज्ञान सुधा पी वम्यो विषय विष, क्यों कर लागि सकै रसनसों जी ॥ लाग० ॥२॥ द्यानत आप-आप निरविकलप, कारज कवन भवन नियसों जी ॥ लाग० ॥ ३ ॥

२०७।

हम आये हैं जिनभूप!, तेरे दरसनको ॥ हम० ॥ टेक ॥ निकसे घर आरतिकूप, तुम पद परसनको ॥ हम० ॥ १ ॥ वैननिसों सुगुन निरूप, चाहैं दरसनकों ॥ हम० ॥ २ ॥ द्यानत ध्यावैं मन रूप, आनँद बरसन को ॥ हम० ॥ ३ ॥

२०८।

तुम तार करुनाधार स्वामी! आदिदेव निरंजनो ॥ ॥ तुम० ॥ टेक ॥ सार जग आधार नामी, भविक जन-

मनरंजनो ॥ तुम० ॥ १ ॥ निराकार जमी[1] अकामी, अमल देह असंजनो ॥ तुम० ॥ २ ॥ करौ द्यानत मुकतिगामी, सकल भव-भय-भंजनो ॥ तुम० ॥ ३ ॥

२०९ ।

जिनवानी प्रानी! जान लै रे ॥ जिनवानी० ॥ टेक ॥ छहों दरव परजाय गुन सरव, मन नीके सरधान लै रे ॥ जिनवानी० ॥ १ ॥ देव धरम गुरु निहचै धर उर, पूजा दान प्रमान लै रे ॥ जिनवानी० ॥ २ ॥ द्यानत जान्यो जैन वखान्यो, ॐ अक्षर मन आन लै रे ॥ जिनवानी० ॥ ३ ॥

२१० । राग—ललित । (झंझोटी)

ये दिन आछे लहे जी लहे जी ॥ ये० ॥ टेक ॥ देव धरम गुरूकी सरधा करि, मोह मिथ्यात दहे जी दहे जी ॥ ये० ॥ १ ॥ प्रभु पूजे सुने आगमको, सतसंगतिमाहिं रहे जी रहे जी ॥ ये० ॥ २ ॥ द्यानत अनुभव ज्ञानकला कछु, संजम भाव गहे जी गहे जी ॥ ये० ॥ ३ ॥

२११ ।

इक अरज सुनो साहिव मेरी ॥ इक० ॥ टेक ॥ चेतन एक वहुत जड़ घेस्यो, दई आपदा वहुतेरी ॥ ॥ इक० ॥ १ ॥ हम तुम एक दोय इन कीने, विन कारन वेरी गेरी ॥ इक० ॥ २ ॥ द्यानत तुम तिहुँ ज-

1 यमी यावज्जीवत्यागी ।

गके राजा, करो जु कछू खातिर मेरी ॥ इक० ॥ ३ ॥

२१२।

जिन साहिब मेरे हो, निबाहिये दासको ॥ जिन० ॥ टेक ॥ मोह महातम घेर भयो है, कीजिये ज्ञान प्रकासको ॥ जिन० ॥ १ ॥ लोभरोगके वैद प्रभूजी, औषध द्यो गर्द नासको ॥ जिन० ॥ २ ॥ द्यानत क्रोध-की आग बुझावो, बरस छिमा जलरासको ॥ जिन० ॥ ॥ ३ ॥

२१३।

चेतन! मान लै बात हमारी ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ पुद्गल जीव जीव पुद्गल नहिं, दोनोंकी विधि न्यारी ॥ चेतन० ॥ १ ॥ चहुँगतिरूप विभाव दशा है, मोख-माहिं अधिकारी। द्यानत दरवित सिद्ध विराजै, सोहं जपि सुखकारी ॥ चेतन० ॥ २ ॥

२१४।

निज जतन करो गुन-रतननिको, पंचेन्द्रीविषय सभी तसकर ॥ निज० ॥ टेक ॥ सत्य कोट खाई करुनामय, बाग विराग छिमा भुवि भर ॥ निज० ॥ १ ॥ जीव भूप तन नगर बसै है, तहँ कुतवाल धरमको कर ॥ ॥ निज० ॥ २ ॥ द्यानत जब भंडार न जावै, तब सुख पावै साहु अमर ॥ निज० ॥ ३ ॥

---

१ बीमारी।

२१५।

आतम जाना, मैं जाना ज्ञानसरूप ॥ आतम० ॥ टेक ॥ पुद्गल धर्म अधर्म गगन जम, सब जड़ मैं चिद्रूप ॥ आतम० ॥ १ ॥ दरव भाव नोकर्म नियारे, न्यारो आप अनूप ॥ आतम० ॥ २ ॥ द्यानत पर-परनति कब विनसै, तब सुख विलसै भूप ॥ आतम० ॥ ३ ॥

२१६।

सांचे चन्द्रप्रभू सुखदाय ॥ सांचे० ॥ टेक ॥ भूमि सेत अम्रतवरषाकरि, चंद नामतैं शोभा पाय ॥ सांचे० ॥ १ ॥ नर वरदाई कौन वड़ाई, पशुगन तुरत किये सुरराय ॥ सांचे० ॥ २ ॥ द्यानत चन्द असंखनिके प्रभु, सारेथ नाम जपों मन लाय ॥ सांचे० ॥ ३ ॥

२१७।

ए मान ये मन कीजिये भज प्रभु तज सब वात हो॥ ए मन० ॥ टेक॥ मुख दरसत सुख वरसत प्रानी, विघन विमुख है जात हो ॥ ए मन० ॥ १ ॥ सार निहार यही शुभ गतिमें, छह मत मानै ख्यात हो ॥ ॥ ए मन० ॥ २ ॥ द्यानत जानत स्वामि नाम धन, जस गावैं उठि प्रात हो ॥ ए मन० ॥ ३ ॥

२१८।

सो हां दीव (सोभा देवें ?) साधु तेरी वातड़ियां॥

---

१ कालद्रव्य । २ यथा नाम तथा गुण ।

सोहां० ॥ टेक ॥ दोष मिटावैं हरष चढ़ावैं, रोग सोग भय घातड़ियां ॥ सोहां० ॥ १ ॥ जग दुखदाता तुमही साता, धनि ध्यावै उठि प्रातड़ियां ॥ सोहां ॥ ॥ २ ॥ द्यानत जे नरनारी गावैं, पावैं सुख दिन रातड़ियां ॥ सोहां ॥ ३ ॥

२१९ ।

तैं चेतन करुणा न करी रे ॥ तैं० ॥ टेक ॥ यातैं पूरी आव न पावै, आरँभ रीति हिये पकरी रे ॥ तैं० ॥ ॥ १ ॥ आपन तिंन सम दुःख न सहिकै, औरन मारत लै लकरी रे ॥ तैं० ॥ २ ॥ द्यानत आप समान सबै हैं, कुंथू आदिक अन्त करी रे ॥ तै० ॥ ३ ॥

२२० ।

काम सरे सब मेरे, देखे पारसस्वाम ॥ काम०॥टेक॥ सपत फना अहि सीस विराजै, सात पदारथ धाम ॥ काम० ॥ १ ॥ पदमासन शुभ बिंब अनूपम, श्याम-घटा अभिराम ॥ काम० ॥ २ ॥ इंद फनिंद नरिंदनि स्वामी, द्यानत मंगलठाम ॥ काम० ॥ ३ ॥

२२१ ।

तेरो संजम विन रे, नरभव निरफल जाय ॥ तेरो० टेक ॥ वरप मास दिन पहर महूरत, कीजे मन वच

---

१ तिनका [तृण] के समान । २ कुंथुआदि छोटे प्राणियोंसे लेकर ' अन्त करी ' अर्थात् हाथी जैसे बड़े जीवोंतक ।

काय ॥ तेरो० ॥ १ ॥ सुरग नरक पशु गतिमें नाहीं, कर आलस छिटकाय ॥ तेरो० ॥ २ ॥ द्यानत जा बिन कबहुँ न सीझैं, राजविषैं जिनराय ॥ तेरो० ॥३॥

२२२ ।

जिनरायके पाय सदा शरनं ॥ जिन० ॥ टेक ॥ भव जल पतित निकारन कारन, अन्तरपापतिमिर हरनं ॥ जिनराज० ॥ १ ॥ परसी भूमि भई तीरथ सो, देव-मुकुट-मनि-छवि धरनं ॥ जिनराज० ॥ २ ॥ द्यानत प्रभु-पद-रज कब पावै, लागत भागत है मरनं ॥ जिनराज० ॥ ३ ॥

२२३ ।

परमारथ पंथ सदा पकरौ ॥ परमारथ० ॥ टेक ॥ कै अरचा परमेश्वरजीकी, कै चरचा गुन चित्त धरौ ॥ परमारथ० ॥ १ ॥ जप तप संजम दान छिमा करि, परधन परतिय देख डरौ ॥ परमारथ० ॥ २ ॥ द्यानत ज्ञान यही है चोखा, ध्यानसुधामृत पान करौ ॥ परमारथ० ॥ ३ ॥

२२४ ।

हथनापुर वंदन जइये हो ॥ हथनापुर० ॥ टेक ॥ शान्ति कुंथु अर मल्ल विराजैं, पूजा करि सुख पइये हो ॥ हथनापुर० ॥ १ ॥ श्रेयँसकुमर भयो दानेश्वर, सो दिन अब लौं गइये हो ॥ हथनापुर० ॥ २ ॥ द्यानत

वन्दौं थानक नामी, स्वामीकी लौं लइये हो ॥ हथनापुर० ॥ ३ ॥

२२५ ।

सुरनरसुखदाई, गिरनारि चलौ भाई ॥ सुर० ॥टेक॥ बाल जती नेमीश्वर स्वामी, जहँ शिवरिद्धि कमाई ॥ सुर० ॥ १ ॥ कोड़ बहत्तर सात शतक मुनि, तहँ पंचमगति पाई ॥ सुर० ॥ २ ॥ तीरथ महा महाफलदाता, द्यानत सीख बताई ॥ सुर० ॥ ३ ॥

२२६ ।

भाई धनि मुनि ध्यान लगायके खरे हैं ॥ भाई० ॥ टेक ॥ मूसल भारसी धार परै है, बिजुली कड़कत सोर करै है ॥ भाई० ॥ १ ॥ रात अँध्यारी लोक डरे हैं, साधुजी आपनि करम हरे हैं ॥ भाई० ॥ २ ॥ झंझा पवन चहूँ दिशि बाजैं, बादर घूम घूम अति गाजैं ॥ भाई० ॥ ३ ॥ डंस मसक बहु दुख उपराजैं, द्यानत लाग रहे निज काजैं ॥ भाई० ॥ ४ ॥

२२७। राग—सोरठ ।

निरविकलप जोति प्रकाश रही ॥ निर० ॥ टेक ॥ ना घट अन्तर ना घट बाहिर, वचननिसौं किनहू न कही ॥ निर० ॥ १ ॥ जीभ आंख बिन चाखी देखी, हाथनिसौं किनहू न गही ॥ निर० ॥ २ ॥ द्यानत

निज–सर-पद्म-भ्रमर है, समता जोरैं साधु लही॥ निर०॥ ३॥

२२८।

अनहद शबद सदा सुन रे॥ अनहद०॥ टेक॥ आपहि गनै और न जानै, कान विना सुनिये धुन रे॥ अनहद०॥ १॥ भ्रमर गुंज सम होत निरन्तर, ता अन्तरगत चित चुन रे॥ अनहद०॥ २॥ द्यानत तब लौं जीवनमुक्ता, लागत नाहिं करम–घुन रे॥ अनहद०॥ ३॥

२२९।

गिरनारिपै नेमि विराजत हैं॥ गिर०॥ टेक॥ काउसग्ग लम्बित भुज दोऊ, वन गज पूजा साजत हैं॥ गिर०॥ १॥ नासादृष्टि विलोक सिंह मृग, वैर जनमके भाजत हैं॥ गिर०॥ २॥ द्यानत सो गिरि वन्दत प्रानी, पुन्य बहुत उपराजत हैं॥ गिर०॥ ३॥

२३०।

अब मैं जाना आतमराम॥ अब०॥ टेक॥ इह परलोक थोक सुख साधै, तज चिन्ता धन धाम॥ अब०॥ १॥ जनम मरन भय दूर भगाया, पाया अमर मुकाम॥ अब०॥ २॥ द्यानत ज्ञान सुधारस चाखो, नाखो विष दुख ठाम॥ अब०॥ ३॥

---

१ कमल। २ कायोत्सर्ग। ३ उपार्जित करते हैं, कमाते हैं।

२३१ । राग—करिखा ।

जानो धन्य सो धन्य सो धीर वीरा । मदन सौ सुभट जिन, चटक दे पट कियो ॥ धन्य० ॥ टेक ॥ १ ॥ पांच-इन्द्री-कटक झटक सब वश कस्यो, पटक मन भूप कीनों जँजीरा ॥ धन्य सो० ॥ २ ॥ आस रंचन नहीं पास कंचन नहीं, आप सुख सुखी गुन गन गँभीरा ॥ धन्य सो० ॥ ३ ॥ कहत द्यानत सही, तरन तारन वही, सुमर लै संत भव उदधि तीरा ॥ धन्य सो० ॥४॥

२३२ ।

जिन जपि जिन जपि, जिन जपि जीयरा ॥ जिन० ॥ टेक ॥ प्रीति करि आवै सुख, भीति करि जावै दुख, नित ध्यावै सनमुख, ईति नावै नीयरा ॥ जिन० ॥१॥ मंगल प्रवाह होय, विघनका दाह थोय, जस जागै तिहुँ लोय, शांत होय हीयरा ॥ जिन० ॥ २ ॥ द्यानत कहां लौं कहै, इन्द्र चन्द्र सेवा वहै, भव दुख पावकको, भक्ति नीर सीयरा ॥ जिन० ॥ ३ ॥

२३३ । राग—जैजैवन्ती ।

महावीर जीवाजीव खीर निर पाप ताप, नीर तीर धरमकी जर हैं ॥ महावीर० ॥ टेक ॥ आश्रव स्रवत नाहिं, बँधत न बंधमाहिं, निरजरा निजरत, संवरके घर हैं ॥ महावीर० ॥ १ ॥ तेरमौं है गुन-

१ इस टेकका अर्थ समझमें नहीं आया, दोनों प्रतियोंके पाठोंमें भ्रम है ।

थान, सोहत सुकल ध्यान, प्रगट्यो अनन्त ज्ञान, मुकतके वर हैं ॥ महावीर० ॥ २ ॥ सूरज तपत करै, जड़ता हू चंद धरै, द्यानत भजो जिनेश, दोऊ दोष न रहैं ॥ महावीर० ॥ ३ ॥

२३४ । राग—जैजैवंती ।

ज्ञान ज्ञेयमाहिं नाहिं, ज्ञेय हू न ज्ञानमाहिं, ज्ञान ज्ञेय आन आन, ज्यों मुकर घट है ॥ ज्ञान० ॥ टेक ॥ ज्ञान रहै ज्ञानीमाहिं, ज्ञान विना ज्ञानी नाहिं, दोऊ एकमेक ऐसे, जैसे श्वेत पट है ॥ ज्ञान० ॥ १ ॥ ध्रुव उतपाद नास, परजाय नैन भास, दरवित एक भेद, भावको न ठट है ॥ ज्ञान० ॥ २ ॥ द्यानत दरव परजाय विकलप जाय, तव सुख पाय जव, आप आप रट है ॥ ज्ञान० ॥ ३ ॥

२३५ । राग—जैजैवंती ।

चाहत है सुख पै न गाहत है धर्म जीव, सुखको दिवैया हित भैया नाहिं छतियां (?)॥ टेक ॥ दुखतैं डरै है पै भरै है अघसेती घट, दुखको करैया भय दैया दिन रतियां ॥ चाहत० ॥ १ ॥ वोयो है ववूलमूल खायो चाहै अंब भूल, दाह ज्वर नासनिको सोवै सेज ततियां

१ जयजयवन्ती रागमेंसे टेकें निकाल देनेसे ठीक इकतीसा कवित्त [मनहरन] बन जाता है । २ अन्य । ३ आईना—दर्पण । ४ दूसरी प्रतिमें 'वतियां' पाठ है । ५ वोया है । ६ आम्र-आम ।

॥ चाहत० ॥ २ ॥ द्यानत है सुख राई दुख मेरुकी कमाई, देखो राई चेतनकी चतुराई वतियां ॥ चाहत० ॥ ३ ॥

२३६ ।

देखो नाभिनंदन जगवंदन मदन भंजन गुन निरंजन राजको समाज साज, वन विचरत ॥ देखो० ॥ टेक ॥ इन्द्रिनिसौं नेह तोरि, सकल कपाय छोरि, आतमसौं प्रीत जोरि, धीरज धरत ॥ देखो० ॥ १ ॥ राग दोप मोप-कर, मोप भाव पोप कर, पोप विपैं सोप करि, करम हरत ॥ देखो० ॥ २ ॥ द्यानत मेरू समान, थिर तन मन ध्यान, इन्द्र धरनिंद्र आनि, पाँइन परत ॥ देखो० ॥ ३ ॥

२३७ ।

पिय वैराग्य लियो है, किस मिस लेहुं मनाई ॥ पिय० ॥ टेक ॥ मो मन वे उन मनमें मैं ना, काज होय क्यों माई ॥ पिय० ॥ १ ॥ सव सिंगार उतार सखी री, तिन विन कछु न सुहाई ॥ पिय० ॥ २ ॥ द्यानत जा विधितैं वर रीझैं, सो विधि मोहि वताई ॥ पिय० ॥ ३ ॥

२३८ ।

पिय वैराग्य लियो है, किस मिस देखन जाऊं ॥

१ राईके वरावर । २ इस टेकमें कुछ अक्षर ज्यादा मालूम होते हैं ।

पिय० ॥ टेक ॥ व्याहन आये पशु छुटकाये, तजि रथ जन पुर गाऊं॥ पिय० ॥ १ ॥ मैं सिंगारी वे अविकारी, क्यों नभ मुठियँ समाऊं ॥ पिय० ॥ २ ॥ द्यानत जोगनि है विरमाऊं, कृपा करैं निज ठाऊं ॥ पिय० ॥ ३ ॥

२३९ ।

री मा ! नेमि गये किंह ठाऊं ॥ री मा० ॥ टेक ॥ दिल मेरा कित हू लगता नाहिं, ढूंढौ सब पुर गाऊं ॥ री मा० ॥ १ ॥ भूषण वसन कुसुम न सुहावैं, कहा करूं कित जाऊं ॥ री मा० ॥ २ ॥ द्यानत कब मैं दरसन पाऊं, लागि रहौं प्रभु पाऊं ॥ री मा० ॥ ३ ॥

२४० ।

एरी सखी ! नेमिजीको मोहि मिलावो ॥ एरी० ॥ टेक ॥ व्याहन आये फिर कित धाये, ढूंढ़ि खबर किन लावो ॥ एरी० ॥ १ ॥ चोवा चन्दन अतर अरगजा, काहेको देह लगावो ॥ एरी० ॥ २ ॥ द्यानत प्रान वसैं पियके ढिग, प्रानके नाथ दिखावो॥एरी०॥३॥

२४१ ।

मूरतिपर वारी रे नेमि जिनिंद ॥ मूरति० ॥ टेक ॥ छपन कोटि यादवकुलमंडन, खंडन कामनरिंद ॥ मूरति० ॥ १ ॥ जाको जस सुरनर सब गावैं, ध्यावैं

१ ग्राम । २ आकाश । ३ मुट्ठीमें । ४ एक प्रतिमें 'नीमा' और एकमें 'नामा' पाठ है ।

ध्यान मुनिंद ॥ मूरति० ॥ २ ॥ द्यानत राजुल-प्रानन-प्यारे, ज्ञान-सुधाकर-इंद ॥ मूरति० ॥ ३ ॥

२४२ ।

अब मोहि तारि लै नेमिकुमार ॥ अब० ॥ टेक ॥ खग मृग जीवन बंध छुड़ाये, मैं दुखिया निरधार ॥ अब० ॥ १ ॥ मात तात तुम नाथ साथ दी, और कौन रखवार । द्यानत दीनदयाल दया करि, जगतैं लेहु निकार ॥ अब० ॥ २ ॥

२४३ ।

अब मोहि तारि लै नेमिकुमार ॥ अब० ॥ टेक ॥ चहुगँत चौरासी लख जौनी, दुखको वार न पार ॥ अब० ॥ १ ॥ करम रोग तुम वैद अकारन, औषध वैन-उचार । द्यानत तुम पद-यंत्र धारधर, भव-ग्रीषम-तप-हार ॥ अब० ॥ २ ॥

२४४ । राग—परज ।

नेमि ! मोहि आरति तेरी हो ॥ नेमि० ॥ टेक ॥ पशू छुड़ाये हम दुख पाये, रीत अनेरी[1] हो ॥ नेमि० ॥ १ ॥ जो जानत है[2] जोग धरेंगे, मैं क्यों घेरी हो । द्यानत हम हू संग लीजिये, विनती मेरी हो ॥ नेमि० ॥ २ ॥

---

१ अनोखी । २ थे ।

२४५ ।

मोहि तारि लै पारस स्वामी ॥ मोहि० ॥ टेक ॥ पारस परस कुधातु[1] कनक है, भयो नाम तैं नामी ॥ मोहि० ॥ १ ॥ पदमावति धरनिंदँ रिधि तुमतैं, जरत नाग जुग पामी । तुम संकटहर प्रगट सबनिमें, कर द्यानत शिवगामी ॥ मोहि० ॥ २ ॥

२४६ ।

दियैं दान महा सुख पावै ॥ दियें० ॥ टेक ॥ कूप नीर सम घर धन जानौं, कढ़ैं वढ़ै अकढ़ैं सड़ जावै ॥ दियैं० ॥ १ ॥ मिथ्याती पशु दानभावफल, भोगभूमि सुरवास वसावै । द्यानत गास[2] अरध चौथाई, मनवांछित विधि कब वनि आवै ॥ दियैं० ॥ २ ॥

२४७ ।

ए मेरे मीत ! निचींत कहा सोवै ॥ ए० ॥ टेक ॥ फूटी काय सराय पायकै, धरम रतन जिन खोवै ॥ ॥ ए० ॥ १ ॥ निकसि निगोद मुकत जैवेको, राहविषैं कहा जोवै ॥ ए० ॥ २ ॥ द्यानत गुरु जागुरू[3] पुकारैं, खबरदार किन होवै ॥ ए० ॥ ३ ॥

२४८ ।

प्यारे नेमसों प्रेम किया रे ॥ प्यारे० ॥ टेक ॥ उनहीके अरचैं चरचैं, परचैं सुख होत हिया रे ॥

---

१ लोहा । २ ग्रास-कौर । ३ जागरूक-जगनेवाले ।

प्यारे० ॥ १ ॥ उनहीके गुनको सुमरौं, उनही लखि जीय जिया रे ॥ प्यारे० ॥ २ ॥ द्यानत जिन प्रभु नाम रट्यो तिन, कोटिक दान दिया रे ॥ प्यारे० ॥ ३ ॥

२४९।

मोहि तारो जिन साहिब जी ॥ मोहि० ॥ टेक ॥ दास कहाऊं क्यों दुख पाऊं, मेरी ओर निहारो ॥ मोहि० ॥ १ ॥ षटकाया प्रतिपालक स्वामी, सेवकको न विसारो ॥ मोहि० ॥ २ ॥ द्यानत तारन तरन विरद तुम, और न तारनहारो ॥ मोहि० ॥ ३ ॥

२५०।

दास तिहारो हूं, मोहि तारो श्रीजिनराय। दास तिहारो भक्त तिहारो, तारो श्रीजिनराय ॥ दास० ॥ टेक ॥ चहुँगति दुखकी आगतैं अब, लीजे भक्त बचाय ॥ दास० ॥ १ ॥ विषय कषाय ठगनि ठग्यो, दोनोंतैं लेहु छुड़ाय ॥ दास० ॥ २ ॥ द्यानत ममता नाहरी-तैं, तुम विन कौन उपाय ॥ दास० ॥ ३ ॥

२५१।

गोतम स्वामीजी मोहि वानी तनक सुनाई ॥ गोतम० ॥ टेक ॥ जैसी वानी तुमने जानी, तैसी मोहि बताई ॥ गोतम० ॥ १ ॥ जा वानीतैं श्रेणिक समझ्यो, क्षायक समकित पाई ॥ गोतम० ॥ २ ॥ द्यानत भूप अनेक तरे हैं, वानी सफल सुहाई ॥ गोतम० ॥३॥

२५२ ।

देखे धन्य घरी, आज पावापुर महावीर ॥ देखे० ॥ टेक ॥ गोतमस्वामि चंदना मेंडक, श्रेणिकसुखकर धीर ॥ देखे० ॥ १ ॥ चार ओर भवि कमल विराजैं, भक्ति फूल सुख नीर । द्यानत तीरथनायक ध्यावै, मिट जावै भव भीर ॥ देखे० ॥ २ ॥

२५३ ।

आतम महबूब यार, आतम महबूब ॥ आतम० ॥ टेक ॥ देखा हमने निहार, और कुछ न खूब ॥ आतम० ॥ १ ॥ पंचिन्द्रीमाहिं रहै, पाचौंतैं भिन्न । बादलमें भानु तेज, नहीं खेद खिन्न ॥ आतम० ॥ २ ॥ तनमें है तजै नाहिं, चेतनता सोय । लाल कीच बीच पस्यो, कीचसा न होय ॥ आतम० ॥ ३ ॥ जामें हैं गुन अनन्त, गुनमें है आप । दीवेमें जोत जोतमें है दीवा व्याप ॥ आतम० ॥ ४ ॥ करमोंके पास वसै, करमों-से दूर । कमल वारिमाहिं लसै, वारिमाहिं जूर(?) ॥ आतम० ॥ ५ ॥ सुखी दुखी होत नाहिं, सुख दुखके-माहिं । दरपनमें धूप छाहिं, घाम शीत नाहिं ॥ आतम० ॥ ६ ॥ जगके व्योहाररूप, जगसौं निरलेप । अंवरमें गोद धस्यो, व्योमको न चेप ॥ आतम० ॥७॥ भाजनमें नीर भस्यो, थिरमें सुख पेख । द्यानत मनके विकार, टार आप देख ॥ आतम० ॥ ८ ॥

२५४ ।

चल पूजा कीजे, बनारसमें आय ॥ चल० ॥ टेक ॥ पूजा कीजे सब सुख लीजे, आनँद मंगल गाय ॥ चल० ॥ १ ॥ पारसनाथ सुपारस राजैं, देखत दुख मिट जाय ॥ चल० ॥ २ ॥ गंगाने परदक्षिण दीनी, ता पुरकी हित लाय ॥ चल० ॥ ३ ॥ द्यानत औसर आज़ हि आछो, वंदे प्रभुके पाय ॥ चल० ॥ ४ ॥

२५५ ।

सेठ सुदरसन तारनहार ॥ सेठ० ॥ टेक ॥ तीन वार दिढ़ शील अखंडित, पालैं महिमा भई अपार ॥ सेठ० ॥ १ ॥ सूलीतैं सिंघासन हूवा, सुर मिलि कीनौं जैजैकार ॥ सेठ० ॥ २ ॥ सह उपसर्ग लह्यो केवल-पद, द्यानत पायो मुकतिदुवार ॥ सेठ० ॥ ३ ॥

२५६ ।

पावापुर भवि वंदो जाय ॥ पावापुर० ॥ टेक ॥ परम पूज्य महावीर गये शिव, गोतम ऋषि केवलगुन पाय ॥ पावापुर० ॥ १ ॥ सो दिन अब लगि जग सब मानैं, दीवाली सम मंगल काय ॥ पावापुर० ॥ २ ॥ कातिक मावस निस तिस जागे, द्यानत अदभुत पुन्य उपाय ॥ पावापुर० ॥ ३ ॥

२५७ ।

जिनवरमूरत तेरी, शोभा कहिय न जाय ॥ जि-

न० ॥ टेक ॥ रोम रोम लखि हरष होत है, आनँद उर न समाय ॥ जिन० ॥ १ ॥ शांतरूप शिवराह बतावै, आसन ध्यान उपाय ॥ जिन० ॥ २ ॥ इंद फनिंद नरिंद विभौ सब, दीसत है दुखदाय ॥ जिन० ॥ ३ ॥ द्यानत पूजै ध्यावै गावै, मन वच काय लगाय ॥ जिन० ॥ ४ ॥

२५८ ।

तारि लै मोहि शीतल स्वामी ॥ तारि० ॥ टेक ॥ शीतल वचन चंद चन्दनतैं, भव-आताप-मिटावन नामी ॥ तारि० ॥ १ ॥ त्रिभुवननायक सब सुखदायक, लोकालोकके अंतरजामी ॥ तारि० ॥ २ ॥ द्यानत तुम जस कौन कहि सकै, वंदत पाँय भये शिवगामी ॥ तारि० ॥ ३ ॥

२५९ ।

तारनकों जिनवानी ॥ तारन० ॥ टेक ॥ मिथ्या चूरै सम्यक पूरै, जनम-जरामृत हानी ॥ तारन० ॥१॥ जड़ता नाशै ज्ञान प्रकाशै, शिव-मारग-अगवानी । द्यानत तीनों-लोक व्यथाहर, परम-रसायन मानी ॥ तारन० ॥ २ ॥

२६० ।

होरी आई आज रँग भरी है । रंग भरी रस भरी रसौं (?)भरी है ॥ होरी० ॥ टेक ॥ चेतन पिय आये

मन भाये, करुना केसर घोर धरी है ॥ होरी० ॥ १ ॥ ज्ञान गुलाल पीत पिचकारी, ध्यान महाधुनि होत खरी है ॥ होरी० ॥२॥ द्यानत सुमति कहै समतासों, अब मोपै प्रभु दया करी है ॥ होरी० ॥ ३ ॥

२६१।

करुनाकर देवा ॥ करुना० ॥ टेक ॥ एक जनम दुख कहि न सकत मुख, तुम सब जानत भेवा ॥ करुना० ॥ १ ॥ हूं तो अधम तुम अधम-उधारन, दोउ बानिक बन एवा। द्यानत भाग बड़ेतैं पाये, भूलौंगा नहिं सेवा ॥ करुना० ॥ २ ॥

२६२।

प्रभु तुम चरन शरन लीनौं, मोहि तारो करुणाधार ॥ प्रभु० ॥ टेक ॥ सात नरकतैं नव ग्रीवक लौं, रुल्यो अनन्ती बार ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ आठ करम वैरी बड़े तिन, दीनों दुःख अपार ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ द्यानतकी यह वीनती मेरो, जनम मरन निरवार ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

२६३।

एरे वीर रामजीसों कहियो बात ॥ एरे० ॥ टेक ॥ लोक निंदतैं हमकों छांड़ी, धरम न तजियो भ्रात ॥ एरे० ॥ १ ॥ आप कमायो हम दुख पायो, तुम सुख

हो दिनरात । द्यानत सीता थिर मन कीना, मंत्र जपै अवदात[1] ॥ एरे० ॥ २ ॥

२६४ ।

तुम अधम-उधारन-हार हो, हम भगतनिके दुख हरो ॥ तुम० ॥ टेक ॥ मैं अघ-आकर[2] तुम करुणाकर, जोग बन्यो यह सार हो ॥ तुम० ॥ १ ॥ पूत कूपूत होत है स्वामी, तात न निठुर विचार हो । द्यानत दीन अनाथ राखि लै, चरन शरन आधार हो ॥ तुम० ॥ २ ॥

२६५ ।

कोढ़ी पुरुष कनक तन कीनो, अंधन आंखि दई सुखदाई ॥ टेक ॥ वहिरे शब्द वैन गूंगेको, लूले हाथ पांगुले[3] पांई[4] ॥ कोढ़ी ॥ १ ॥ हिये-सुन्न[5] हू किये कवी-सुर, मांस खात कीने मुनिराई ॥ कोढ़ी ॥ २ ॥ द्यानत दुख काहे नहिं मेटत, मोहि शरन तुम मन वच काई ॥ कोढ़ी ॥ ३ ॥

२६६ ।

अव मोहि तार लै शान्ति जिनन्द ॥ अव० ॥ टेक ॥ कामदेव तीर्थंकर चक्री, तीनों पद सुखवृन्द ॥ अव० ॥ १ ॥ सुरनरजुत धरमामृत वरसत, शोभा पूरन चन्द । द्यानत तीनों लोक विघन छय, जाको नाम करन्द (?) ॥ अव० ॥ २ ॥

---

१ निर्मल । २ पापकी खानि । ३ लंगडे । ४ पांव । ५ हृदयशून्य ।

२६७ । राग—कान्हरा ।

शरन मोहि वासुपूज्य जिनवरकी ॥ शरन० ॥टेक ॥ अधम-उधारन पतित-उवारन, दाता रिद्धि अमरकी ॥ शरन० ॥ १ ॥ अशरन शरन अनाथनाथजी, दीनदयाल नजरकी । द्यानत वालजती जग-वंधू, वंधहरन शिवकरकी ॥ शरन० ॥ २ ॥

२६८ ।

प्रभु ! तुम नैनन-गोचर नाहीं ॥ प्रभु० ॥ टेक ॥ मो मन ध्यावै भगति वढ़ावै, रीझ न कछु मनमाहीं ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ जनम-जरा-मृत-रोग-वैद हो, कहा करैं कहां जाहीं ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ द्यानत भव-दुख-आग-माहितैं, राख चरण-तरु-छाहीं ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

२६९ ।

अव मोहि तार लै कुंथु-जिनेश ॥ अव० ॥ टेक ॥ कुंथादिक प्रानी प्रतिपालक, करुनासिंधु महेश ॥ अव० ॥ १ ॥ सम्यक-रतनत्रय-पद धारक, तारक जीव अशेष ॥ अव० ॥ २ ॥ द्यानत शोभा-सागर स्वामी, मुकतवधू-परमेश ॥ अव० ॥ ३ ॥

२७० ।

जाकौं इंद अहमिंद भजत, चंद धरनिंद भजत,

१ सच ।

व्यंतरके ईश भजत, भजत लोकपाल ॥ जाकौं० ॥टेक॥ राम भजत काम भजत, चक्री प्रतिकेसो[1] भजत, नारद मुनि कृष्ण रुद्र, भजत गुनमाल ॥ जाकौं० ॥ १ ॥ श्रुत-ज्ञानी औधि-ज्ञानी[2], मनपर्जै ज्ञानी ध्यानी, जपी तपी साधु सन्त, भजत तिहूँ काल ॥ जाकौं० ॥ २ ॥ राग-दोष-भाव-सुन्नँ[3], जाके नाहिं पाप पुन्न, ऐसे आदि-नाथ देव, द्यानत रखवाल ॥ जाकौं० ॥ ३ ॥

२७१ ।

ज्ञाता सोई सच्चा वे, जिन आतम अच्चा ॥ ज्ञाता० ॥ टेक ॥ ज्ञान ध्यानमें सावधान है, विषय भोगमें कच्चा वे, ॥ ज्ञाता० ॥ १ ॥ मिथ्या कथन सुननिको बहिरा, जैन वैनमें मच्चा वे ॥ ज्ञाता० ॥ २ ॥ मूढ़निसेती मुख नहिं बोलै, प्रभुके आगे नच्चा वे ॥ ज्ञाता० ॥३॥ द्यानत धरमी-को यों चाहै, गाय चहै ज्यों वच्चा वे ॥ ज्ञाता० ॥ ४ ॥

२७२ ।

जग ठग मित्र न कोय वे ॥ जग० ॥ टेक ॥ सब कोऊ स्वारथको साथी, स्वारथ विना न होय वे ॥ जग० ॥ १ ॥ यह दुनिया है चाहरबाजी (?), गाफिल होय न सोय वे ॥ जग० ॥ २ ॥ द्यानत जन तिनपर बलि-हारी, जे साधरमी लोय वे ॥ जग० ॥ ३ ॥

---

१ प्रतिकेशव-प्रतिनारायण । २ अवधिज्ञानी । ३ शून्य-रहित ।

२७३।

संसारमें साता नाहीं वे ॥ संसार० ॥ टेक ॥ छिनमें जीना छिनमें मरना, धन हरना छिनमाहीं वे ॥ संसार० ॥ १ ॥ छिनमें भोगी छिनमें रोगी, छिनमें छय-दुख पाहीं वे ॥ संसार० ॥ २ ॥ द्यानत लखके मुनि होवैं जे, ते पावैं सुख ठाहीं वे ॥ संसार० ॥ ३ ॥

२७४।

मेरी मेरी करत जनम सब बीता ॥ मेरी० ॥टेक॥ परजय-रत स्वस्वरूप न जान्यो, ममता ठगनीने ठग लीता ॥ मेरी० ॥ १ ॥ इंद्री-सुख लखि सुख विसरानौ, पांचों नायक वश नहिं कीता ॥ मेरी० ॥ २ ॥ द्यानत समता-रसके रागी, विपयनि त्यागी है जग जीता ॥ मेरी० ॥ ३ ॥

२७५।

यारी कीजै साधो नाल (?) ॥ यारी० ॥ टेक ॥ आपद मेटै संपद भेंटै, वे परवाह कमाल ॥ यारी० ॥ ॥ १ ॥ परदुख दुखी सुखी निज सुखसों, तन छीनें मन लाल ॥ यारी० ॥ २ ॥ राह लगावै ज्ञान जगावै, द्यानत दीनदयाल ॥ यारी० ॥ ३ ॥

२७६।

वे परमादी ! तैं आतमराम न जान्यो ॥ वे० ॥ टेक ॥ जाको वेद पुरान वखानै, जानैं हैं स्यादवादी ॥

वे० ॥ १ ॥ इंद फनिंद करैं जिस पूजा, सो तुझमें अविषादी ॥ वे० ॥ २ ॥ द्यानत साधु सकल जिह ध्यावैं, पावैं समता-स्वादी ॥ वे० ॥ ३ ॥

२७७।

भोर उठ तेरो, मुख देखों जिनदेवा ! ॥ भोर० ॥ टेक ॥ देवनके नाथ इन्द्र तेतो पूजैं मुनिवृन्द, ताके पति गनधर करैं तेरी सेवा ॥ भोर० ॥ १ ॥ अतिशय कारज वसु प्रतिहारज, अनँत चतुष्टय ठाकुर एवा । द्यानत तारौ इतनौ विचारौ, इसको एक हमारो सहेवा ॥ भोर० ॥ २ ॥

२७८।

जिनपद चाहै नाहीं कोय ॥ जिन० ॥ टेक ॥ तीरथंकर पुन्यपरकृति, पुन्यरासी जोय ॥ जिन० ॥ १ ॥ मुकति चाहै नाहिं लाहै, विना चाहैं होय ॥ जिन० ॥ २ ॥ चाह दाह मिटाय द्यानत, आप आप समोय ॥ जिन० ॥ ३ ॥

२७९।

लागा आतमसों नेहरा ॥ लागा० ॥ टेक ॥ चेतन देव ध्यान विधि पूजा, जाना यह तन देहरा[1] ॥ लागा० ॥ १ ॥ मैं ही एक और नाहिं दूजो, तीन लोकको

---

[1] मन्दिर ।

सेहरा ॥ लागा० ॥ २ ॥ द्यानत साहव सेवक एकै, वरसै आनँद मेहरा ॥ लागा० ॥ ३ ॥

२८०।

अव मोहि तार लै अर भगवान ॥ अव० ॥ टेक ॥ दीप विना शिवराह प्रकाशक, भव-तम-नाशक भान ॥ अव० ॥ १ ॥ ज्ञानसुधाकरजोत सदा धर, पूरन शशि सुखदान ॥ अव० ॥ २ ॥ भ्रम-तप-वारन जगहित-कारन, द्यानत मेघ समान ॥ अव० ॥ ३ ॥

२८१।

भज जम्बूस्वामी अन्तरजामी, सव जग नामी शुभ-वानी ॥ भज० ॥ टेक ॥ मथुरा-नगर मुकतमें पहुँचे, अंतकेवली शिवथानी ॥ भज० ॥ १ ॥ सहित अनन्त चतुष्टय साहिव, रहित आठ दश सुखदानी। द्यानत वन्दों पाप निकन्दों, भव-दुख-पावक-हर-पानी ॥ भज० ॥ २ ॥

२८२।

भज रे मन वा प्रभु पारसको ॥ भज० ॥ टेक ॥ मन वच काय लाय लौं इनकी, छांडि सकल भ्रम आ-रसको ॥ भज० ॥ १ ॥ अभयदान दै दुख सव हर लै, दूर करै भव कारसको। द्यानत गावै भगति वढ़ावै, चाहै पावै ता रसको ॥ भज० ॥ २ ॥

---

१ मुकुट। २ मेह वृष्टि। ३ दूर करनेवाले। ४ कालिमा।

२८३ ।

भजो जी भजो जिनचरनकमलको, छांड़ि विषय आमोदै जी ॥ भजो० ॥ टेक ॥ भाग उदय नरदेही पाई, अब मत जाहि निगोदै जी ॥ भजो० ॥ १ ॥ विषय भोग पाहनके वाहन, भव-जलमाहिं डबो दै जी । द्यानत और फिकर तज भज प्रभु, जो चाहै सो सो दै जी ॥ भजो० ॥ २ ॥

२८४ ।

लगन मोरी पारससों लागी ॥ लगन० ॥ टेक ॥ कमठ-मान-भंजन मनरंजन, नाग किये वड़भागी ॥ लगन० ॥ १ ॥ संकट चूरत मंगल मूरत, परम धरम अनुरागी । द्यानत नाम सुधारस स्वादत, प्रेम भगति मति पागी ॥ लगन० ॥ २ ॥

२८५ ।

वे साधौं जन गाई, कर करुना सुखदाई ॥ वे० ॥टेक॥ निरधन रोगी प्रान देत नाहिं, लहि तिहुँ जगठकुराई ॥ वे० ॥ १ ॥ क्रोड़ रास कन मेरु हेम[1] दे, इक जीवध अधिकाई ॥ वे० ॥ २ ॥ द्यानत तीन लोक दुख पावक, मेघझरी वतलाई ॥ वे० ॥ ३ ॥

२८६ ।

आरसी देखत मन आर[2] सी लागी ॥ आरसी० ॥

---

१ सुवर्ण । २ सुईसी चुभ गई ।

टेक ॥ सेत बाल यह दूत कालको, जोवन मृग जरा बाघिनि लागी ॥ आरसी० ॥ १ ॥ चक्री भरत भावना भाई, चौदह रतन नवों निधि त्यागी। द्यानत दीच्छा लेत महूरत, केवलज्ञान कला घट जागी ॥ आरसी० ॥ २ ॥

२८७।

कहा री कहूं कछु कहत न आवै, बाहूबल बल धीरज री ॥ कहा० ॥ टेक ॥ जल मल्[1] दिष्ट[2] जुद्धमें जीत्यो, भरत चक्रको वीरज री ॥ कहा० ॥ १ ॥ जोग लियो तन फॅननि[3] घर कियो, शोभा ज्यों अलि-नीरॅज[4] री ॥ कहा० ॥ २ ॥ द्यानत बहुत दान तब दै हौं, पै हौं चरननकी रज री ॥ कहा० ॥ ३ ॥

२८८।

हो श्रीजिनराज नीतिराजा! कीजे न्याव हमारो ॥ हो० ॥ टेक ॥ चेतन एक सु मैं जड़ बहु ये, दोनों ओर निहारो ॥ हो० ॥ १ ॥ हम तुममाहिं भेद इन कीनों, दीनों दुख अति भारो ॥ हो० ॥ २ ॥ द्यानत सन्त जान सुख दीजै, दुष्टैं देश निकारो ॥ हो० ॥ ३ ॥

२८९।

अब समझ कही ॥ अब० ॥ टेक ॥ कौन कौन आपद विषयनितैं, नरक निगोद सही ॥ अब० ॥ १ ॥

---

१ मल्लयुद्ध। २ दृष्टियुद्ध। ३ सर्पोंने। ४ कमल।

एक एक इन्द्री दुखदानी, पांचौं दुखत नहीं ॥ अब०
॥ २ ॥ द्यानत संजम कारजकारी, धरौ तरौ सब ही ॥
अब० ॥ ३ ॥

२९० ।

सोई कर्मकी रेखपै मेख मारै ॥ सोई० ॥ टेक ॥
आपमें आपको आप धारै ॥ सोई० ॥ १ ॥ नयो बंध-
न करै, बँध्यो पूरब झरै, करज काढ़ न देना विचारै ॥
सोई० ॥ २ ॥ उदय विन दिये गल जात संवर सहि-
त, ज्ञान संजुगत जब तप सँभारै ॥ सोई० ॥ ३ ॥
ध्यान तरवारसों मार अरि मोहको, मुकति तिय वदन
द्यानत निहारै ॥ सोई० ॥ ४ ॥

२९१ ।

प्रभुजी मोहि फिकर अपार ॥ प्रभु० ॥ टेक ॥
दान व्रत नहिं होत हमपै, होंहिंगे क्यों पार ॥ प्रभु०
॥ १ ॥ एक गुन श्रुत कहि सकत नाहिं, तुम अनन्त
भँडार । भगति तेरी बनत नाहीं, मुकतकी दातार ॥
प्रभु० ॥ २ ॥ एक भवके दोष केई, थूल कहूँ पुकार ।
तुम अनन्त जनम निहारे, दोष अपरंपार ॥ प्रभु० ॥३॥
नाव दीनदयाल तेरो, तरनतारनहार । वंदना द्यानत
करत है, ज्यों बनै त्यों तार ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

२९२ ।

तेरैं मोह नहीं ॥ तेरै० ॥ टेक ॥ चक्री पूत सु-

गुनघर बेटो, कामदेव सुत ही ॥ तेरै० ॥ १ ॥ नव भव नेह जानके कीनौं, दानी श्रेयँस ही । मात तात निहचै शिवगामी, पहले सुत सब ही ॥ तेरै० ॥ २ ॥ विद्याधरके नृप कर कीनौं, साले गनधर ही । बेटीको गनंनी पद दीनों, आरजिका सब ही ॥ तेरै० ॥ ३ ॥ पोता आप बराबर कीनों, महावीर तुम ही । द्यानत आपन जान करत हो, हम हू सेवक ही ॥तेरै० ॥ ४ ॥

२९३ ।

कर मन ! वीतरागको ध्यान ॥ कर० ॥ टेक ॥ जिन जिनराज जिनिंद जगतपति, जगतारन जगजान ॥ कर० ॥ १ ॥ परमातम परमेस परमगुरु, परमानंद प्रधान । अलख अनादि अनन्त अनूपम, अजर अमर अमलान ॥ कर० ॥ २ ॥ निरंकार अविकार निरंजन, नित निरमल निरमान । जती व्रती मुन ऋषी सुखी प्रभु, नाथ धनी गुन ज्ञान ॥ कर० ॥ ३ ॥ सिव सरवज्ञ सिरोमनि साहब, साँई सन्त सुजान । द्यानत यह गुन नाममालिका, पहिर हिये सुखदान ॥ कर० ॥ ४ ॥

२९४ ।

शुद्ध स्वरूपको वंदना हमारी ॥ शुद्ध० ॥ टेक ॥ एक रूप वसु रूप विराजै, सुगुन अनन्त रूप अवि-

१ आर्यिकाओंमें मुख्य ।

कारी ॥ शुद्ध० ॥ १ ॥ अमल अचल अविकलप अजलपी, परमानंद चेतना धारी ॥ शुद्ध० ॥ २ ॥ द्यानतं द्वैतभाव तज हूजे, भाव अद्वैत सदा सुखकारी॥ शुद्ध० ॥ ३ ॥

२९५।

चौवीसौंको वंदना हमारी ॥ चौवीसौं० ॥ टेक ॥ भवदुखनाशक सुखपरकाशक, विघनविनाशक मंगलकारी ॥ चौवीसौं० ॥ १ ॥ तीनलोक तिहुँकालनिमाहीं, इन सम और नहीं उपगारी ॥ चौवीसौं० ॥ ॥ २ ॥ पंच कल्यानक महिमा लखकै, अदभुत हरप लहैं नरनारी ॥ चौवीसौं० ॥ ३ ॥ द्यानत इनकी कौन चलावै, विंव देख भये सम्यकधारी ॥ चौवीसौं० ॥४॥

२९६।

सेऊं स्वामी अभिनन्दनको ॥ सेऊं० ॥ टेक ॥ लेकै दीप धूप जल फल चरु, फूल अछत चंदनको ॥ सेऊं० ॥१॥ नाचौं गाय वजाय हरपसों, प्रीत करों वंदनको ॥ सेऊं० ॥ २ ॥ द्यानत भगतिमाहिं दिन वीतैं, जीतैं भव फंदनको ॥ सेऊं० ॥ ३ ॥

२९७।

एक समय भरतेश्वर स्वामी, तीन वात सुनी तुरत फुरत ॥ एक०॥ टेक ॥ चक्र रतन प्रभुज्ञान जनम सुत,

---

१ मौनावलम्वी । २ ऋषभदेवको केवलज्ञानका प्रगट होना ।

पहलैं कीजै कौन कुरत[1] ॥ एक० ॥ १ ॥ धर्मप्रसाद सवै शुभ सम्पति, जिन पूजैं सव दुरत[2] दुरत[3]। चक्र उछाह कियो सुत मंगल, द्यानत पायो ज्ञान तुरत ॥ एक० ॥ २ ॥

२९८।

तू ही मेरा साहिव सच्चा सांईं ॥ तू ही० ॥ टेक ॥ काल अनन्त रुल्यो जगमाहीं, आपद वहुविधि पाईं ॥ तू ही० ॥ १ ॥ तुम राजा हम परजा तेरे, कीजिये न्याव न काईं ॥ तू ही० ॥ २ ॥ द्यानत तेरा करमनि घेरा, लेहु छुड़ाय गुसाईं ॥ तू ही० ॥ ३ ॥

२९९।

सच्चा सांईं, तूही है मेरा प्रतिपाल ॥ सच्चा० ॥टेक॥ तात मात सुत शरन न कोई, नेह लगा है तेरे नाल (?)॥ सच्चा० ॥ १ ॥ तनदुख मनदुख जनदुखमाहीं, सेवक निपट विहाल ॥ सच्चा० ॥ २ ॥ द्यानत तुम वहु तारन-हारे, हमहुको लेहु निकाल ॥ सच्चा० ॥ ३ ॥

३००।

इस जीवको, यों समझाऊं री ! ॥ इस० ॥ टेक ॥ अरस अफरस अगंध अरूपी, चेतन चिन्ह वताऊं री ॥ इस० ॥ १ ॥ तत तत तत तत, थेई थेई थेई थेई तन नन री री गाऊं री ॥ इस० ॥ २ ॥ द्यानत,

---

१ कृत्य—काम। २ पाप। ३ दूर भागें।

सुमत कहै सखियनसों, सोहं सीख सिखाऊं री ॥ इस० ॥ ३ ॥

३०१ ।

मैं न जान्यो री ! जीव ऐसी करैगो ॥ मैं० ॥टेक॥ मोसौं विरति कुमतिसों रति कै, भवदुख भूरि भरैगो ॥ मैं० ॥ १ ॥ स्वारथ भूलि भूलि परमारथ, विषयारथमें परैगो ॥ मैं० ॥ २ ॥ द्यानत जब समतासों राचै, तब सब काज सरैगो[1] ॥ मैं० ॥ ३ ॥

३०२ ।

तुम चेतन हो ॥ तुम० ॥ टेक ॥ जिन विषयनि सँग दुख पावै सो, क्यों तज देत न हो ॥ तुम० ॥१॥ नरक निगोद कषाय भमावै, क्यों न सचेतन हो ॥ तुम० ॥ २ ॥ द्यानत आपमें आपको जानो, परसों हेत[2] न हो ॥ तुम० ॥ ३ ॥

३०३ ।

तैं कहुँ देखे नेमिकुमार ॥ तैं० ॥ टेक ॥ पशुगन बंध छुड़ावनिहारे, मेरे प्रानअधार ॥ तैं० ॥ १ ॥ बालब्रह्मचारी गुनधारी, कियो मुकतिसों प्यार ॥ तैं ॥ २ ॥ द्यानत कब मैं दरसन पाऊं, धन्य दिवस धनि बार ॥ तैं० ॥ ३ ॥

---

१ सिद्ध होगा । २ ममत्व ।

३०४ ।

कौन काम मैंने कीनों अब, लीनों नरक निवास हो ॥ कौन० ॥ टेक ॥ बहुतनि तप करि सुर शिव साध्यो, मैं साध्यो दुखरास हो ॥ कौन० ॥ १ ॥ नरभव लहि बहु जीव सताये, साधे विषय विलास हो । पीतम[1] रिपु रिपु पीतम जानें, मिथ्यामत-विसवास हो ॥ कौन० ॥ २ ॥ धनके साथी जीव बहुत थे, अब दुख एक न पास हो । यहां महादुख भोग छूटिये, राग दोषको नास हो ॥ कौन० ॥ ३ ॥ देव धरम गुरु नव तत्त्वनिकी, सरधा दिढ़ अभ्यास हो । द्यानत हौं सुखमय अविनाशी, चेतनजोति प्रकाश हो ॥ कौन० ॥४॥

३०५ ।

नेमीश्वर खेलन चले, रंग हो हो होरी, सुगुन सखा संग भूप रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ टेक ॥ महा विराग वसन्तमें, रंग हो हो होरी । समझ सुवास अनूप रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ १ ॥ बसन महाव्रत धारकै, रंग हो हो होरी । छिरके छिमा बनाय रंग, रंग हो हो होरी । पिचकारी कर प्रीतिकी रंग रंग हो हो होरी । रीझ रंग अधिकाय रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ २ ॥ ज्ञान गुलाल सुहावनी रंग, रंग हो हो होरी । अनुभव अतर सुख्याल

---

[1] प्यारे मित्र ।

रंग, रंग हो हो होरी। प्रेम पखावज वजत रंग, रंग हो हो होरी। तत्त्व स्वपर दो ताल रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ ३ ॥ संजम सिरनी अति भली रंग, रंग हो हो होरी। मेवा मगन सुभाव रंग, रंग हो हो होरी। सम रस सीतल फल लहैं रंग, रंग हो होरी। पान परम पद चाव रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ ४ ॥ आतम ध्यान अगन भई रंग, रंग हो हो होरी। करम काठ समुदाय रंग, रंग हो हो-होरी। धर्म धुलहड़ी खेलकैं रंग, रंग हो हो होरी। सदा सहज सुखदायं रंग, रंग हो हो होरी ॥ नेमीश्वर० ॥ ५ ॥ रजमति मनमें कहति है रंग, रंग हो हो होरी। हम तजि भजि शिव नारि रंग, रंग हो हो हो होरी। द्यानत हम कब होंहिंगे रंग, रंग हो हो होरी। शिववनिताभरतार रंग, रंग हो हो हो-री ॥ नेमीश्वर० ॥ ६ ॥

३०६।

सोई ज्ञान सुधारस पीवै ॥ सोई० ॥ टेक ॥ जीवन दशा मृतक करि जानै, मृतक दशामें जीवै ॥ सोई० ॥ १ ॥ सैन[1]दशा जाग्रत करि जानै, जागत नाहीं सोवै। मीतौं[2]को दुशमन करि जानै, रिपुको प्रीतम जोवै ॥ सोई० ॥ २ ॥ भोजनमाहिं वरत करि बूझै, व्रतमें

१ सोनेकी दशाको। २ मित्रोंको।

होत अहारी । कपड़े पहिरैं नगन कहावै, नागा अंबर-धारी ॥ सोई० ॥ ३ ॥ बस्तीको ऊजर कर देखै, ऊजर बस्ती सारी । द्यानत उलट चालमें सुलटा, चेतनजोति निहारी ॥ सोई० ॥ ४ ॥

३०७।

आतम अनुभव कीजिये, यह संसार असार हो ॥ आतम० ॥ टेक ॥ जैसो मोती ओसको, जात न लागै बार हो ॥ आतम० ॥ १ ॥ जैसैं सब बनिजौंविषैं, पैसा उतपत सार हो । तैसैं सब ग्रंथनिविषैं, अनुभव हित निरधार हो ॥ आतम० ॥ २ ॥ पंच महाव्रत जे गहैं, सहैं परीषह भार हो । आतमज्ञान लखैं नहीं, बूड़ैं कालीधार हो ॥ आतम० ॥ ३ ॥ बहुत अंग पूरव पढ़्यो, अभयसेन(?) गँवार हो । भेदविज्ञान भयो नहीं, रुल्यो सरव संसार हो ॥ आतम० ॥ ४ ॥ बहु जिन-बानी नहिं पढ़्यो, शिवभूती अनगार हो । घोष्यो तुप अरु मापको, पायो मुकतिदुवार हो ॥ आतम० ॥ ५ ॥ जे सीझे जे सीझ हैं, जे सीझैं इहि बार हो । ते अनु-भव परसादतैं, यों भाष्यो गनधार हो ॥ आतम० ॥ ६ ॥ पारस चिन्तामनि सबै, सुरतरुआदि अपार

१ वस्त्रधारी । २ व्यापारोंमें । ३ उत्पत्ति, प्राप्ति । ४ मुनि । ५ उड़दकी दालसे जैसे उसका छिलका भिन्न है, इसी तरह आत्मासे शरीर भिन्न है, ऐसा कहते २ ।

हो । ये विषयासुखको करैं; अनुभवसुख सिरदार हो ॥ आतम० ॥ ७ ॥ इंद फनिंद नरिंदके, भाव सराग विथार हो। द्यानत ज्ञान विरागतैं, तद्भव मुकतिमँझार हो ॥ आतम० ॥ ८ ॥

३०८।

जानौं पूरा ज्ञाता सोई ॥ जानों० ॥ टेक ॥ रागी नाहीं रोषी नाहीं, मोही नाहीं होई ॥ जानौं० ॥ १ ॥ क्रोधी नाहीं मानी नाहीं, लोभी धी ना ताकी । ज्ञानी ध्यानी दानी जानी, बानी मीठी जाकी ॥ जानौं० ॥ २ ॥ साँई सेती सच्चा दीसै, लोगोंहूका प्यारा । काहू जीका दोषी नाहीं, नीका पैंड़ा धारा ॥ जानौं० ॥ ३ ॥ काया सेती माया सेती, जो न्यारा है भाई । द्यानत ताको देखै जानै, ताहीसों लौ लाई ॥ जानौं० ॥ ४ ॥

३०९।

प्रभुजी प्रभू सुपास ! जगवासतैं दास निकास ॥ प्रभु० ॥ टेक ॥ इंदके खास फनिंदके खास, नरिंदके चन्दके खास । तुमको छांड़के किसपै जावैं, कौनका ढूंढ़ैं धाम ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ भूप सोई दुख दूर करै है, साह सोई दै दान । वैद सोई सब रोग मिटावै, तुमी सबै गुनवान ॥ प्रभु० ॥२॥ चोर अंजनसे तार लिये हैं, जार कीचकसे राव । हम तो सेवक सेव करै हैं, नाम

---

१ बुद्धि ।

जपैं मन चाव ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥ तुम समान हुए न होंगे, देव त्रिलोकमँझार। तुम दयाल देवोंके देव हो, द्यानतको सुखकार ॥ प्रभु० ॥ ४ ॥

३१०।

नगरमें होरी हो रही हो ॥ नगर० ॥ टेक ॥ मेरो पिय चेतन घर नाहीं, यह दुख सुन है को ॥ नगर० ॥ १ ॥ सोति कुमतिके राच रह्यो है, किहि विध लाऊं सो ॥ नगर० ॥ २ ॥ द्यानत सुमति कहै जिन स्वामी, तुम कछु सिच्छा दो ॥ नगर० ॥ ३ ॥

३११।

खेलौंगी होरी, आये चेतनराय ॥ खेलौं० ॥ टेक ॥ दरसन वसन ज्ञान रँग भीने, चरन गुलाल लगाय ॥ खेलौं० ॥ १ ॥ आनँद अंतर सुनय पिचकारी, अनहद बीन बजाय ॥ खेलौं० ॥ २ ॥ रीझौं आप रिझावौं पियको, प्रीतम लौं गुन गाय ॥ खेलौं० ॥ ३ ॥ द्यानत सुमति सुखी लखि सुखिया, सखी भई बहु भाग ॥ खेलौं० ॥ ४ ॥

३१२।

पिया बिन कैसे खेलौं होरी ॥ पिया० ॥ टेक ॥ आतमराम पिया नहिं आये, मोकों होरी कोरी ॥ पिया० ॥ १ ॥ एक बार प्रीतम हम खेलैं, उपशम

---

१ चारित्र।

केसर घोरी ॥ पिया० ॥ २ ॥ द्यानत वह समयो कब पाऊं, सुमति कहै कर जोरी ॥ पिया० ॥ ३ ॥

३१३ ।

भली भई यह होरी आई, आये चेतनराय ॥ भली० ॥ टेक० ॥ काल बहुत प्रीतम बिन बीते, अब खेलौं मन लाय ॥ भली० ॥ १ ॥ सम्यक रंग गुलाल बरतमें, राग विराग सुहाय । द्यानत सुमति महा सुख पायो, सो वरन्यो नाहिं जाय ॥ भली० ॥ २ ॥

३१४ ।

तेरी भगत बिना धिक है जीवना ॥ तेरी० ॥ टेक ॥ जैसे बेगारी दरजीको, पर घर कपड़ोंका सीवना ॥ तेरी० ॥ १ ॥ मुकट बिना अम्बर सब पहिरे, जैसे भोजनमें घीव ना ॥ तेरी० ॥ २ ॥ द्यानत भूप बिना सब सेना, जैसे मंदिरकी नीव ना ॥ तेरी० ॥ ३ ॥

३१५ ।

कर्मनिको पेलै, ज्ञान दशामें खेलै ॥ कर्म० ॥ टेक ॥ सुख दुख आवै खेद न पावै, समता रससों ठेलै ॥ कर्म० ॥ १ ॥ सुदरब गुन परजाय समझके, पर-परिनाम धकेलै ॥ कर्म० ॥ २ ॥ आनँदकंद चिदानँद साहब, द्यानत अंतर झेलै ॥ कर्म० ॥ ३ ॥

३१६ ।

चेतन नागर हो तुम, चेतो चतुर सुजान, आपहित

कीजिये हो ॥ चेतन ॥ टेक ॥ प्रथम प्रणमु अरहन्त जिनेश्वर, अनँत चतुष्टयधारी । सिद्ध सूरि गुरु मुनि-पद वन्दों, पंच परम उपगारी ॥ वन्दों शारद भवदधि-पारद, कुमतिविनाशनहारी । देहु सुवुद्धि मेरे घट अन्तर, कहों कथा हितकारी ॥ चेतन० ॥ १ ॥ यह संसार अनादि अनन्त, अपार असार वतायो । जीव अनादि कालसों ले करि, मिथ्यासों लपटायो ॥ तातैं भ्रमत चहूँगति भीतर, सुख नहिं दुख बहु पायो । जिन-वानीसरधान विना तैं, काल अनन्त गुमायो ॥ चेतन० ॥ २ ॥ काम भोगकै सुख मानत है, विषय रोगकी पीरा । तासु विपाक अनन्त गुणा तोहि, नरकमाहिं है धीरा ॥ पाप करमकरि सुख चाहत है, सुख नहिं है है वीरा । वोये आक आम किमि खैहो, काँच न है है हीरा ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ पाप करम करि दरव कमा यो, पापहि हेत लगायो । दोनों पाप कौन भोगैगो, सो कछु भेद न पायो ॥ दुशमन पोपि हरष बहु मान्यो मित्र न संग सुहायो । नरभव पाय कहा तैं कीनों, मानुष वृथा कहायो ॥ चेतन० ॥ ४ ॥ सात नरकके दुख भूले अरु गरभ जनम हू भूले । काल दाढ़ विच कौन अशुचि तन, कहा जान जिय फूले ॥ जान वूझ तुम भये वावरे, भरम हिंडोले झूले । राई सम दुख सह न सकत हो, काम करत दुखमूले ॥ चेतन० ॥ ५ ॥

साता होत कछुक सुख मानै, होत असाता रोवै । ये दोनों हैं कर्म अवस्था, आप नहीं किन जोवै ॥ और-न सीख देत वहु नीकी, आप न आप सिखावै । सांच साच कछु झूठ रंच नहिं, याहीतैं दुख पावै ॥ चेतन० ॥ ६ ॥ पाप करत वहु कष्ट होत है, धरम करत सुख भाई ! वाल गुपाल सवै इम भाषैं, सो कहनावत आई ॥ दुहिमें जो तोकौं हित लागै, सो कर मनवच-काई । तुमको वहुत सीख क्या दीजे, तुम त्रिभुवन-के राई ॥ चेतन० ॥ ७ ॥ त्रस पंचेन्द्रीसेती मानुप, औसर फिर नहिं पै है । तन धन आदि सकल सामग्री देखत देखत जै है ॥ समझ समझ अब ही तू प्राणी ! दुरगतिमें पछतैहै । भज अरहन्तचरण जुग द्यानत, वहुरि न जगमें ऐ है ॥ चेतन० ॥ ८ ॥

३१७ । राग—सोरठ ।

प्राणी ! आतमरूप अनूप है, परतैं भिन्न त्रिकाल ॥ प्राणी० ॥ टेक ॥ यह सब कर्म उपाधि है, राग दोप भ्रम जाल ॥ प्राणी० ॥ १ ॥ कहा भयो काई लगी, आतम दरपनमाहिं । ऊपरली ऊपर रहै, अंतर पैठी नाहिं ॥ प्राणी० ॥ २ ॥ भूलि जेवरी अहि मुन्यो, ढूंठ लख्यो नररूप । त्यों ही पर निज मानिया, वह जड़ तू चिद्रूप प्राणी० ॥ ३ ॥ जीव-कनक तन-मैलके, भिन्न भिन्न परदेश । माहैं माहैं संध है, मिलैं नहीं लव

लेश ॥ प्राणी० ॥ ४ ॥ घन करमनि आच्छादियो, ज्ञानभानपरकाश । है ज्योंका त्यों शास्वता, रंचक होय न नाश ॥ प्राणी० ॥ ५ ॥ लाली झलकै फटिकमें फटिक न लाली होय । परसंगति परभाव है, शुद्ध-स्वरूप न कोय ॥ प्राणी० ॥ ६ ॥ त्रस थावर नर नारकी, देव आदि वहु भेद । निहचै एक स्वरूप हैं, ज्यों पट सहज सुपेद ॥ प्राणी० ॥ ७ ॥ गुण ज्ञानादि अनन्त हैं, परजय सकति अनन्त । द्यानत अनुभव कीजिये, याको यह सिद्धन्त ॥ प्राणी० ॥ ८ ॥

३१८ । राग–विलावल ।

सवमें हम हममें सव ज्ञान, लखि वैठे दृढ़ आसन तान ॥ सवमें० ॥ टेक ॥ भूमिमाहिं हम हममें भूमि, क्यों करि खोदैं धामाधूम ॥ सवमें० ॥ १ ॥ नीर-माहिं हम हममें नीर, क्यों करि पीवैं एक शरीर ॥ सवमें० ॥ २ ॥ आगमाहिं हम हममें आगि, क्यों करि जालैं हिंसा लागि ॥ सवमें० ॥ ३ ॥ पौन माहिं हम हममें पौन, पंखा लेय विराधै कौन ॥ सवमें० ॥ ४ ॥ रूखमाहिं हम हममें रूख, क्योंकरि तोड़ैं लागैं भूख ॥ सवमें० ॥ ५ ॥ लट चैंटी माखी हम एक, कौन सतावै धारि विवेक ॥ सवमें० ॥ ६ ॥ विखग मृग मीन सवै हम जात, सवमें चेतन एक विख्यात ॥ सवमें० ॥ ७ ॥ सुर नर नारक हैं हम रूप,

सबमें दीसै है चिद्रूप ॥ सबमें० ॥ ८ ॥ बालक वृद्ध तरुन तनमाहिं, पंढ[1] नारि नर धोखा नाहिं ॥ सबमें० ॥ ९ ॥ सोवन बैठन वचन विहार, जतनं[2] लिये आहार निहार ॥ सबमें० ॥ १० ॥ आयो लैंहिं न न्यौते जाहिं, परघर फासू[3] भोजन खाहिं ॥ सबमें० ॥ ११ ॥ पर संगतिसों दुखित अनाद, अब एकाकी अमृत स्वाद ॥ सबमें० ॥ १२ ॥ जीव न दीसै है जड़ अंग, राग दोष कीजै किहि संग ॥ सबमें० ॥ १३ ॥ निरमल तीरथ आतमदेव, द्यानत ताको निशिदिन सेव ॥ सबमें० ॥ १४ ॥

३१९ । राग—आसावरी जोगिया ।

कलिमें ग्रंथ बड़े उपगारी ॥ कलि० ॥ टेक ॥ देव शास्त्र गुरु सम्यक सरधा, तीनों जिनतैं धारी ॥ कलि० ॥ १ ॥ तीन बरस वसु मास पंद्र दिन, चौथा काल रहा था । परम पूज्य महावीरस्वामि तब, शिवपुर-राज लहा था ॥ कलि० ॥ २ ॥ केवलि तीन पांच श्रुतिकेवलि, पीछैं गुरुनि विचारी । अंगपूर्व अब हैं न रहैंगे, बात लिखी थिरथारी ॥ कलि० ॥ ३ ॥ भवि-हित कारन धर्मविथारन, आचारजों बनाये । बहु तिन तिनकी टीका कीनीं, अद्भुत अरथ समाये ॥ कलि० ॥ ४ ॥ केवल श्रुतकेवलि यहां नाहीं, मुनि

१ नपुंसक । २ यत्नपूर्वक । ३ प्राशुक ।

गुन प्रगट न सूझैं। दोऊ केवलि आज यही हैं, इन-हीको मुनि बूझैं ॥ कलि० ॥ ५ ॥ बुद्धि प्रगट कर आप वांचिये, पूजा वंदन कीजै। दरव खरच लिखवाय सुधाय सु, पण्डित जन बहु दीजै ॥ कलि० ॥ ६ ॥ पढ़तैं सुनतैं चरचा करतैं, है संदेह जु कोई। आगम माफिक टीक करै कै, देख्यो केवल सोई ॥ कलि० ॥ ७ ॥ तुच्छबुद्धि कछु अरथ जानिकै, मनसों विंग उठाये। औधज्ञानि श्रुतज्ञानी मानो, सीमंधर मिलि आये ॥ कलि० ॥ ८ ॥ यह तो आचारज है सांचो, ये आचारज झूठे। तिनके ग्रंथ पढ़ैं नित वंदैं, सरधा ग्रंथ अपूठे ॥ कलि० ॥ ९ ॥ सांच झूठ तुम क्यों करि जान्यो, झूठ जानि क्यों पूजो। खोट निकाल शुद्ध करि राखो, और बनावो दूजो ॥ कलि० ॥ १० ॥ कौन सहामी बात चलावै, पूछै आनमती तौ। ग्रंथ लिख्यो तुम क्यों नाहिं मानौ, ज्वाब कहा कहि जीतौ ॥ कलि० ॥ ११ ॥ जैनी जैनग्रंथके निंदक, हुण्डासर्प्पि-नि जोरा। द्यानत आप जान चुप रहिये, जगमें जीवन थोरा ॥ कलि० ॥ १२ ॥

३२०।

कीजे हो भाईयनिसों प्यार ॥ कीजे० ॥ टेक ॥ नारी सुत बहुतेरे मिल हैं, मिलैं नहीं मा जाये यार ॥ कीजे० ॥ १ ॥ प्रथम लराई कीजे नाहीं, जो लड़िये

तो नीति विचार । आप सलाह किधौं पंचनिमें, दुई चढ़िये ना हाकिम द्वार ॥ कीजे० ॥ २ ॥ सोना रूपा बासन कपड़ा, घर हाटनकी कौन शुमार । भाई नाम वरन दो ऊपर, तन मन धन सब दीजे वार ॥ कीजे० ॥ ३ ॥ भाई बड़ा पिता परमेश्वर, सेवा कीजे तजि हंकार । छोटा पुत्र ताहि सब दीजे, वंश बेल विरधै अधिकार ॥ कीजे० ॥ ४ ॥ घर दुख बाहिरसों नहिं टूटै, बाहिर दुख घरसों निरवार । गोत घात नहिं चक्र करत है, अरि सब जीतनको भयकार ॥ कीजे० ॥ ५ ॥ कोई कहै हनैं भाईको, राज काज नाहिं दोप लगार । यह कलिकाल नरकको मारग, तुरकनिमें[1] हममें न निहार ॥ कीजे० ॥ ६ ॥ होहि हिसावी तो गम खइये, नाहक झगड़ै कौन गँवार । हाकिम लूटैं पंच विगूचैं, मिलैं नहीं वे आंखैं चार ॥ कीजै० ॥ ७ ॥ पैसे कारन लड़ैं निखट्टू, जानैं नाहिं कमाई सार । उद्यममें लछमीका वासा, ज्यों पंखेमें पवन चितार ॥ कीजे० ॥ ८ ॥ भला न भाई भाव न जामें, भला पड़ौसी जो हितकार । चतुर होय परन्याव चुकावै, शठ निज न्याव पराये द्वार ॥ कीजे० ॥ ९ ॥ जस जीवन अपजस मरना है, धन जोवन विजली उनहार । द्यानत

---

१ तुर्कोंमें अर्थात् मुगलोंमें । राजके लिये वे भाईयोंको मार डालते थे ।

चतुर छमी सन्तोषी, धरमी ते विरले संसार ॥ कीजे० ॥ १० ॥

३२१ ।

क्रोध कषाय न मैं करौं, इह परभव दुखदाय हो ॥ टेक ॥ गरमी व्यापै देहमें, गुनसमूह जलि जाय हो ॥ क्रोध० ॥ १ ॥ गारी दै मार्यो नहीं, मारि कियो नहिं दोय[1] हो । दो करि समता ना हरी, या सम मीत न कोय हो ॥ क्रोध० ॥ २ ॥ नासै अपने पुन्यको, काटै मेरो पाप हो । ता प्रीतमसों रूसिकै, कौन सहै सन्ताप हो ॥ क्रोध० ॥ ३ ॥ हम खोटे खोटे कहैं, सांचेसों[2] न विगार हो । गुन लखि निंदा जो करै, क्या लावैंरसों[4] रार[3] हो ॥ क्रोध० ॥ ४ ॥ जो दुरजन दुख दै नहीं, छिमा न ह्वै परकास हो । गुन परगट करि सुख करै, क्रोध न कीजे तास हो ॥ क्रोध० ॥ ५ ॥ क्रोध कियेसों कोपिये, हमें उसे क्या फेर हो । सज्जन दुरजन एकसे, मन थिर कीजे मेरैं हो ॥ क्रोध० ॥ ६ ॥ बहुत कालसों साधिया, जप तप संजम ध्यान हो । तासु परीक्षा लैनको, आयो समझो ज्ञान हो ॥ क्रोध० ॥७॥ आप कमायो भोगिये, पर दुख दीनों झूठ हो । द्यानत परमानन्द मय, तू जगसों क्यों रूठ हो ॥ क्रोध० ॥८॥

---

१ दो टुकड़े तो न किये । २ झूठेसे । ३ लड़ाई । ४ सुमेरुके समान ।

३२२ । राग—सोरठमें ख्याल ।

भाई काया तेरी दुखकी ढेरी, बिखरत सोच कहा है । तेरे पास सासतौ तेरो, ज्ञानशरीर महा है ॥ भाई० ॥ १ ॥ ज्यों जल अति शीतल है काचौ, भाजन दाह दहा है (?) । त्यों ज्ञानी सुखशान्त कालका, दुख समभाव सहा है ॥ भाई० ॥ २ ॥ बोदे उतरैं नये पहिरतैं, कौंने खेद गहा है । जप तप फल परलोक लहैं जे, मरकै वीर कहा है ॥ भाई० ॥ ३ ॥ द्यानत अन्तसमाधि चहैं मुनि, भागौं दाव लहा है । वहु तज मरण जनम दुख पावक, सुमरन धार वहा है ॥ भाई० ॥ ४ ॥

३२३ । मंगल आरती राग— भैरों ।

मंगल आरती कीजे भोर, विघनहरन सुखकरन किरोर ॥ मंगल ॥ टेक ॥ अरहत सिद्ध सूरि उवझाय, साधु नाम जपिये सुखदाय ॥ मंगल ॥ १ ॥ नेमिनाथ स्वामी गिरनार, वासुपूज्य चम्पापुर धार । पावापुर महावीर मुनीश, गिरि कैलास नमों आदीश ॥ मंगल० ॥ २ ॥ सिखर समेद जिनेश्वर वीस, वंदों सिद्धभूमि निशिदीस । प्रतिमा स्वर्ग मर्त्य पाताल, पूजों कृत्य अकृत्य त्रिकाल ॥ मंगल ॥ ३ ॥ पंच कल्याणक काल

१ द्यानतजीकी दश आरती हमने अलग छपाई हैं, इसलिये इस पदसंग्रहमें शामिल नहीं की हैं । प्रकाशक ।

नमामि, परम उदारिक तन गुणधाम । केवलज्ञान आतमाराम, यह पटविधि मंगल अभिराम ॥ मंगल ॥ ॥ ४ ॥ मंगल तीर्थंकर चौवीस, मंगल सीमंधर जिन वीस । मंगल श्रीजिनवचन रसाल, मंगल रतनत्रय गुनमाल ॥ मंगल ॥ ५ ॥ मंगल दशलक्षण जिनधर्म, मंगल सोलहकारन पर्म। मंगल बारहभावन सार, मंगल संघ चारि परकार ॥ मंगल ॥ ६ ॥ मंगल पूजा श्रीजिनराज, मंगल शास्त्र पढ़ै हितकाज । मंगल सतसंगति समुदाय, मंगल सामायिक मन लाय ॥ मंगल० ॥ ७ ॥ मंगल दान शील तप भाव, मंगल मुक्ति वधूको चाव । द्यानत मंगल आठौं जाम, मंगल महा मुक्ति जिनस्वाम ॥ मंगल० ॥ ८ ॥

जैनहितैषी मासिकपत्र ।

हमारे पुस्तकालयसे इस नामका एक बढियां मासिकपत्र निकलता है, जिसमें सामाजिक, धार्मिक, तथा ऐतिहासिक उत्तमोत्तम लेख कविता मनोरंजक चुटकुले शिक्षाप्रद हृदयग्राही उपन्यास, जीवनचरित्र, आदि अनेक विषय हर महीने छपा करते हैं। जैनियोंमें इससे अच्छा और कोई मासिकपत्र नहीं है। बड़ी भारी खूबी यह है कि इसके ग्राहकोंको प्रतिवर्ष उपहारमें (भेटमें) बढ़ियां २ ग्रन्थ दिये जाते हैं, जिनका मूल्य अलग लेनेसे वार्षिक मूल्यके ही बराबर होता है । अर्थात् मासिकपत्रके मूल्यमें उपहार मिल जाता है, मासिकपत्र सालभर मुफ्तमें ही आया करता है। इस पत्रके निकालनेमें हमको बराबर घाटा रहता है, तौ भी उत्तमोत्तम ग्रन्थोंके प्रचारके लिये और अपने विचारोंको सब भाइयोंके समक्ष प्रकाशित करनेके लिये निकाल रहे हैं। धर्मात्मा भाइयोंको इसके ग्राहक बनकर हमारे उत्साहको बढाना चाहिये । वार्षिक मूल्य उपहार डांकखर्च वगैरहके सहित कुल १॥) डेड रुपया मात्र है ।

नमूनेका अंक मुफ्तमें भेजा जाता है। जरूर मंगाइये । एकवार बांचते ही ग्राहक होना पड़ेगा । उपन्यास प्रत्येक अंकमें एक पूरा निकलता है ।

श्रीवीतरागाय नमः

जैनपदसंग्रह

पांचवाँ भाग।

अर्थात्

कविवर बुधजनजीके पदोंका संग्रह।

जिसे

श्रीजैनग्रन्थरत्नाकरकार्यालयके स्वामियोंने

बम्बईके

निर्णयसागर प्रेसमें बालकृष्ण रामचन्द्र घाणेकरके प्रबन्धसे

छपाकर प्रकाशित किया।

श्रीवीर नि० संवत् २४३६। ई० सन १९१०।

पहलीबार।

मूल्य छह आना

निवेदन।

इस पदसंग्रहमें बुधजनजीके बनाए हुए केवल उन्हीं पदोंको छपाया है, जो बुधजनविलासमें संग्रह हैं। जहां तक हम जानते हैं, बुधजनजीके पद इनके सिवाय और नहीं होंगे। यदि इनके अतिरिक्त और कोई पद होंगे और हमें कहींसे प्राप्त हो सकेंगे, तो हम उन्हें इसकी द्वितीयावृत्तिमें शामिल कर देंगे।

बुधजनजीकी कवितामें मारवाड़ी शब्दोंकी मात्रा बहुत अधिक है और संशोधककी मातृभाषा मारवाड़ी नहीं है; इसलिये यद्यपि यह पदसंग्रह जैसा चाहिये वैसा शुद्ध नहीं छप सका होगा, तौ भी इसके संशोधनमें मारवाड़ी सज्जनोंकी सहायतासे भरसक परिश्रम किया गया है। इस वातपर भी ख्याल रक्खा गया है कि, रचयिताके प्रयोग किये हुए शब्दोंमें कुछ लौट फेर न हो जावे। मारवाड़ी वा अन्य किसी भाषाके किसी शब्दको सुधार कर प्रचलित हिन्दीमें वा शुद्धसंस्कृतरूपमें करनेकी कोशिश नहीं की गई है। स्थान स्थानपर ऐसे शब्दोंका अर्थ भी टिप्पणीमें लिख दिया गया है, जो कठिन थे अथवा सर्वसाधारणकी समझमें नहीं आ सकते थे। जो शब्द अथवा वाक्य परिश्रम करने पर भी समझमें नहीं आये हैं, उनके आगे प्रश्नांक '(?)' कर दिये हैं। पदोंके राग वा ताल जैसे बुधजनविलासमें लिखे हुए थे, वैसेके वैसे लिख दिये है। अनेक पद ऐसे भी हैं, जिनके राग वगैरह नहीं दिये गये, क्योंकि मूल प्रतिमें रागादिके नाम मिले नहीं और संशोधक स्वयं उन्हें लिख नहीं सका।

इस संग्रहमें पंजाबी भाषाके कई एक पद ऐसे छाप दिये गये हैं, जो मूर्ख लेखकोंकी कृपासे रूपान्तरिक हो गये हैं और पंजाबी भाषा नहीं जाननेसे हमारे द्वारा उनका संशोधन ठीक ठीक नहीं हो सका है। आशा है कि, इस विषयमें पाठक हमको क्षमा प्रदान करेंगे।

इस संग्रहकी प्रेसकापी हमारे एक इन्दौरनिवासी मित्रने इन्दौरके जैनमन्दिरकी एक हस्तलिखित प्रतिपरसे करके भेजी है और उसका संशोधन हमने अपने पासकी एक दूसरी प्रतिपरसे किया है। बस इन दो प्रतियोंके सिवाय बुधजनविलासकी और कोई प्रति हमें नहीं मिल सकी।

कविवर बुधजनजीका यथार्थ नाम पं० विरधीचन्दजी था। आप खंडेलवाल थे और जयपुरके रहनेवाले थे। आपके बनाये हुए चार ग्रन्थ प्रसिद्ध हैं और वे चारों ही छन्दोबद्ध हैं। १ तत्त्वार्थबोध, २ बुधजनसतसई, ३ पंचास्तिकाय, और ४ बुधजनविलास। ये चारों ग्रन्थ क्रमसे विक्रम संवत, १८७१–८१–९१ और ९२ में बनाये गये हैं। बस आपके विषयमें हमको इससे अधिक परिचय नहीं मिल सका।

बम्बई—चन्दाबाड़ी।
श्रावणकृष्णा ८–
श्रीवीर नि० २४३६।

नाथूराम प्रेमी।

पदोंकी वर्णानुक्रमणिका।

श्री जैनग्रन्थरत्नाकरकार्यालय—बम्बईमें मिलनेवाले

जैनग्रन्थोंका सूचीपत्र ।

प्रद्युम्नचरित्र—सरलहिन्दीमें	२॥)
रत्नकरंडश्रावकचार बड़ा—वचनिका पं० सदासुखजीकी	४)
आत्माख्यातिसमयसार—वचनिका सहित	४)
भगवतीआराधनासार—वचनिका सहित	४)
पुण्यास्रवपुराण—५६ कथाओंका संग्रह	३)
धर्मसंग्रहश्रावकाचार—सरलहिन्दी टीकासहित ...	२)
पार्श्वपुराण—पं० भूधरदासजीकृत छन्दोवद्ध	१।)
धर्मपरीक्षा—हिन्दी वचनिका	१)
वनारसीविलास—वनारसीदासजीके जीवनचरित्रसहित...	१॥)
स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा—भाषावचनिका सहित	१।)
पंचास्तिकायसमयसार—संस्कृत और हिन्दी टीकासहित	१॥)
वृहद्द्रव्यसंग्रह— ,, ,, ,,	२)
सप्तभंगीतरंगिणी— ,, ,, ,,	१)
स्याद्वादमंजरी— ,, ,, ,,	४)
प्रवचनसारपरमागम—कविवर वृन्दावनजीकृत	१।)
चौवीसीपाठ पूजन— ,, ,, ...	१)
क्षत्रचूडामणिकाव्य—मूल और सरलहिन्दी टीका	॥।)

श्रीवीतरागाय नमः

पदसंग्रह पंचमभाग।

कविवर बुधजनजीकृत पदोंका संग्रह।

---

(१)

राग—भैरों (प्रभाती)

प्रात भयो सब भविजन मिलिकै, जिनवर पूजन आवो ॥ प्रात० ॥ टेक ॥ अशुभ मिटावो पुन्य बढ़ावो, नैननि नींद गमावो ॥ प्रा० ॥ १ ॥ तनको धोय धारि उजरे पट, सुभग जलादिक ल्यावो। वीतरागछवि हरखि निरखिकैं, आगमोक्त गुन गावो ॥ प्रा० ॥ २ ॥ शास्तर सुनो भनो जिनवानी, तप संजम उपजावो। धरि सरधान देव गुरु आगम, सात तत्त्व रुचि लावो ॥ प्रात० ॥ ३ ॥ दुःखित जनकी दया ल्याय उर, दान चारिविधि द्यावो। राग दोष तजि भजि निज पदको, बुधजन शिवपद पावो ॥ प्रात० ॥ ४ ॥

(२)

राग—भैरों (प्रभाती)

किंकर अरज करत जिन साहिब, मेरी ओर निहारो ॥ किंकर० ॥ टेक ॥ पतितउधारक दीनदयानिधि, सुन्यौ

तोहि उपगारो । मेरे औगुनपै मति जावो, अपनो सुजस विचारो ॥ किं० ॥ १ ॥ अब ज्ञानी दीसत हैं तिनमैं, पक्षपात उरझारो । नाहीं मिलत महाव्रतधारी, कैसैं है निरवारो ॥ किं० ॥ २ ॥ छवी रावरी नैननि निरखी, आगम सुन्यौ तिहारो । जात नहीं भ्रम क्यौं अब मेरो, या दूषनको टारो ॥ किं० ॥ ३ ॥ कोटि बातकी बात कहत हूं, यो ही मतलब म्हारो । जौलौं भव तौलौं बुधजनको, दीज्ये सरन सहारो ॥ किं० ॥ ४ ॥

(३)

राग—षट्ताल तितालो ।

पतितउधारक पतित रटत है, सुनिये अरज हमारी हो ॥ पतित० ॥ टेक ॥ तुमसो देव न आन जगतमैं, जासौं करिये पुकारी हो ॥ प० ॥ १ ॥ साथ अविद्या लगि अनादिकी, रागदोष विस्तारी हो । याहीतैं सन्तति करमनिकी, जनममरनदुखकारी हो ॥ प० ॥ २ ॥ मिलैं जगत जन जो भरमावै, कहै हेत संसारी हो । तुम विनकारन शिवमगदायक, निजसुभावदातारी हो ॥ पतित० ॥ ३ ॥ तुम जाने विन काल अनन्ता, गति गतिके भव धारी हो । अब सनमुख बुधजन जांचत है, भवदधि पार उतारी हो ॥ पतित० ॥ ४ ॥

(४)

राग—षट्ताल तिताला ।

और ठौर क्यौं हेरत प्यारा, तेरे हि घटमैं जाननहारा ।

॥ और० ॥ टेक ॥ चलन हलन थल वास एकता, जात्यान्तरतैं न्यारा न्यारा ॥ और० ॥ १ ॥ मोहउदय रागी द्वेषी ह्वै, क्रोधादिकका सरजनहारा। भ्रमत फिरत चारौं गति भीतर, जनम मरन भोगत दुख भारा ॥ और० ॥ २ ॥ गुरु उपदेश लखै पद आपा, तबहिं विभाव करै परिहारा। ह्वै एकाकी बुधजन निश्चल, पावै शिवपुर सुखद अपारा ॥ और० ॥ ३ ॥

(५)

राग—पट्ताल तितालो।

काल अचानक ही ले जायगा, गाफिल होकर रहना क्या रे ॥ काल० ॥ टेक ॥ छिन हू तोकूं नाहिं बचावैं, तौ सुभटनका रखना क्या रे ॥ काल० ॥ १ ॥ रंच सवाद करिनके काजैं, नरकनमैं दुख भरना क्या रे। कुलजन पथिकनिके हितकाजैं, जगत जालमैं परना क्या रे ॥ काल० ॥ २ ॥ इंद्रादिक कोउ नाहिं बचैया, और लोकैका शरना क्या रे। निश्चय हुआ जगतमैं मरना, कष्ट परै तब डरना क्या रे ॥ काल० ॥ ३ ॥ अपना ध्यान करत खिर जावैं, तौ करमनिका हरना क्या रे। अब हित करि आरत तजि बुधजन, जन्म जन्ममैं जरना क्या रे ॥ ॥ काल० ॥ ४ ॥

(६)

म्हे तो थांपर वारी, वारी वीतरागीजी, शांत छवी थांकी आनँदकारी जी ॥ म्हे० ॥ टेक ॥ इंद्र नरिंद्र फनिंद मिलि

१ अन्य लोगोंका।

सेवत, मुनि सेवत रिधिधारी जी ॥ म्हे० ॥ १ ॥ लखि अविकारी परउपगारी, लोकालोकनिहारी जी ॥ म्हे० ॥ २ ॥ सब त्यागी जी कृपातिहारी, बुधजन ले बलिहारी जी ॥ म्हे० ॥ ३ ॥

(७)

राग–रामकली, जलद तितालो।

या नित चितवो उठिकै भोर, मैं हूं कौन कहांतैं आयो, कौन हमारी ठौर ॥ या नित० ॥ टेक ॥ दीसत कौन कौन यह चितवत, कौन करत है शोर[1]। ईश्वर कौन कौन है सेवक, कौन करै झकझोर ॥ या नित० ॥ १ ॥ उपजत कौन मरै को भाई, कौन डरै लखि घोर। गया नहीं आवत कछु नाहीं, परिपूरन सब ओर ॥ या नित० ॥ २ ॥ और औरमैं और रूप है, परनति करि लइ और। स्वांग धरैं डोलौ याहीतैं, तेरी बुधजन भोर[2] ॥ या नित० ॥ ३ ॥

(८)

श्रीजिनपूजनको हम आये, पूजत ही दुखदुंद मिटाये ॥ श्रीजिन० ॥ टेक ॥ विकलप गयो प्रगट भयो धीरज, अदभुत सुख समता बरसाये। आधि व्याधि अब दीखत नाहीं, धरम कलपतरु आँगन थाये ॥ श्रीजिन० ॥ १ ॥ इतमैं इन्द्र चक्रवति इतमैं, इतमैं फनिँद खरे सिर नाये। मुनिजनवृन्द करैं थुति हरषत, धनि हम जनमैं पद परसाये ॥ श्रीजिन० ॥ २ ॥ परमौदारिकमैं परमातम,

1 शब्द। २ भोलापन–मूर्खत्व।

ज्ञानमई हमको दरसाये । ऐसे ही हममैं हम जानैं, बुधजन गुन मुख जात न गाये ॥ श्रीजिन० ॥ ३ ॥

(९)

राग–ललित एकतालो ।

वधाई राजै हो आज राजै, वधाई राजै, नाभिरायके द्वार । इंद्र सची सुर सब मिलि आये, सजि ल्याये गजराजै ॥ वधाई० ॥ १ ॥ जन्मसदनतैं सची ऋषभ ले, सौंपि दये सुरराजै । गजपै धारि गये सुरगरिपै, न्हौंन करनके काजै ॥ वधाई० ॥ २ ॥ आठ सहस सिर कलस जु ढारे, पुनि सिंगार समाजै । ल्याय धर्यौ मरुदेवी करमैं, हरि नाच्यौ सुख साजै ॥ वधाई० ॥ ३ ॥ लच्छन व्यंजन सहित सुभग तन, कंचनदुति रवि लाजै । या छवि बुधजनके उर निशि दिन, तीनज्ञानजुत राजै ॥ वधाई० ॥ ४ ॥

(१०)

राग–ललित जलद तितालो ।

हो जिनवानी जू, तुम मोकौं तारोगी ॥ हो० ॥ टेक ॥ आदि अन्त अविरुद्ध वचनतैं, संशय भ्रम निरवारोगी ॥ हो० ॥ १ ॥ ज्यौं प्रतिपालत गाय वत्सकौं, त्यौं ही मुझकौं पारोगी । सनमुख काल बाघ जब आवै, तब तत्काल उबारोगी ॥ हो० ॥ २ ॥ बुधजन दास वीनवै माता, या विनती उर धारोगी । उलझि रह्यौ हूं मोह-जालमें, ताकौं तुम सुरझारोगी ॥ हो० ॥ ३ ॥

(११)

राग–विलावल कनड़ी ।

मनकैं हरष अपार–चितकैं हरष अपार, वानी सुनि

॥ टेक ॥ ज्यौं तिरषातुर अम्रत पीवत, चातक अंबुद[1] धार ॥ वानी सुनि० ॥ १ ॥ मिथ्या तिमिर गयो ततखिन ही, संशयभरम निवार। तत्त्वारथ अपने उर दरस्यौ, जानि लियो निज सार ॥ वानी सुनि० ॥ २ ॥ इंद नरिंद फनिंद पदीधर[2], दीसत रंक लगार। ऐसा आनँद बुधजनके उर, उपज्यौ अपरंपार ॥ वानी सुनि० ॥ ३ ॥

(१२)

राग-अलहिया।

चन्दजिनेसुर नाथ हमारा, महासेनसुत लगत पियारा ॥ चन्द० ॥ टेक ॥ सुरपति नरपति फनिपति सेवत, मानि महा उत्तम उपगारा। मुनिजन ध्यान धरत उरमाहीं, चिदानंद पदवीका धारा ॥ चन्द० ॥ १ ॥ चरन शरन बुधजन जे आये, तिन पाया अपना पद सारा। मंगलकारी भवदुखहारी, स्वामी अद्‌भुतउपमावारा ॥ चन्द० ॥ २ ॥

(१३)

राग-अलहिया विलावल-ताल धीमा तेताला।

करम देत दुख जोर, हो साइँयां ॥ करम० ॥ टेक ॥ कैइ परावृत पूरन कीनैं, संग न छांड़त मोर, हो साइँयां ॥ करम० ॥ १ ॥ इनके वशतैं मोहि बचावो, महिमा सुनी अति तोर, हो साइँयां ॥ करम० ॥ २ ॥ बुधजनकी विनती तुमहीसौं, तुमसा प्रभु नहिं और, हो साइँयां ॥ करम० ॥ ३ ॥

---

[1] मेघ। [2] पदवीधर।

(१४)

राग-विलावल धीमो तेतालो।

नरभव पाय फेरि दुख भरना, ऐसा काज न करना हो ॥ नरभव० ॥ टेक ॥ नाहक ममत ठानि पुद्गलसौं, करम-जाल क्यौं परना हो ॥ नरभव० ॥ १ ॥ यह तो जड़ तू ज्ञान अरूपी, तिल तुष ज्यौं गुरु वरना हो। राग दोष तजि भजि समताकौं, कर्म साथके हरना हो ॥ नरभव० ॥ २ ॥ यो भव पाय विषय-सुख सेना, गज चढ़ि ईंधन ढोना हो। बुधजन समुझि सेय जिनवर पद, ज्यौं भव-सागर तरना हो ॥ नरभव० ॥ ३ ॥

(१५)

राग-विलावल इकतालो।

सारद ! तुम परसादतैं, आनँद उर आया ॥ सारद० ॥ टेक ॥ ज्यौं तिरसातुर जीवकौं, अम्रतजल पाया ॥ सारद० ॥ १ ॥ नय परमान निखेपतैं, तत्त्वार्थ वताया। भाजी भूलि मिथ्यातकी, निज निधि दरसाया ॥ ॥ सारद० ॥ २ ॥ विधिना मोहि अनादितैं, चहुँगति भरमाया। ता हरिवेकी विधि सवै, मुझमाहिं वताया ॥ सारद० ॥ ३ ॥ गुन अनन्त मति अलपतैं, मोपै जात न गाया। प्रचुर कृपा लखि रावरी, बुधजन हरपाया ॥ सारद० ॥ ४ ॥

(१६)

गुरु दयाल तेरा दुख लखिकैं, सुन लै जो फुरमावै है ॥ गुरु० ॥ तोमैं तेरा जतन वतावै, लोभ कछू नहिं

चावै है ॥ गुरु० ॥ १ ॥ पर सुभावको मोख्या चाहै, अपना उंसा[1] बनावै है । सो तो कबहूं हुवा न होसी, नाहक रोग लगावै है ॥ गुरु० ॥ २ ॥ खोटी खरी जस करी कुमाई, तैसी तेरै आवै है । चिन्ता आगि उठाय हियामैं, नाहक जान जलावै है ॥ गुरु० ॥ ३ ॥ पर अपनावै सो दुख पावै, बुधजन ऐसे गावै है । परको त्यागि आप थिर तिष्टै, सो अविचल सुख पावै है ॥ गुरु० ॥ ४ ॥

(१७)

राग–आसावरी ।

अरज ह्मारी मानो जी, याही ह्मारी मानो, भवदधि हो तारना ह्मारा जी ॥ अरज० ॥ टेक ॥ पतितउधारक पतित पुकारै, अपनो विरद पिछानो ॥ अरज० ॥ १ ॥ मोह मगर मछ दुख दावानल, जनममरन जल जानो । गति गति भ्रमन भँवरमैं डूबत, हाथ पकरि ऊंचो आनो ॥ अरज० ॥ २ ॥ जगमैं आन देव बहु हेरे, मेरा दुख नहिं भानो । बुधजनकी करुना ल्यो साहिब, दीजे अविचल थानो ॥ अरज० ॥ ३ ॥

(१८)

राग–आसावरी जोगिया . ताल धीमो तेतालो ।

तू कांई चालै लाग्यो रे लोभीड़ा, आयो छै बुढ़ापो ॥ तू० ॥ टेक ॥ धंधामाहीं अंधा ह्वै कै, क्यौं खोवै छै आपो रे ॥ तू० ॥ १ ॥ हिमत घटी थारी सुमत मिटी छै, भाजि गयो तरुणापो । जम ले जासी सब रह जासी, सँग जासी

---

१ सरीखा ।

पुन्नें पापो रे ॥ तू० २ ॥ जग स्वारथकौ कोइ न तेरो, यह निहचै उर थापो । बुधजन ममत मिटावौ मनतैं, करि मुख श्रीजिनजापो रे ॥ तू० ॥ ३ ॥

(१९)

राग—आसावरी जोगिया ताल धीमो तेतालो।

थे ही मोनैं तारो जी, प्रभुजी कोई न हमारो ॥ थे ही० ॥ टेक ॥ हूं एकाकि अनादि कालतैं, दुख पावत हूं भारो जी ॥ थे ही० ॥ १ ॥ विन मतलबके तुम ही स्वामी, मतलबकौ संसारो । जग जन मिलि मोहि जगमैं राखैं, तू ही काढ़नहारो ॥ थे ही० ॥ २ ॥ बुधजनके अपराध मिटावो, शरन गह्यो छँ थारो । भवदधिमाहीं डूबत मोकौं, कर गहि आप निकारो ॥ थे ही० ॥ ३ ॥

(२०)

राग—आसावरी मांझ, ताल धीमो एकतालो ।

प्रभू जी अरज ह्मारी उर धरो ॥ प्रभू जी० ॥ टेक॥ प्रभू जी नरक निगोद्यांमें रुल्यौं, पायौ दुःख अपार ॥ प्रभू जी० ॥१॥ प्रभू जी, हूं पशुगतिमैं ऊपज्यौं, पीठ सह्यौ अतिभार ॥ प्रभू जी० ॥ २ ॥ प्रभू जी, विषय मगनमैं सुर भयो, जात न जान्यौं काल ॥ प्रभू जी० ॥ ३ ॥ प्रभू जी, नरभव कुल श्रावक लह्यौ, आयो तुम दरबार ॥ प्रभू जी० ॥ ४ ॥ प्रभू जी, भव भरमन बुधजनतनौं, मेटौ करि उपगार ॥ प्रभू जी० ॥ ५ ॥

---

१ पुण्य—शुभ कर्म ।

(२१)

राग–आसावरी ।

जगतमैं होनहार सो होवै, सुर नृप नाहिं मिटावैं ॥ जगत० ॥ टेक ॥ आदिनाथसेकौं भोजनमैं, अन्तराय उपजावैं । पारसप्रभुकौं ध्यानलीन लखि, कमठ मेघ वरसावैं ॥ जगत० ॥ १ ॥ लखमणसे सँग भ्राता जाकै, सीता राम गमावैं । प्रतिनारायण रावणसेकी, हनुमत लंक जरावैं ॥ जगत० ॥ २ ॥ जैसो कमावै तैसो ही पावै, यों बुधजन समझावैं । आप आपकौं आप कमावौ, क्यौं परद्रव्य कमावैं ॥ जगत० ॥ ३ ॥

(२२)

राग–आसावरी जलद्‌तेतालो ।

आगैं कहा करसी भैया, आजासी जब काल रे ॥ आगैं० ॥ टेक ॥ ह्यां तौ तैंनैं पोल मचाई, व्हां तौ होय समाल रे ॥ आगैं० ॥ १ ॥ झूठ कपट करि जीव सताये, हर्या पराया माल रे । सम्पतिसेती धाप्या[1] नाहीं, तकी विरानी[2] वाल[3] रे ॥ आगैं० ॥ २ ॥ सदा भोगमैं मगन रह्या तू, लख्या नहीं निज हाल रे । सुमरन दान किया नहिं भाई, हो जासी पैमाल[4] रे ॥ आगैं० ॥ ३ ॥ जोवनमैं जुवती सँग भूल्या, भूल्या जब था बाल रे । अब हू धारो बुधजन समता, सदा रहहु खुशहाल रे ॥ आगैं० ॥ ४ ॥

(२३)

राग–आसावरी जोगिया जलद तेतालो ।

चेतन, खेल सुमतिसँग होरी ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ तोरि

---

१ संतुष्ट नहीं हुआ । २ दूसरेकी । ३ स्त्री । ४ पायमाल–नष्ट ।

आनकी प्रीति सयाने, भली वनी या जोरी ॥ चेतन० ॥ १ ॥ डगर डगर डोलै है यौं ही, आव आपनी पौरी[1] निज रस फगुवा क्यों नहिं वांटो, नातर ख्वारी तोरी ॥ चेतन० ॥ २ ॥ छार[2] कषाय त्यागि या गहि लै, समकित केसर घोरी। मिथ्या पाथर डारि धारि लै, निज गुलालकी झोरी ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ खोटे भेष धरैं डोलत है, दुख पावै बुधि भोरी। बुधजन अपना भेष सुधारो, ज्यौं विलसो शिवगोरी ॥ चेतन० ॥ ४ ॥

(२४)

राग—आसावरी जोगिया जल्द तेतालो।

हे आतमा! देखी दुति तोरी रे॥ हे आतमा० ॥ टेक॥ निजको ज्ञात लोकको ज्ञाता, शक्ति नहीं थोरी रे ॥ हे आतमा० ॥ १ ॥ जैसी जोति सिद्ध जिनवरमैं, तैसी ही मोरी रे॥ हे आतमा० ॥ २ ॥ जड़ नहिं हुवो फिरै जड़के वसि, कै जड़की जोरी रे ॥ हे आतमा० ॥ ३ ॥ जगके काजि करन जग टहलै, बुधजन मति भोरी रे ॥ हे आतमा० ॥ ४ ॥

(२५)

वावा! मैं न काहू का, कोई नहीं मेरा रे॥ वावा० ॥टेक॥ सुर नर नारक तिरयक गतिमैं, मोकौं करमन घेरा रे ॥ वावा० ॥ १ ॥ मात पिता सुत तिय कुल परिजन, मोह गहल उरझेरा रे। तन धन वसन भवन जड़ न्यारे, हूं चि-

---

१ पौर—घर। २ धूल।

न्मूरति न्यारा रे ॥ वावा० ॥ २ ॥ मुझ विभाव जड़ कर्म रचत हैं, करमन हमको फेरा रे । विभाव चक्र तजि धारि सुभावा, अब आनँदघन हेरा रे ॥ वावा० ॥ ३ ॥ खरच (?) खेद नहिं अनुभव करते, निरखि चिदानँद तेरा रे । जप तप व्रत श्रुत सार यही है, वुधजन कर न अवेरा रे ॥ वावा० ॥ ४ ॥

(२६)

और सवै मिलि होरि रचावैं, हूं काके सँग खेलौंगी होरी ॥ और० ॥ टेक ॥ कुमति हरामिनि ज्ञानी पियापै, लोभ मोहकी डारी ठगौरी । भोरै झूठ मिठाई खवाई, खोंसि[1] लये गुन करि वरजोरी[2] ॥ और० ॥ १ ॥ आप हि तीनलोकके साहिव, कौन करै इनकै सम जोरी । अपनी सुधि कवहूँ नहिं लेते, दास भये डोलैं पर पौरी ॥ और० ॥ २ ॥ गुरु वुधजनतैं सुमति कहत है, सुनिये अरज दयाल सु मोरी । हा हा करत हूं पाँय परत हूं, चेतन पिय कीजे मो ओरी ॥ और० ॥ ३ ॥

(२७)

धर्म विन कोई नहीं अपना, सव संपति धन थिर नहिं जगमैं, जिसा रैनसपना ॥ धर्म० ॥ टेक ॥ आगैं किया सो पाया भाई, याही है निरना । अव जो करैगा सो पावैगा; तातैं धर्म करना ॥ धर्म० ॥ १ ॥ ऐसैं सव संसार कहत है, धर्म कियैं तिरना । परपीड़ा विसनादिक

---

१ छीन लिये । २ जवरदस्ती ।

सेयैं, नरकविषैं परना ॥ धर्म० ॥ २ ॥ नृपके घर सारी सामग्री, ताकैं ज्वर तपना । अरु दारिद्रीकैं हू ज्वर है, पाप उदय थपना ॥ धर्म ॥० ३ ॥ नाती तो स्वारथके साथी, तोहि विपत भरना । वन गिरि सरिता अगनि जुद्धमैं, धर्महिका सरना ॥ धर्म० ॥ ४ ॥ चित बुधजन सन्तोष धारना, पर चिन्ता हरना । विपति पड़ै तो समता रखना, परमातम जपना ॥ धर्म० ॥ ५ ॥

(२८)

राग—टोडी ताल होलीकी ।

कंचन दुति व्यंजन लच्छन जुत, धनुष पांचसै ऊंची काया ॥ कंचन० ॥ टेक ॥ नाभिराय मरुदेवीके सुत, पदमासन जिन ध्यान लगाया ॥ कंचन० ॥ १ ॥ ये तिन सुत व्योहार कथनमैं, निश्चय एक चिदानँद गाया । अपरस अवरन अरस अगंधित, बुधजन जानि सु सीस नवाया ॥ कंचन० ॥ २ ॥

(२९)

धनि सरधानी जगमैं, ज्यौं जल कमल निवास ॥ धनि० ॥ टेक ॥ मिथ्या तिमिर फट्यो प्रगट्यो शशि, चिदानंद परकास ॥ धनि० ॥ १ ॥ पूरव कर्म उदय सुख पावैं, भोगत ताहि उदास । जो दुखमैं न विलाप करैं, निरवैर सहैं तन त्रास ॥ धनि० ॥ २ ॥ उदय मोहचारित परवंशि है, व्रत नहिं करत प्रकास । जो किरिया करि हैं निरवांछक, करैं नहीं फल आस ॥ धनि० ॥ ३ ॥ दोषरहित प्रभु

धर्म दयाजुत, परिग्रह विन गुरु तास। तत्त्वारथरुचि है जाके घट, बुधजन तिनका दास ॥ धनि० ॥ ४ ॥

(३०)

राग—सारंग।

बधाई भई हो, तुम निरखत जिनराय, बधाई भई हो ॥ टेक ॥ पातक गये भये सब मंगल, भैंटत चरनकमल जिनराई ॥ बधाई० ॥ १ ॥ मिटे मिथ्यात भरमके वादर, प्रगटत आतम रवि अरुनाई। दुरबुध चोर भजे जिय जागे, करन लगे जिनधर्म कमाई ॥ बधाई० ॥ २ ॥ दृग-सरोज फूले दरसनतैं, तुम करुना कीनी सुखदाई। भाषि अनुव्रत महाविरतको, बुधजनको शिवराह बताई ॥ बधाई० ॥ ३ ॥

(३१)

राग—सारंगकी मांझ ताल दीपचन्दी।

म्हांरी सुणिज्यो परम दयालु, तुमसौं अरज करूं म्हांरी० ॥ टेक ॥ आन उपाव नहीं या जगमैं, जग तारक जिनराज, तेरे पाय परूं ॥ म्हांरी० ॥ १ ॥ साथ अनादि लागि विधि मेरी, करत रहत बेहाल, इनकौं कौलौं भरूं ॥ म्हांरी० ॥ २ ॥ करि करुना करमनको काटो, जनम मरन दुखदाय, इनतैं बहुत डरूं ॥ म्हांरी० ॥ ३ ॥ चरन सरन तुम पाय अनूपम, बुधजन मांगत येह—गति गति नाहिं फिरूं ॥ म्हांरी० ॥ ४ ॥

(३२)

बधाई चन्दपुरीमैं आज ॥ बधाई० ॥ टेक ॥ महासेन

सुत चंद्रकुँवरजू, राज लह्यौ सुख साज ॥ वधाई० ॥ १ ॥ सनमुख नृत्यकारिनी नाचत, होत मृदंग अवाज । भैंट करत नृप देश देशके, पूरत सवके काज ॥ वधाई० ॥ २ ॥ सिंहासनपै सोहत ऐसो, ज्यौं शशि नखत[1] समाज । नीति निपुन परजा[2]को पालक, वुधजनको सिरताज ॥ वधाई० ॥ ३ ॥

(३३)

राग—लूहरि सारंग ।

अरज करूं (तसलीम करूं) ठाड़ो विनऊं चरननको चेरो ॥ अरज० ॥ टेक ॥ दीनानाथ दयाल गुसाईं, मोपर करुना करिकैं हेरो ॥ अरज० ॥ १ ॥ भव वनमैं निरवल मोहि लखिकैं, दुष्टकर्म सव मिलिकै घेरो । नाना रूप वनाकैं मेरो, गति चारोंमें दयो है फेरो ॥ अरज० ॥ २ ॥ दुखी अनादि कालको भटकत, सरनो आय गह्यौ मैं तेरो । कृपा करो तौ अव वुधजनपै, हरो वेगि संसार वसेरो ॥ अरज० ॥ ३ ॥

(३४)

तथा—

निजपुरमैं आज मची होरी ॥ निज० ॥ टेक ॥ उमँगि चिदानँदजी इत आये, इत आई सुमती गोरी ॥ निज० ॥ १ ॥ लोकलाज कुलकानि[3] गमाई, ज्ञान गुलाल भरी झोरी ॥ निज० ॥ २ ॥ समकित केसर रंग वनायो, चारितकी पिचुकी छोरी ॥ निज० ॥ ३ ॥ गावत अजपा

---

१ नक्षत्र तारागण । २ प्रजा । ३ कुलकी लाज ।

गान मनोहर, अनहद झरसौं वरस्यो री ॥ निज० ॥ ४ ॥ देखन आये बुधजन भीगे, निरख्यौ ख्याल अनोखो री ॥ निज० ॥ ५ ॥

(३५)

राग—लहरि सारंग जलद तेतालो।

मोकौं तारो जी तारो जी किरपा करिकै ॥ मोकौं० ॥ टेक ॥ अनादि कालको दुखी रहत हूं, टेरत हूं जमतैं डरिकै ॥ मोकौं० १ ॥ भ्रमत फिरत चारौं गति भीतर, भवमाहीं मरि मरि करिकै। डूबत अगम अथाह जलधिमैं, राखो हाथि पकरि करिकै ॥ मोकौं० ॥ २ ॥ मोह भरम विपरीत वसत उर, आप न जानों निज करिकै। तुम सब ज्ञायक मोहि उवारो, बुधजनको अपनो करिकै ॥ मोकौं० ॥ ३ ॥

(३६)

राग—सारंग।

हम शरन गह्यौ जिन चरनको ॥ हम० ॥ टेक ॥ अब औरनकी मान न मेरे, डर हु रह्यो नहिं मरनको ॥ हम० ॥ १ ॥ भरम विनाशन तत्त्वप्रकाशन, भवदधि तारन तरनको। सुरपति नरपति ध्यान धरत वर, करि निश्चय दुख हरनको ॥ हम० ॥ २ ॥ या प्रसाद ज्ञायक निज मान्यौ, जान्यौ तन जड़ परनको। निश्चय सिधसो[1] पै कषायतैं, पात्र भयो दुख भरनको ॥ हम० ॥ ३ ॥ प्रभु विन और नहीं या जगमैं, मेरे हितके करनको। बुधजनकी अरदास यही है, हर संकट भव फिरनको ॥ हम० ॥ ४ ॥

---

१ सिद्ध भगवान सरीखा।

(३७)

राग—सारंग ।

तन देख्या अथिर घिनावना ॥ तन० ॥ टेक ॥ बाहर चाम चमक दिखलावै, माहीं मैल अपावना । बालक ज्वान बुढ़ापा मरना, रोगशोक उपजावना ॥ तन० ॥ १ ॥ अलख अमूरति नित्य निरंजन, एकरूप निज जानना । वरन फरस रस गंध न जाकै, पुन्य पाप विन मानना ॥ तन० ॥ २ ॥ करि विवेक उर धारि परीक्षा, भेद—विज्ञान विचारना । बुधजन तनतैं ममत मेटना, चिदानंद पद धारना ॥ तन० ॥ ३ ॥

(३८)

राग—सारंग लूहरि ।

तेरो करि लै काज वखत फिर ना ॥ तेरो० ॥ टेक ॥ नरभव तेरे वश चालत है, फिर परभव परवश परना ॥ तेरो० ॥ १ ॥ आन अचानक कंठ दवैंगे, तब तोकौं नाहीं शरना । यातैं विलम न ल्याय बावरे, अब ही कर जो है करना ॥ तेरो० ॥२॥ सब जीवनकी दया धार उर, दान सुपात्रनि—कर धरना । जिनवर पूजि शास्त्र सुनि नित प्रति, बुधजन संवर आचरना ॥ तेरो० ॥ ३ ॥

(३९)

राग—लूहरि मीणांकी चालमें ।

अहो ! देखो केवलज्ञानी, ज्ञानी छवि भली या विराजै हो—भली या विराजै हो ॥ अहो० ॥ टेक ॥ सुर नर मुनि याकी सेव करत हैं, करम हरनके काजै हो ॥ अहो०

॥ १ ॥ परिग्रहरहित प्रातिहारजजुत, जगनायकता छाजै हो। दोष विना गुन सकल सुधारस, दिविधुनि मुखतैं गाजै हो ॥ अहो देखो० ॥ २ ॥ चितमैं चितवत ही छिनमाहीं, जन्म जन्म अघ भाजै हो। वुधजन याकौं कवहुँ न विसरो, अपने हितके काजै हो ॥ अहो० ॥ ३ ॥

(४०)

राग—सारंग लूहरि।

श्रीजी तारनहारा थे तो, मोनैं प्यारा लागो राज ॥ श्री० ॥ टेक ॥ वार सभा विच गंधकुटीमैं, राज रहे महाराज ॥ श्री० ॥ १ ॥ अनत कालका भरम मिटत है, सुनतहिं आप अवाज ॥ श्री० ॥ २ ॥ वुधजन दास रावरो विनवै, थासूं सुधरै काज ॥ श्री० ॥ ३ ॥

(४१)

राग—पूरवी एकताला।

तनकें मवासी हो, अयाना ॥ तनके० ॥ टेक ॥ चहुँगति फिरत अनंतकालतैं, अपने सदनकी सुधि भौराना ॥ तनके० ॥ १ ॥ तन जड़ फरस—गंध—रसरूपी, तू तौ दरसनज्ञाननिधाना, तनसौं ममत मिथ्यात मेटिकै, वुधजन अपने शिवपुर जाना ॥ तनके० ॥ २ ॥

(४२)

राग—पूरवी एकतालो।

नैन शान्त छवि देखि छके दोऊ ॥ नैन० ॥ टेक ॥ अव अद्भुत दुति नहिं विसराऊं, वुरा भला जग कोटि कहो कोऊ ॥ नैन० ॥ १ ॥ वड़भागन यह अवसर पाया, सुनियो जी

अब अरज मेरी कहूं। भवभवमैं तुमरे चरननको, बुधजन दास सदा हि बन्यौ रहूं ॥ नैन० ॥ २ ॥

(४३)

राग–पूरवी जल्द तितालो।

हरना जी जिनराज, मोरी पीर ॥ हरना०॥ टेक॥ आन देव सेये जगवासी, सर्यौ नहीं मेरो काज ॥ हरना० ॥ १ ॥ जगमैं वसत अनेक सहज ही, प्रनवत विविध समाज। तिनपै इष्ट अनिष्ट कल्पना, मैटोगे महाराज ॥ हरना० ॥ २ ॥ पुद्गल राचि अपनपौ भूल्यौ, विरथा करत इलाज। अवहिं जथाविधि वेगि वतावो, बुधजनके सिरताज ॥ हरना०॥३॥

(४४)

राग–पूरवी।

भजन विन यौं ही जनम गमायो ॥ भजन० ॥ टेक ॥ पानी पैल्यां[1] पाल[2] न बांधी, फिर पीछैं पछतायो ॥ भज० ॥ १ ॥ रामा-मोह भये दिन खोवत, आशापाश वँधायो। जप तप संजम दान न दीनौं, मानुष जनम हरायो ॥ भजन० ॥ २ ॥ देह सीस जब कांपन लागी, दसन चलाचल थायो। लागी आगि भुजावन कारन, चाहत कूप खुदायो ॥ भजन० ॥ ३ ॥ काल अनादि गुमायो भ्रमतां, कबहुँ न थिर चित ल्यायो। हरी विषयसुखभरम भुलानो, मृगतिसना-वश धायो ॥ भजन० ॥ ४ ॥

(४५)

राग–पूरवी।

तारो क्यौं न, तारो जी, म्हें तो थांके शरना आया ॥

---

१ पहले, पूर्वमें। २ पार–खेतके चारों ओर जो बँधिया बांधते हैं।

टेक ॥ विधना मोकौं चहुँगति फेरत, वड़े भाग तुम दरशन पाया ॥ तारो० ॥ १ ॥ मिथ्यामत जल मोह मकरजुत, भरम भौंरमैं गोता खाया । तुम मुख वचन अलंवन पाया, अब बुधजन उरमैं हरपाया ॥ तारो० ॥ २ ॥

(४६)

भवदधि-तारक नवका, जगमाहीं जिनवान ॥ भव० ॥ टेक ॥ नय प्रमान पतवारी जाके, खेवट आतमध्यान ॥ भव० ॥ १ ॥ मन वच तन सुध जे भवि धारत, ते पहुँचंत शिवथान । परत अथाह मिथ्यात भँवर ते, जे नहिं गहत अजान ॥ भव० ॥ २ ॥ विन अक्षर जिनमुखतैं निकसी, परी वरनजुत कान । हितदायक बुधजनकों गनधर, गूँथे ग्रंथ महान ॥ भव० ॥ ३ ॥

(४७)

राग–धनासरी धीमो तितालो ।

प्रभु, थांसूं अरज हमारी हो ॥ प्रभु० ॥ टेक ॥ मेरे हितू न कोऊ जगतमैं, तुम ही हो हितकारी हो ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ संग लग्यौ मोहि नेकू न छांड़ै, देत मोह दुख भारी । भववनमाहिं नचावत मोकौं, तुम जानत हौ सारी ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ थांकी महिमा अगम अगोचर, कहि न सकै बुधि म्हारी । हाथ जोरकै पाय परत हूं, आवागमन निवारी हो ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

(४८)

तथा—

याद प्यारी हो, म्हांनैं थांकी याद प्यारी ॥ हो म्हांनैं० ॥ टेक ॥ मात तात अपने स्वारथके, तुम हितु परउप-

गारी ॥ हो म्हांनैं० ॥ १ ॥ नगन छवी सुन्दरता जापै, कोटि काम दुति वारी । जन्म जन्म अवलोकौं निशिदिन, बुधजन जा बलिहारी ॥ हो म्हांनैं० ॥ २ ॥

(४९)

राग-गौड़ी ताल आदि तितालो ।

अरे हाँ रे तैं तो सुधरी बहुत बिगारी ॥ अरे० ॥ टेक ॥ ये गति मुक्ति महलकी पौरी, पाय रहत क्यौं पिछारी ॥ अरे० ॥ १ ॥ परकौं जानि मानि अपनो पद, तजि ममता दुखकारी । श्रावक कुल भवदधि तट आयो, बूड़त क्यौं रे अनारी ॥ अरे० ॥ २ ॥ अबहूं चेत गयो कछु नाहीं, राखि आपनी वारी । शक्तिसमान त्याग तप करिये, तब बुधजन सिरदारी ॥ अरे० ॥ ३ ॥

(५०)

राग-काफी कनड़ी ।

मैं देखा आतमरामा ॥ मैं० ॥ टेक ॥ रूप फरस रस गंधतैं न्यारा, दरस-ज्ञान-गुनधामा । नित्य निरंजन जाकै नाहीं, क्रोध लोभ मद कामा ॥ मैं० ॥ १ ॥ भूख प्यास सुख दुख नहिं जाकै, नाहीं वन पुर गामा । नहिं साहिब नहिं चाकर भाई, नहीं तात नहिं मामा ॥ मैं० ॥ २ ॥ भूलि अनादिथकी जग भटकत, लै पुद्गलका जामा । बुधजन संगति जिनगुरुकीतैं, मैं पाया मुझ ठामा ॥ मैं० ॥ ३ ॥

(५१)

राग-काफी कनड़ी-ताल-पसतो ।

अब अघ करत लजाय रे भाई ॥ अब० ॥ टेक ॥ श्रावक घर उत्तम कुल आयो, भैंटे श्रीजिनराय ॥ अब०

॥ १ ॥ धन वनिता आभूषन परिगह; त्याग करौ दुखदाय। जो अपना तू तजि न सकै पर,—सेयां नरक न जाय ॥ अव० ॥ २ ॥ विषयकाज क्यौं जनम गुमावै, नरभव कब मिलि जाय। हस्ती चढ़ि जो ईंधन ढोवै, बुधजन कौन बसाय ॥ अव० ॥ ३ ॥

(५२)

राग—काफी कनड़ी।

तोकौं सुख नहिं होगा लोभीड़ा! क्यौं भूल्या रे परभावनमैं ॥ तोकौं० ॥ टेक ॥ किसी भाँति कहुँका धन आवै, डोलत है इन दावनमैं ॥ तोकौं० ॥ १ ॥ व्याह करूं सुत जस जग गावै, लग्यौ रहै या भावनमैं ॥ तोकौं० ॥ २ ॥ दरव परिनमत अपनी गौंतैं, तू क्यौं रहित उपायनमैं ॥ तोकौं० ॥ ३ ॥ सुख तो है सन्तोष करनमैं, नाहीं चाह बढावनमैं ॥ तोकौं० ॥ ४ ॥ कै सुख है बुधजनकी संगति, कै सुख शिवपद पावनमैं ॥ तोकौं० ॥ ५ ॥

(५३)

राग—कनड़ी।

निरखे नाभिकुमारजी, मेरे नैन सफल भये ॥ निर० ॥ टेक ॥ नये नये वर मंगल आये, पाई निज रिधि सार ॥ निरखे० ॥१॥ रूप निहारन कारन हरिने, कीनी आंख हजार। वैरागी मुनिवर हू लखिकै, ल्यावत हरष अपार ॥ निरखे० ॥ २ ॥ भरम गयो तत्त्वारथ पायो, आवत ही दरवार। बुधजन चरन शरन गहि जाँचत, नहिं जाऊं परद्वार ॥ निरखे० ॥ ३ ॥

(५४)

राग–कनड़ी।

भला होगा तेरा यौं ही, जिनगुन पल न भुलाय हो ॥ भला० ॥ टेक ॥ दुख मैटन सुखदैन सदा ही, नमिकै मन वच काय हो ॥ भला० ॥१॥ शक्री चक्री इन्द्र फनिन्द्र सु, वरनन करत थकाय हो। केवलज्ञानी त्रिभुवनस्वामी, ताकौं निशिदिन ध्याय हो ॥ भला० ॥ २ ॥ आवागमन-सुरहित निरंजन, परमातम जिनराय हो। बुधजन विधि-तैं पूजि चरन जिन, भव भवमैं सुखदाय हो ॥ भला० ॥३॥

(५५)

राग–कनड़ी।

उत्तम नरभव पायकै, मति भूलै रे रामा ॥ मति भू० ॥ टेक ॥ कीट पशूका तन जब पाया, तब तू रह्या निकामा। अब नरदेही पाय सयाने, क्यौं न भजै प्रभुनामा ॥ मति भू० ॥ १ ॥ सुरपति याकी चाह करत उर, कब पाऊं नर-जामा। ऐसा रतन पायकैं भाई, क्यौं खोवत बिन कामा ॥ मति भू० ॥ २ ॥ धन जोवन तन सुन्दर पाया, मगन भया लखि भामा। काल अचानक झटक खायगा, परे रहैंगे ठामा ॥ मति० ॥ ३ ॥ अपने स्वामीके पद-पंकज, करो हिये विसरामा। मैंटि कपट भ्रम अपना बुधजन, ज्यौं पावौ शिवधामा ॥ मति भू० ॥ ४ ॥

(५६)

धनि चन्दप्रभदेव, ऐसी सुबुधि उपाई ॥ धनि० ॥टेक॥ जगमैं कठिन विराग दशा है, सो दरपन लखि तुरत

उपाई ॥ धनि० ॥ १ ॥ लौकान्तिक आये ततखिन ही, चढ़ि सिविका वनओर चलाई । भये नगन सब परिग्रह तजिकै, नग चम्पातर लौंच लगाई ॥ धनि० ॥ २ ॥ महासेन धनि धनि लच्छमना, जिनकैं तुमसे सुत भये साईं । बुधजन वन्दत पाप निकन्दत, ऐसी सुबुधि करो मुझमांई ॥ धनि० ॥ ३ ॥

(५७)

चुप रे मूढ अजान, हमसौं क्या बतलावै ॥ चुप० ॥ टेक ॥ ऐसा कारज कीया तैंनैं, जासौं तेरी हान ॥ चु० ॥ १ ॥ राम विना हैं मानुष जेते, भ्रात तात सम मान । कर्कश वचन बकै मति भाई, फूटत मेरे कान ॥ चुप० ॥ २ ॥ पूरव दुकृत किया था मैंने, उदय भया ते आन । नाथविछोहा हूवा यातैं, पै मिलसी या थान ॥ चुप० ॥ ३ ॥ मेरे उरमैं धीरज ऐसा, पति आवै या ठान । तब ही निग्रह ह्वै है तेरा, होनहार उर मान ॥ चुप० ॥ ४ ॥ कहां अजोध्या कहँ या लंका, कहाँ सीता कहँ आन । बुधजन देखो विधिका कारज, आगममाहिं बखान ॥ चुप० ॥ ५ ॥

(५८)

राग-कनड़ी एकतालो ।

त्रिभुवननाथ हमारौ, हो जी ये तो जगत उजियारौ ॥ त्रिभुवन० ॥ टेक ॥ परमौदारिक देहके माहीं, परमातम हितकारौ ॥ त्रिभुवन० ॥ १ ॥ सहजैं ही जगमाहिं रह्यौ छै, दुष्ट मिथ्यात अँधारौ । ताकौं हरन करन समकित

रवि, केवलज्ञान निहारौ ॥ त्रिभुवन० ॥ २ ॥ त्रिविध शुद्ध भवि इनकौं पूजौ, नाना भक्ति उचारौ । कर्म काटि बुधजन शिव लै हौं, तजि संसार दुखारौ ॥ त्रिभु० ॥३॥

(५९)

राग—दीपचंदी ।

मेरी अरज कहानी, सुनि केवलज्ञानी ॥ मेरी० ॥ टेक ॥ चेतनके सँग जड़ पुद्गल मिलि, सारी बुधि बौरानी ॥ मेरी० ॥ १ ॥ भव वनमाहीं फेरत मोकौं, लख चौरासी थानी । कौलौं बरनौं तुम सब जानो, जनम मरन दुख-खानी ॥ मेरी० ॥ २ ॥ भाग भलेतैं मिले बुधजनको, तुम जिनवर सुखदानी । मोह फांसिको काटि प्रभूजी, कीजे केवलज्ञानी ॥ मेरी० ॥ ३ ॥

(६०)

तेरी बुद्धिकहानी, सुनि मूढ़ अज्ञानी ॥ तेरी० ॥ टेक॥ तनक विषय सुख लालच लाग्यौ, नंतकाल दुखखानी ॥ तेरी० ॥ १ ॥ जड़ चेतन मिलि बंध भये इक, ज्यौं पय-माहीं पानी । जुदा जुदा सरूप नहिं मानै, मिथ्या एकता मानी ॥ तेरी० ॥ २ ॥ हूं तौ बुधजन दृष्टा ज्ञाता, तन जड़ सरधा आनी । ते ही अविचल सुखी रहैंगे, होय मुक्तिवर प्रानी ॥ तेरी० ॥ ३ ॥

(६१)

राग—ईमन ।

तू मेरा कह्या मान रे निपट अयाना ॥ तू० ॥ टेक ॥ भव वन वाट मात सुत दारा, बंधु पथिकजन जान रे ।

इनतैं प्रीति न ला विछुरैंगे, पावैंगो दुख—खान रे ॥ तू० ॥१॥ इकसे तन आतम मति आनैं, यो जड़ है तू ज्ञान रे। मोह-उदय वश भरम परत है, गुरु सिखवत सरधान रे ॥ तू० ॥ २ ॥ वादल रंग सम्पदा जगकी, छिनमैं जात विलान रे। तमाशवीन वनि यातैं वुधजन, सवतैं ममता हान रे ॥ तू० ॥ ३ ॥

(६२)

राग—ईमन तेतालो।

हो विधिनाकी मोपै कही तौ न जाय ॥ हो० ॥ टेक ॥ सुलट उलट उलटी सुलटा दे, अदरस पुनि दरसाय ॥ हो० ॥१॥ उर्वशि नृत्य करत ही सनमुख, अमर परत हैं पाँय (?)। ताही छिनमैं फूल वनायौ, धूप परैं कुम्हलाय (?) ॥हो०॥२॥ नागा पाँय फिरत घर घर जव, सो कंर दीनौं राय। ताहीको नरकनमैं कूकर, तोरि तोरि तन खाय ॥ हो० ॥३॥ करम उदय भूलै मति आपा, पुरुपारथको त्याय। वुधजन ध्यान धरै जव मुहुरत, तव सव ही नसि जाय ॥ हो०॥४॥

(६३)

जिनवानीके सुनेसौं मिथ्यात मिटै। मिथ्यात मिटै समकित प्रगटै ॥ जिनवानी० ॥ टेक ॥ जैसैं प्रात होत रवि ऊगत, रैन तिमिर सव तुरत फटै ॥ जिनवानी० ॥ १ ॥ अनादि कालकी भूलि मिटावै, अपनी निधि घटमैं उघटै। त्याग विभाव सुभाव सुधारै, अनुभव करतां करम कटै ॥ जिनवानी० ॥ २ ॥ और काम तजि सेवो याकौं, या विन नाहिं अज्ञान घटै ॥ वुधजन याभव परभवमाहीं, याकी हुंडी तुरत पटै ॥ जिनवानी० ॥ ३ ॥

(६४)

सम्यग्ज्ञान विना, तेरो जनम अकारथ जाय ॥ सम्यग्ज्ञान० ॥ टेक ॥ अपने सुखमैं मगन रहत नहिं, परकी लेत वलाय । सीख सुगुरुकी एक न मानै, भव भवमैं दुख पाय ॥ सम्यग्ज्ञान० ॥ १ ॥ ज्यौं कपि आप काठ-लीलाकरि, प्रान तजै विललाय । ज्यौं निज मुखकरि जाल-मकरिया, आप मरै उलझाय ॥ सम्यग्ज्ञान० ॥ २ ॥ कठिन कमायो सब धन ज्वारी, छिनमैं देत गमाय । जैसैं रतन पायके भोंदू, बिलखै आप गमाय ॥ सम्यग्ज्ञान० ॥ ३ ॥ देव शास्त्र गुरुको निहचैकरि, मिथ्यामत मति ध्याय । सुरपति वांछा राखत याकी, ऐसी नर परजाय ॥ सम्यग्ज्ञान०

(६५)

राग-झंझोटी ।

शिवथानी निशानी जिनवानि हो ॥ शिव० ॥ टेक ॥ भववनभ्रमन निवारन-कारन, आपा-पर-पहचानि हो ॥ शिव० ॥ १ ॥ कुमति पिशाच मिटावन लायक, स्याद मंत्र मुख आनि हो ॥ शिव० ॥ २ ॥ बुधजन मनवचतन-करि निशिदिन, सेवो सुखकी खानि हो ॥ शिव० ॥ ३ ॥

(६६)

देखो नया, आज उछाव भया ॥ देखो० ॥ टेक ॥ चंदपुरीमैं महासेन घर, चंदकुमार जया ॥ देखो० ॥ १ ॥ मातलखमनासुतको गजपै, लै हरि गिरपै गया ॥ देखो० ॥ २ ॥ आठ सहस कलसा सिर ढारे, वाजे वजत नया ॥ देखो० ॥ ३ ॥ सौंपि दियो पुनि मात गोदमैं, तांडव

नृत्य थया ॥ देखो० ॥ ४ ॥ सो वानिक लखि बुधजन हरषै, जै जै पुरमें किया ॥ देखो० ॥ ५ ॥

(६७)

मैं देखा अनोखा ज्ञानी वे ॥ मैं० ॥ टेक ॥ लारैं लागि आनकी भाई, अपनी सुध विसरानी वे ॥ मैं० ॥ १ ॥ जा कारनतैं कुगति मिलत है, सो ही निजकर आनी वे ॥ मैं० ॥ २ ॥ झूठे सुखके काज सयानें, क्यौं पीड़ै है प्रानी वे ॥ मैं० ॥ ३ ॥ दया दान पूजन व्रत तप कर, बुधजन सीख वखानी वे ॥ मैं० ॥ ४ ॥

(६८)

राग—जंगलो।

मेरो मनुवा अति हरषाय, तोरे दरसनसौं ॥ मेरो० ॥ टेक ॥ शांत छवी लखि शांतभाव ह्वै, आकुलता मिट जाय, तोरे दरसनसौं ॥ मेरो० ॥ १ ॥ जब लौं चरन निकट नहिं आया, तब आकुलता थाय। अब आवत ही निज निधि पाया, निति नव मंगल पाय, तोरे दरसनसौं ॥ मेरो० ॥ २ ॥ बुधजन अरज करै कर जोरै, सुनिये श्री-जिनराय। जब लौं मोख होय नहिं तब लौं, भक्ति करूं गुन गाय, तोरे दरसनसौं ॥ मेरो० ॥ ३ ॥

(६९)

मोहि अपना कर जान, ऋषभजिन! तेरा हो ॥ मोहि० ॥ टेक ॥ इस भवसागरमाहिं फिरत हूं, करम रह्या करि घेरा हो ॥ मोहि० ॥ १ ॥ तुमसा साहिब और न मिलिया, सह्या भौत भटभेरा हो ॥ मोहि० ॥ २ ॥ बुधजन अरज करै निशि वासर, राखौ चरनन चेरा हो ॥ मोहि० ॥ ३ ॥

(७०)

मैं तेरा चेरा, अरज सुनो प्रभु मेरा ॥ मैं० ॥ टेक ॥ अष्टकर्म मोहि घेरि रहे हैं, दुख दे हैं बहुतेरा ॥ मैं० ॥ १ ॥ दीनदयाल दीन मो लखिकै, मैटो गति गति फेरा ॥ मैं० ॥ २ ॥ और जँजाल टाल सब मेरा, राखो चरनन चेरा ॥ मैं० ॥ ३ ॥ बुधजनओर निहारि कृपा करि, विनवै वारुंवेरा[1] ॥ मैं० ॥ ४ ॥

(७१)

राग-अहिंग।

तैं क्या किया नादान, तैं तो अंमृत तजि विष लीना ॥ तैं० ॥ टेक ॥ लख चौरासी जौनिमाहितैं, श्रावक कुलमैं आया। अब तजि तीन लोकके साहिब, नवग्रह पूजन धाया ॥ तैं० ॥ १ ॥ वीतरागके दरसनहीतैं, उदासीनता आवै। तू तौ जिनके सनमुख ठाड़ा, सुतको ख्याल खिलावै ॥ तैं० ॥ २ ॥ सुरग सम्पदा सहजैं पावै, निश्चय मुक्ति मिलावै। ऐसी जिनवर पूजनसेती, जगत कामना चावै ॥ तैं० ॥ ३ ॥ बुधजन मिलैं सलाह कहैं तब, तू वापै खिजि जावै। जथा जोगकौं अजथा मानै, जनम जनम दुख पावै ॥ तैं० ॥ ४ ॥

(७२)

राग-खंमाच।

सुनियो हो प्रभु आदि-जिनंदा, दुख पावत है वंदा ॥ सुनियो० ॥ टेक ॥ खोसि ज्ञान धन कीनौं जिंदा (?), डारि

---

[1] वारंवार।

ठगौरी धंदा ॥ सुनियो० ॥ १ ॥ कर्म दुष्ट मेरे पीछैं लाग्यौ, तुम हो कर्मनिकंदा ॥ सुनियो० ॥ २ ॥ बुधजन अरज करत है साहिब, काटि कर्मके फंदा ॥ सुनियो०॥३॥

(७३)

राग–खंमाच।

छवि जिनराई राजै छै ॥ छवि० ॥ टेक ॥ तरु अशोकतर सिंहासनपै, वैठे धुनि घन गाजै छै ॥ छवि० ॥ १ ॥ चमर छत्र भामंडलदुतिपै, कोटि भानदुति लाजै छै। पुष्पवृष्टि सुर नभतैं दुंदुभि, मधुर मधुर सुर वाजै छै ॥ छवि० ॥ २ ॥ सुर नर मुनि मिलि पूजन आवैं, निरखत मनड़ो छाजै छै। तीनकाल उपदेश होत है, भवि बुधजन हित काजै छै ॥ छवि० ॥ ३ ॥

(७४)

राग–खंमाच।

ऐसा ध्यान लगावो भव्य जासौं, सुरग मुकति फल पावो जी ॥ ऐसा० ॥ टेक ॥ जामैं वंध परै नहिं आगैं, पिछले वंध हटावो जी ॥ ऐसा० ॥१॥ इष्ट अनिष्ट कल्पना छांड़ो, सुख दुख एक हि भावो जी। पर वस्तुनिसौं ममत निवारो, निज आतम लौ ल्यावो जी ॥ ऐसा० ॥ २ ॥ मलिन देहकी संगति छूटै, जामन मरन मिटावो जी। शुद्ध चिदानँद बुधजन ह्वै कै, शिवपुरवास वसावो जी ॥ ऐसा० ॥ ३ ॥

(७५)

राग–खंमाच।

मेरा सांई तौ मोमैं नाहीं न्यारा, जानैं सो जाननहारा ॥ मेरा० ॥ टेक ॥ पहले खेद सह्यौ विन जानैं, अव सुख

अपरंपारा ॥ मेरा० ॥ १ ॥ अनत-चतुष्टय-धारक ज्ञायक, गुन परजै द्रव सारा। जैसा राजत गंधकुटीमैं, तैसा मुझमैं म्हारा ॥ मेरा० ॥ २ ॥ हित अनहित मम पर विकलपतैं, करम बंध भये भारा। ताहि उदय गति गति सुख दुखमैं, भाव किये दुखकारा ॥ मेरा० ॥ ३ ॥ काल-लवधि जिनआगमसेती, संशयभरम विदारा। बुधजन ज्ञान करावन करता, हौं ही एक हमारा ॥ मेरा० ॥ ४ ॥

(७६)

राग—गारो जल्द तेतालो।

म्हांरी भी सुणि लीज्यौ, हो मोकौं तारणा, सुफल भये लखि मोरे नैन ॥ म्हांरी० ॥ टेक ॥ तुम अनंत गुन ज्ञान भरे हो, वरनन करतैं देव थकत हैं, कहि न सकै मुझ वैन ॥ म्हांरी० ॥ १ ॥ हम तो अनत दिन अनत भरम रहे, तुमसा कोऊ नांहिं देखिये, आनँदघन चित चैन ॥ म्हांरी० ॥ २ ॥ बुधजन चरन शरन तुम लीनी, वांछा मेरी पूरन कीजे, संग न रहै दुखदैन ॥ म्हां० ॥३॥

(७७)

राग—गारो कान्हरो।

थांका गुण गास्यां जी आदिजिनंदा ॥ थांका० ॥ टेक ॥ थांका वचन सुण्यां प्रभु मूनैं, म्हारा निज गुण भास्यां जी ॥ आदि० ॥ १ ॥ म्हांका सुमन कमलमैं निशि-दिन, थांका चरन वसास्यां जी ॥ आदि० ॥ २ ॥ याही मूनैं लगन लगी छै, सुख द्यो दुःख नसास्यां जी ॥ आदि०

॥ ३ ॥ वुधजन हरष हिये अधिकाई, शिवपुरवासा पास्यां जी ॥ आदि० ॥ ४ ॥

(७८)

राग—कान्हरो ।

हो मना जी, थारी वानि, वुरी छै दुखदाई ॥ हो० ॥ टेक ॥ निज कारिजमैं नेकु न लागत, परसौं प्रीति लगाई ॥ हो०.॥ १ ॥ या सुभावसौं अति दुख पायो, सो अब त्यागो भाई ॥ हो० ॥ २ ॥ वुधजन औसर भागन पायो, सेवो श्रीजिनराई ॥ हो० ॥ ३ ॥

(७९)

राग—गारो कान्हरो ।

हो प्रभुजी, म्हारो छै नादानी मनड़ो ॥ हो० ॥ टेक॥ हूं ल्यावत तुम पद सेवनकौं, यौ नहिं आवत है—ञगड़ो जी ॥ हो० ॥ १ ॥ याकौ सुभाव सुधारि दयानिधि, माचि रह्यौ मोटो झगड़ो जी ॥ हो० ॥ २ ॥ वुधजनकी विनती सुन लीजे, कहजे शिवपुरको डगड़ो जी ॥ हो० ॥३॥

(८०)

रे मन मेरा, तू मेरो कह्यौ मान मान रे ॥ रे मन० ॥ टेक ॥ अनत चतुष्टय धारक तूही, दुख पावत वहु-तेरा ॥ रे मन० ॥ १ ॥ भोग विषयका आतुर ह्वैकै, क्यौं होता है चेरा ॥ रे मन० ॥ २ ॥ तेरे कारन गति गतिमाहीं, जनम लिया है घनेरा ॥ रे मन० ॥ ३ ॥ अब जिनचरन शरन गहि वुधजन, मिटि जावै भव फेरा ॥ रे मन० ॥ ४ ॥

(८१)

ज्ञान विन थान न पावौगे, गति गति फिरौगे अजान ॥ ज्ञान० ॥ टेक ॥ गुरुउपदेश लह्यौ नहिं उरमैं, गह्यौ नहीं सरधान ॥ ज्ञान० ॥ १ ॥ विषयभोगमैं राचि रहे करि, आरति रौद्र कुध्यान । आन-आन लखि आन भये तुम, परनति करि लई आन ॥ ज्ञान० ॥ २ ॥ निपट कठिन मानुष भव पायौ, और मिले गुनवान । अब वुधजन जिनमतको धारौ, करि आपा पहिचान ॥ ज्ञान० ॥ ३ ॥

(८२)

राग—केदारो, एकतालो ।

अहो मेरी तुमसौं वीनती, सब देवनिके देव ॥ अहो० ॥ टेक ॥ वे दूषनजुत तुम निरदूषन, जगत हितू स्वयमेव ॥ अहो० ॥ १ ॥ गति अनेकमैं अति दुख पायौ, लीनैं जन्म अछेव । हो संकट—हर दे वुधजनकौं, भव भव तुम पदसेव ॥ अहो० ॥ २ ॥

(८३)

राग—केदारो ।

याही मानौं निश्चय मानौं, तुम विन और न मानौं ॥ याही० ॥ टेक ॥ अबलौं गति गतिमैं दुख पायौ, नहिं लायौ सरधानौं ॥ याही० ॥ १ ॥ दुष्ट सतावत कर्म निरंतर, करौ कृपा इन्हैं भानौं । भक्ति तिहारी भव भव पाऊं, जौलौं लहौं शिवथानौं ॥ याही० ॥ २ ॥

(८४)

राग–सोरठ।

भोगांरां लोभीड़ा, नरभव खोयौ रे अजान ॥ भोगांरा० ॥ टेक ॥ धर्मकाजकौ कारन थौ यौ, सो भूल्यौ तू बान। हिंसा अँनृत परतिय चोरी, सेवत निजकरि जान ॥ भोगांरा० ॥ १ ॥ इंद्रीसुखमैं मगन हुवौ तू, परकौं आतम मान। बंध नवीन पड़ै छै यातैं, होवत मौटी हान ॥ भोगांरा० ॥ २ ॥ गयौ न कछु जो चेतौ बुधजन, पावौ अविचल थान। तन है जड़ तू दृष्टा ज्ञाता, कर लै यौं सरधान ॥ भोगांरा० ॥ ३ ॥

(८५)

म्हारी कौन सुनै, थे तौ सुनि ल्यो श्रीजिनराज ॥ म्हारी० ॥ टेक ॥ और सरब मतलबके गाहक, म्हांरौ सरत न काज। मोसे दीन अनाथ रंककौ, तुमतैं बनत इलाज ॥ म्हांरी० ॥ १ ॥ निज पर नेकु दिखावत नाहीं, मिथ्या तिमिर समाज। चंदप्रभू परकाश करौ उर, पाऊं धाम निजाज ॥ म्हांरी० ॥ २ ॥ थकित भयौ हूं गति गति फिरतां, दर्शन पायौ आज। बारंबार वीनवै बुधजन, सरन गहेकी लाज ॥ म्हांरी० ॥ ३ ॥

(८६)

राग–सोरठ।

छिन न बिसारां चितसौं, अजी हो प्रभुजी थांनैं ॥ छिन० ॥ टेक ॥ वीतरागछबि निरखत नयना, हरष भयौ सो उर ही जानै ॥ छिन० ॥ १ ॥ तुम मत खारक

---

१ भोगोंका लोभी।

दाख चाखिकै, आन निंमोरी[1] क्यौं मुख आनै। अव तौ सरनैं राखि रावरी, कर्म दुष्ट दुख दे छै म्हांनै॥ छिन०॥ २॥ वम्यौ मिथ्यामत अम्रत चाख्यौ, तुम भाख्यौ धाख्यौ मुझ कानै। निशि दिन थांकौ दर्श मिलौ मुझ, बुधजन ऐसी अरज वखानै॥ छिन०॥ ३॥

(८७)

वन्यौ म्हारै या घरीमैं रंग॥ वन्यौ०॥ टेक॥ तत्त्वारथकी चरचा पाई, साधरमीकौ संग॥ वन्यौ०॥ १॥ श्रीजिनचरन वसे उरमाहीं, हरष भयौ सव अंग। ऐसी विधि भव भवमैं मिलिज्यौ, धर्मप्रसाद अभंग॥वन्यौ०॥२॥

(८८)

राग–सोरठ।

कींपर[2] करौ जी गुमान, थे तौ कै दिनका मिजमान॥ कींपर०॥ टेक॥ आये कहांतैं कहां जावौगे, ये उर राखौ ज्ञान॥ कींपर०॥ १॥ नारायण वलभद्र चक्रवति, नाना रिद्धिनिधान। अपनी अपनी वारी भुगतिर, पहुँचे परभव थान॥ कींपर०॥ २॥ झूठ वोलि मायाचारीतैं, मति पीड़ौ परप्रान। तन धन दे अपने वश बुधजन, करि उपगार जहान॥ कींपर०॥ ३॥

(८९)

राग–सोरठ, एकतालो।

चंदाप्रभु देव देख्या दुख भाग्यौ॥ चंदा०॥ टेक॥ धन्य देहाड़ो[3] मन्दिर आयौ, भाग अपूरव जाग्यौ॥ चंदा०

---

१ नीमकी फली–लिम्बोरी। २ किसपर। ३ दिन।

॥ १ ॥ रह्यौ भरम तब गति गति डोल्यौ, जनम-मरन-दौं दाग्यौ । तुमको देखि अपनपौ देख्यौ, सुख समतारस पाग्यौ ॥ चंदा० ॥ २ ॥ अब निरभय पद वेग हि पास्यौं, हरष हिये यौं लाग्यौ । चरनन सेवा करै निरंतर, बुधजन गुन अनुराग्यौ ॥ चंदा० ॥ ३ ॥

(९०)

राग-सोरठ ।

ज्ञानी थारी रीतिरौ अचंभौ मोनैं आवै छै ॥ ज्ञानी० ॥ टेक ॥ भूलि सकति निज परवश है क्यौं, जनम जनम दुख पावै छै ॥ ज्ञानी० ॥ १ ॥ क्रोध लोभ मद माया करि करि, आपौ आप फँसावै छै । फल भोगनकी वेर होय तब, भोगत क्यौं पिछतावै छै ॥ ज्ञानी० ॥ २ ॥ पाप काज करि धनकौं चाहै, धर्म विषैमें बतावै छै । बुधजन नीति अनीति बनाई, सांचौ सौ बतरावै छै ॥ ज्ञानी० ॥ ३ ॥

(९१)

अब घर आये चेतनराय, सजनी खेलौंगी मैं होरी ॥ अब० ॥ टेक ॥ आरस सोच कानि कुल हरिकै, धरि धीरज बरजोरी ॥ सजनी० ॥ १ ॥ बुरी कुमतिकी बात न बूझै, चितवत है मोओरी । वा गुरुजनकी बलि बलि जाऊं, दूरि करी मति भोरी ॥ सजनी० ॥ २ ॥ निज सुभाव जल हौज भराऊं, घोरूं निजरँग रोरी । निज ल्यौं ल्याय शुद्ध पिचकारी, छिरकन निज मति दोरी ॥ सजनी० ॥ ३ ॥ गाय रिझाय आप वश करिकै, जावन द्यौं नहि पोरी । बुधजन रचि मचि रहूं निरंतर, शक्ति अपूरब मोरी ॥ सजनी० ॥ ४ ॥

(९२)

राग—सोरठ ।

कर लै हो जीव, सुकृतका सौदा कर लै, परमारथ कारज कर लै हो ॥ करि० ॥ टेक ॥ उत्तम कुलकौं पायकैं, जिनमत रतन लहाय । भोग भोगवे कारनैं, क्यौं शठ देत गमाय ॥ सौदा० ॥ १ ॥ व्यापारी वनि आइयौ, नरभव हाट वजार । फल दायक व्यापार करि, नातर विपति तयार ॥ सौदा० ॥ २ ॥ भव अनन्त धरतौ फिर्‌यौ, चौरासी वनमाहिं । अव नरदेही पायकैं, अघ खोवै क्यौं नाहिं ॥ सौदा० ॥ ३ ॥ जिनमुनि आगम परखकै, पूजौ करि सरधान । कुगुरु कुदेवके मानतैं, फिर्‌यौ चतुर्गति थान ॥ सौदा० ॥ ४ ॥ मोह नींदमां सोवतां, डूवौ काल अटूट । बुधजन क्यौं जागौ नहीं, कर्म करत है लूट ॥ सौदा० ॥ ५ ॥

(९३)

राग—सोरठ ।

वेगि सुधि लीज्यौ ह्मारी, श्रीजिनराज ॥ वेगि० ॥ टेक ॥ डरपावत नित आयु रहत है, संग लग्या जमराज ॥ वेगि० ॥१॥ जाके सुरनर नारक तिरजग, सव भोजनके साज । ऐसौ काल हर्‌यौ तुम साहव, यातैं मेरी लाज ॥ वेगि० ॥ २ ॥ परघर डोलत उदर भरनकौं, होत प्राततैं सांज । डूवत आश अथाह जलधिमैं, द्यो समभाव जिहाज ॥ वेगि० ॥ ३ ॥ घना दिनाकौ दुखी दयानिधि, औसर पायौ आज । बुधजन सेवक ठाड़ौ विनवै, कीज्यौ मेरौ काज ॥ वेगि० ॥ ४ ॥

(९४)

राग–सोरठ ।

गुरुने पिलाया जी; ज्ञान पियाला ॥ गुरु० ॥ टेक ॥
भइ बेखबरी परभावांकी, निजरसमैं मतवाला ॥ गुरु० ॥
१ ॥ यों तो छाक जात नहिं छिनहूं, मिटि गये आन जँ-
जाला । अदभुत आनँद मगन ध्यानमैं, बुधजन हाल स-
म्हाला ॥ गुरु० ॥ २ ॥

(९५)

राग–सोरठ ।

मति भोगन राचौ जी, भव भवमैं दुख देत घना
॥ मति० ॥ टेक ॥ इनके कारन गति गतिमाहीं, नाहक़
नाचौ जी । झूठे सुखके काज धरममैं, पाड़ौ खांचौ जी
॥ मति० ॥ १ ॥ पूरव कर्म उदय सुख आयां, राचौ माचौ
जी । पाप उदय पीड़ा भोगनमैं, क्यौं मन काचौ जी
॥ मति० ॥ २ ॥ सुख अनन्तके धारक तुम ही, पर क्यौं
जांचौ जी । बुधजन गुरुका वचन हियामैं, जानौं सांचौ
जी ॥ मति० ॥ ३ ॥

(९६)

थांका गुन गास्यां जी जिनजी राज, थांका दरसनतैं
अघ नास्या ॥ थांका० ॥ टेक ॥ थां सारीखा तीनलोकमैं,
और न दूजा भास्या जी ॥ जिनजी० ॥१॥ अनुभव रसतैं
सींचि सींचिकै, भव आताप बुझास्यां जी । बुधजनकौ
विकलप सब भाग्यौ, अनुक्रमतैं शिव पास्यां जी ॥
जिनजी० ॥ २ ॥

(९७)

राग—सोरठ ।

हमकों कछू भय ना रे, जान लियौ संसार ॥ हमकौं० टेक ॥ जो निगोदमैं सो ही मुझमैं, सो ही मोखमँझार । निश्चय भेद कछू भी नाहीं, भेद गिनै संसार ॥ हमकौं० ॥ १ ॥ परवश है आपा विसारिकै, राग दोषकौं धार । जीवत मरत अनादि कालतैं, यौं ही है उरझार ॥ हमकौं० ॥ २ ॥ जाकरि जैसैं जाहि समयमैं, जो होतब जा द्वार । सो बनि है टरि है कछु नाहीं, करि लीनौं निरधार ॥ हमकौं० ॥ ३ ॥ अगनि जरावै पानी बोवैं, बिछुरत मिलत अपार । सो पुद्गल रूपी मैं बुधजन, सबकौं जाननहार ॥ हमकौं० ॥ ४ ॥

(९८)

राग—सोरठ ।

आज तौ बधाई हो नाभिद्वार ॥ आज० ॥ टेक ॥ मरुदेवी माताके उरमैं, जनमैं ऋषभकुमार ॥ आज० ॥१॥ सची इन्द्र सुर सब मिलि आये, नाचत हैं सुखकार । हरषि हरषि पुरके नरनारी, गावत मंगलचार ॥ आज० ॥ २ ॥ ऐसौ बालक हूवो ताकै, गुनकौ नाहीं पार । तन मन बचतैं बंदत बुधजन, है भव-तारनहार ॥ आज०॥३॥

(९९)

सुणिल्यो जीव सुजान, सीख सुगुरु हितकी कही ॥ सुणि० ॥टेक॥ रुल्यौ अनन्ती बार, गति गति साता ना लही ॥ सुणि० ॥ १ ॥ कोइक पुन्य सँजोग, श्रावक कुल नरगति लही ।

मिले देव निरदोष, वाणी भी जिनकी कही ॥ सुणि० ॥२॥ चरचाको परसंग, अरु सरध्यामैं वैठिवो । ऐसा औसर फेरि, कोटि जनम नहिं भैंटिवो ॥ सुणि० ॥ ३ ॥ झूठी आशा छोड़ि, तत्त्वारथ रुचि धारिल्यो । यामैं कछु न विगार आपो आप सुधारिल्यो ॥ सुणि० ॥ ४ ॥ तनको आतम मानि, भोग विषय कारज करौ । यौं ही करत अकाज, भव भव क्यौं कूवे परौ ॥ सुणि० ॥ ५ ॥ कोटि ग्रंथकौ सार, जो भाई बुधजन करौ । राग दोप परिहार, याही भवसौं उद्धरौ ॥ सुणि० ॥ ६ ॥

(१००)

राग—सोरठ ।

अव थे क्यौं दुख पावौ रे जियरा, जिनमत समकित धारौ ॥ अव० ॥ टेक ॥ निलज नारि सुत व्यसनी मूरख, किंकर करत विगारौ । साहिव सूम अदेखक भैया, कैसैं करत गुजारौ ॥ अव० ॥ १ ॥ वाय पित्त कफ खांसी तन दृग, दीसत नाहिं उजारौ । करजदार अरुवेरुजगारी, कोऊ नाहिं सहारौ ॥ अव० ॥ २ ॥ इत्यादिक दुख सहज जानियौ, सुनियौ अव विस्तारौ । लख चौरासी अनत भवनलौं, जनम मरन दुख भारौ ॥ अव० ॥ ३ ॥ दोपरहित जिनवरपद पूजौ, गुरु निरग्रंथ विचारौ । वुधजन धर्म दया उर धारौ, व्है है जै जैकारौ ॥ अव० ॥ ४ ॥

(१०१)

राग—सोरठ ।

म्हांरौ मन लीनौ छै थे मोहि, आनँदघन जी ॥ म्हारो०

॥ टेक ॥ ठौर ठौर सारे जग भटक्यौ, ऐसो मिल्यौ नहिं कोय । चंचल चित मुझि अचल भयौ है, निरखत चरनन तोय ॥ म्हांरो० ॥ १ ॥ हरप भयौ सो उर ही जानैं, वरनौं जात न सोय । अनतकालके कर्म नसैंगे, सरधा आई जोय ॥ म्हांरो० ॥ २ ॥ निरखत ही मिथ्यात मिट्यौ सव, ज्यौं रवितैं दिन होय । वुधजन उरमैं राजौ नित प्रति, चरनकमल तुम दोय ॥ म्हांरो० ॥ ३ ॥

(१०२)

राग—सोरठ ।

आनँद हरप अपार, तुम भैंटत उरमैं भया ॥ आनंद० ॥ टेक ॥ नास्या तिमिर मिथ्यात, समकित सूरज ऊगिया ॥ आनँद० ॥ १ ॥ मिटि गयौ भव आताप, समता रससौं सींचिया । जान्या जगत असार, निज नरभवपद लखि लिया ॥ आनँद० ॥ २ ॥ परमौदारिक काय, शुद्धातम पद तुम धरे । दोप अठारै नाहिं, अनत चतुष्टय गुन भरे॥ ॥ आनँद० ॥ ३ ॥ उपजी तीर्थविभूति, कर्म घातिया सव हरे। तत्त्वारथ उपदेश, देव धर्म सनमुख करे ॥ आनँद० ॥ ४ ॥ शोभा कहिय न जाय, सिंहासन गिर मेरसौं । कलपवृक्षके फूल, वरपत हैं चहुँओरसौं ॥ आनँद ॥ ५ ॥ वाजत दुंदभि जोर, सुनि हरपत भवि घोरसौं । भामंडल भव देखि, छूटत हैं भवि सोरसौं ॥ आनँद० ॥ ६ ॥ तीन छत्र निशि चंद, तीन लोक सेवा करैं । चौंसठ चमर सफेद, गंधोदकसे सिर ढरैं ॥ आनँद० ॥ ७ ॥ वृक्ष

अशोक अनूप, शोक सरव जनकौ हरै। उपमा कहिय न जाय, वुधजन पद वंदन करै॥ आनँद०॥ ८॥

(१०३)

राग–विहाग।

सीख तोहि भाषत हूं या, दुख मैंटन सुख होय॥ सीख०॥ टेक॥ त्यागि अन्याय कषाय विषयकौं, भोगि न्याय ही सोय॥ सीख०॥ १॥ मंडै धरमराज नहिं दंडै, सुजस कहै सव लोय। यह भौ सुख परभौ सुख हो है, जन्म जन्म मल धोय॥ सीख०॥ २॥ कुगुरु कुदेव कुधर्म न पूजौ, प्रान हरौ किन कोय। जिनमत जिनगुरु जिनवर सेवौ, तत्त्वारथ रुचि जोय॥ सीख०॥ ३॥ हिंसा अँनृत परतिय चोरी, क्रोध लोभ मद खोय। दया दान पूजा संजम कर, वुधजन शिव है तोय॥ सीख०॥४॥

(१०४)

तेरौ गुन गावत हूं मैं, निजहित मोहि जताय दे॥ तेरौ०॥ टेक॥ शिवपुरकी मोकौं सुधि नाहीं, भूलि अनादि मिटाय दे॥ तेरौ०॥ १॥ भ्रमत फिरत हूं भव वनमाहीं, शिवपुर वाट वताय दे। मोह नींदवश घूमत हूं नित, ज्ञान वधाय जगाय दे॥ तेरौ०॥ २॥ कर्म शत्रु भव भव दुख दे हैं, इनतैं मोहि छुटाय दे। वुधजन तुम चरना सिर नावै, एती वात वनाय दे॥ तेरौ०॥ ३॥

(१०५)

राग–विहाग।

मनुवा वावला हो गया॥ मनुवा०॥ टेक॥ परवश

वसतु जगतकी सारीं, निज वश चाहैं लया ॥ मनुवा० ॥ १ ॥ जीरन चीर मिल्या है उदय वश, यौं मांगत क्यों नया ॥ मनुवा० ॥ २ ॥ जो कण वोया प्रथम भूमिमैं, सो कब औरैं भया ॥ मनुवा० ॥ ३ ॥ करत अकाज आनकों निज गिन, सुधपद त्याग दया ॥ मनुवा० ॥ ४ ॥ आप आप वोरत विषयी है, बुधजन ढीठ भया ॥ मनुवा० ॥ ५ ॥

(१०६)

भज जिन चतुर्विंशति नाम ॥ भजि० ॥ टेक ॥ जे भजें ते उतरि भवदधि, लयौं शिव सुखधाम ॥ भज० ॥ १ ॥ ऋषभ अजित संभव स्वामी, अभिनँदन अभिराम । सुमति पदम सुपास चंदा, पुष्पदंत प्रनाम ॥ भज० ॥ २ ॥ शीत श्रेयान् वासुपूजा, विमल नन्त सुठाम । धर्म सांति जु कुंथु अरहा, मल्लि राखैं माम ॥ भज० ॥ ३ ॥ मुनिसुवृत नमि नेमिनाथा, पार्स सन्मति स्वाम । राखि निश्चय-जपों बुधजन, पुरैं सबकी काम ॥ भज० ॥ ४ ॥

(१०७)

राग—मालकोस ।

अब तू जान रे चेतन जान, तेरी होवत है नित हान ॥ अब० ॥ टेक ॥ रथ वाजि करी असवारी, नाना विधि भोग तयारी । सुंदर तिय सेज सँवारी, तन रोग भयौं या ख्वारी ॥ अब० ॥ १ ॥ ऊंचे गढ़ महल बनाये, बहु तोप सुभट रखवाये । जहाँ रुपया मुहर धराये, सब

छांड़ि चले जम आये ॥ अब० ॥ २ ॥ भूखा है खाने लागै, धाया पट भूषण पागै । सत भये सहस लखि मांगै, या तिसना नाहीं भागै ॥ अब० ॥ ३ ॥ ये अथिर सौंज परिवारौ, थिर चेतन क्यौं न सम्हारौ । बुधजन ममता सब टारौ, सब आपा आप सुधारौ ॥ अब० ॥ ४ ॥

(१०८)

राग–कालिंगड़ो परज धीमो तेतालो ।

म्हे तौ थांका चरणां लागां, आन भावकी परणति त्यागां ॥ म्हे० ॥ टेक ॥ और देव सेया दुख पाया, थे पाया छौ अब वड़भागां ॥ म्हे० ॥ १ ॥ एक अरज म्हांकी सुण जगपति, मोह नींदसौं अबकै जागां । निज सुभाव थिरता बुधि दीजे, और कछू म्हे नाहीं मांगां ॥ म्हे० ॥ २ ॥

(१०९)

राग–कालिंगड़ो ।

आज मनरी बनी छै जिनराज ॥ आज० ॥ टेक ॥ थांको ही सुमरन थांको ही पूजन, थांको ही तत्त्वविचार ॥ आज० ॥ १ ॥ थांके बिछुरैं अति दुख पायौ, मोपै कह्यौ न जाय । अब सनमुख तुम नयनौं निरखे, धन्य मनुष परजाय ॥ आज० ॥ २ ॥ आज हि पातक नास्यौ मेरौ, ऊतरस्यौं भव पार । यह प्रतीत बुधजन उर आई, लेस्यौं शिवसुख सार ॥ आज० ॥ ३ ॥

(११०)

हो जी म्हे निशिदिन ध्यावां, ले ले बलहारियां ॥ हो जी०

॥ टेक ॥ लोकालोक निहारक स्वामी, दीठे नैन हमारियां ॥ हो जी० ॥ १ ॥ पट चालीसौं गुनके धारक, दोष अठारह टालियां । बुधजन शरनैं आयौ थांके, थे शरणागत पालियां ॥ हो जी० ॥ २ ॥

(१११)

राग—परज ।

म्हे तौ ऊभा राज थांनैं अरज करां छां, मानौं महाराज ॥ म्हे० ॥ टेक ॥ केवलज्ञानी त्रिभुवननामी, अँतरजामी सिरताज ॥ म्हे० ॥ १ ॥ मोह शत्रु खोटौ संग लाग्यौ, बहुत करै छै अकाज । यातैं वेगि बचावौ म्हानैं, थांनैं म्हाकी लाज ॥ म्हे० ॥ २ ॥ चोर चँडाल अनेक उवारे, गीध श्याल मृगराज । तौ बुधजन किंकरके हितमैं, ढील कहा जिनराज ॥ म्हे ० ॥ ३ ॥

(११२)

राग—कालिंगड़ो ।

कुमतीको कारज कूड़ौ, हो जी ॥ कुमती० ॥ टेक ॥ थांकी नारि सयानी सुमती, मतो कहै छै रूड़ौ जी ॥ कुमती० ॥ १ ॥ अनन्तानुबंधीकी जाई, क्रोध लोभ मद भाई । माया बहिन पिता मिथ्यामत, या कुल कुमती पाई जी ॥ कुमती० ॥ २ ॥ घरकौ ज्ञान धन वादि लुटावै, राग दोप उपजावै । तब निर्वल लखि पकरि करम रिपु, गति गति नाच नचावै ॥ कुमती० ॥ ३ ॥ या परिकरसौं ममत निवारौ, बुधजन सीख सम्हारौ । धरमसुता सुमती सँग राचौ, मुक्ति महलमैं पधारौ ॥ कुमती० ॥ ४ ॥

(११३)

राग-कालिंगड़ो ।

अजी हो जीवा जी थांनैं श्रीगुरु कहै छै, सीख मानौं जी ॥ अजी० ॥ टेक ॥ विन मतलवकी थे मति मानौं, मतलवकी उर आनौं जी ॥ अजी० ॥ १ ॥ राग दोषकी परनति त्यागौ, निज सुभाव थिर ठानौं जी । अलख अभेद रु नित्य निरंजन, थे बुधजन पहिचानौं जी ॥ अजी० ॥ २ ॥

(११४)

हूं कव देखूं वे मुनिराई हो ॥ हूं० ॥ टेक ॥ तिल तुप मान न परिग्रह जिनकैं, परमातम ल्यौं लाई हो ॥ हूं० ॥ १ ॥ निज स्वारथके सव ही वांधव, वे परमारथभाई हो । सव विधि लायक शिवमगदायक, तारन तरन सदाई हो ॥ हूं० ॥ २ ॥

(११५)

आयौ जी प्रभु थांपै, करमांरौ पीड़्यौ आयौ ॥ आयौ० ॥ टेक ॥ जे देखे तेई करमनि वश, तुम ही करम नसायौ ॥ आयौ० ॥ १ ॥ सहज स्वभाव नीर शीतलको, अगनि कषाय तपायौ । सहे कुलाहल अनतकालमैं, नरक निगोद डुलायौ ॥ आयौ० ॥ २ ॥ तुम मुखचंद निहारत ही अव, सव आताप मिटायौ । बुधजन हरप भयौ उर ऐसैं, रतन चिन्तामनि पायौ ॥ आयौ० ॥ ३ ॥

(११६)

राग-परज ।

महाराज, थांनैं सारी लाज हमारी, छत्नत्रयधारी ॥

महाराज० ॥ टेक ॥ मैं तौ थारी अद्भुत रीती, नीहारी हितकारी ॥ महाराज० ॥ १ ॥ निंदक तौ दुख पावै सहजैं, वंदक ले सुख भारी। असी अपूरव वीतरागता, तुम छविमाहिं विचारी ॥ महाराज० ॥ २ ॥ राज त्यागिकै दीक्षा लीनी, परजनप्रीति निवारी। भये तीर्थंकर महिमाजुत अब, संग लिये रिधि सारी ॥ ३ ॥ मोह लोभ क्रोधादिक मारे, प्रगट दयाके धारी। बुधजन विनवै चरन कमलकौं, दीजे भक्ति तिहारी ॥ महाराज० ॥ ४ ॥

(११७)

मुनि वन आये वना ॥ मुनि० ॥ टेक ॥ शिव वनरी व्याहनकौं उमगे, मोहित भविक जना ॥ मुनि० ॥ १ ॥ रतनत्रय सिर सेहरा बांधैं, सजि संवर वसना। संग बराती द्वादश भावन, अरु दशधर्मपना ॥ मुनि० ॥ २ ॥ सुमति नारि मिलि मंगल गावत, अजपा (?) गीत घना। राग दोषकी अतिशबाजी, छूटत अगनि-कना ॥ मुनि० ॥ ३ ॥ दुविधि कर्मका दान बटत है, तोषित लोकमना। शुकल ध्यानकी अगनि जला करि, हौमैं कर्मधना ॥ मुनि० ॥ ४ ॥ शुभ वेल्यां शिव वनरि वरी मुनि, अदभुत हरष वना। निज मंदिरमैं निश्चल राजत, बुधजन त्याग घना ॥ मुनि० ॥ ५ ॥

(११८)

लखैं जी आज चंद जिनंद प्रभूकौं, मिथ्यातम मम भागौ ॥ लखैं० ॥ टेक ॥ अनादिकालकी तपति मिटी सब,

सूतौ जियरौ जागौ ॥ लखैं० ॥ १ ॥ निज संपति निजही-मैं पाई, तब निज अनुभव लागौ । बुधजन हरषत आनँद वरषत, अंमृत झरमैं पागौ ॥ लखैं० ॥ २ ॥

(११९)

थे म्हारे मन भायाजी चंद जिनंदा, बहुत दिनामैं पाया छौ जी ॥ थे० ॥ टेक ॥ सब आताप गया ततखिन ही, उपज्या हरष अमंदा ॥ थे० ॥ १ ॥ जे मिलिया तिन ही दुख भरिया, भई हमारी निंदा । तुम निरखत ही भरम गुमाया, पाया सुखका कंदा ॥ थे० ॥ २ ॥ गुन अनन्त मुखतैं किम गाऊं, हारे फनिंद मुनिंदा । भक्ति तिहारी अति हितकारी, जाँचत बुधजन वंदा ॥ थे० ॥ ३ ॥

(१२०)

मैं ऐसा देहरा बनाऊं, ताकै तीन रतन मुक्ता लगाऊं ॥ मैं० ॥ टेक ॥ निज प्रदेसकी भीत रचाऊं, समता कली धुलाऊं। चिदानंदकी मूरति थापूं, लखि लखि आनँद पाऊं ॥ मैं० ॥ १ ॥ कर्म किजोड़ा तुरत बुहारूं, चादर दया बिछाऊं । क्षमा द्रव्यसौं पूजा करिकै, अजपा गान गवा-ऊं ॥ मैं० ॥ ॥ २ ॥ अनहद बाजे बजे अनौखे, और कछू नहिं चाऊं । बुधजन यामैं वसौ निरंतर, याही वर मैं पाऊं ॥ मैं० ॥ ३ ॥

(१२१)

राग—गजल रेखता कालिंगड़ो ।

नरदेहीको धरी तौ कछू धर्म भी करो । विषयोंके संग राचि क्यों, नाहक नरक परो ॥ नर० ॥ टेक ॥ चौरासि

लाख जोंनि तैंने, केई वार धरी । तू निजसुभाव पागिकै, पर त्याग ना करी ॥ नर० ॥ १ ॥ तू आन देव पूजता है, होय लोभमें । तू जान पूछ क्यों परै, हैवान कूपमें ॥ नर० ॥ २ ॥ है धनि नसीव तेरा जन्म, जैनकुल भया । अव तो मिथ्यात छोड़ दे, कृतकृत्य हो गया ॥ नर० ॥ ३ ॥ पूरवजनममें जो करम, तूने कमाया है । ताके उदैको पायकै, सुख दुःख आया है ॥ नर० ॥ ४ ॥ भला वुरा मानें मती, तू फेरि फँसेगा । वुधजनकी सीख मान, तेरा काज सधैगा ॥ नर० ॥ ५ ॥

(१२२)

ऋषभ तुमसे स्वाल[1] मेरा, तुही है नाथ जगकेरा ॥ ऋषभ० ॥ टेक ॥ सुना इंसाफ है तेरा, विगरमतलव हितू मेरा ॥ ऋषभ० ॥ १ ॥ हुई अर होयगी अव है, लखौ तुम ज्ञानमें सव है । इसीसे आपसे कहना, औरसे गरज क्या लहना ॥ ऋषभ० ॥ २ ॥ न मानी सीख सतगुरकी, न जानी वाट निज घरकी । हुआ मद मोहमें माता, घने विषयनके रँग राता ॥ ऋषभ० ॥ ३ ॥ गिना परद्रव्यको मेरा, तवै वसु कर्मने घेरा । हरा गुन ज्ञान धन मेरा, करा विधि जीवको चेरा ॥ ऋषभ० ॥ ४ ॥ नचावै स्वांग रचि मोकों, कहूं क्या खवर सव तोकों । सहज भई वात अति वाँकी, अधमको आपकी झाँकी ॥ ऋषभ० ॥ ५ ॥ कहूं क्या तुम सिफत[2] सांई, वनत नहिं इन्द्रसों गाई ।

---

१ सवाल—याचनाका प्रश्न । २ प्रशंसा ।

तिरे भविजीव भव-सरतैं, तुम्हारा नाव उर धरतैं ॥ ऋषभ० ॥ ६ ॥ मेरा मतलब अवर नाहीं, मेरा तो भाव मुझ-माहीं। वाहि पर दीजिये थिरता, अरज बुधजन यही करता ॥ ऋषभ० ॥ ७ ॥

(१२३)

दुनियांका ये हवाल क्यों पहिचानता नहीं। दिन आ-फताब[1] ऊगा, सो रैनको नहीं ॥ दुनि० ॥ टेक ॥ तनसेंति तेरी एकता, क्यों मानता नहीं। होता है जाना स्यात स्यात, जानता नहीं ॥ दुनि० ॥ १ ॥ नित भूख प्यास शीत घाम, देह व्यापतैं। तू क्यों तमाशबीन[2] दुखी, मान आपतैं ॥ दुनि० ॥ २ ॥ दिलचंदगी[3] दिलगीरी[4] है निज, पुन्य पापतैं। (फिर) करमजाल फँसता क्यों, करि विलाप तैं ॥ दुनि० ॥ ३ ॥ मतलबके गरजी ये सब, कुटुंब घरभरा। मतबाय चढ़ी तेरे, किन सीर ना करा ॥ दुनि० ॥ ४ ॥ इनकी खुशामदीसे, तू केई बार मरा। इतना सयान लीजे, इन बीच क्यों परा ॥ दुनि० ॥ ५ ॥ आई है बुलबुल शामको[5], सब ओर ओरतैं। करि रैनका बसेरा, बिछुरेंगी भोरतैं ॥ दुनि० ॥ ६ ॥ इनपै न नेकु रीझो, खीजो न जोरतैं। भोगोगे विपति भौ भौ, मिथ्यात दौर-तैं ॥ दुनि० ॥ ७ ॥ बाजीगरोंका ख्याल जैसा, लोकस-म्पदा। इसके दिमाकसेती[6], दोजकमें झंपदा ॥ दुनि० ॥

---

१ सूर्य। २ तमाशा देखनेवाला। ३ खुशी। ४ रंज। ५ संध्याको। ६ घमंडसे।

८ ॥ जल्दी परेज[1] कीजे, परके मिलापका । दिलमस्त रहो बुधजन, लखि हाल आपका ॥ दुनि० ॥ ९ ॥

(१२४)

इस वक्त जो भविकजन, नहिं सावधान होगा । इस गाफिलीसे तेरा, खाना खराव होगा ॥ इस० ॥ टेक ॥ मिथ्यातका अँधेरा, गम नाहिं मेरा तेरा । दिन दोयका बसेरा, चलना सिताव होगा ॥ इस० ॥ १ ॥ जेवर जहानमाईं, दामिनि ज्यों दे दिखाई । इसपै गरूरताई, जिससे जवाल[3] होगा ॥ इस० ॥ २ ॥ ज्वानीमें हुवा जालिम[4], सब देखते हि आलम[5] । रमता विरानी वालम[6], यातैं वेहाल होगा ॥ इस० ॥ ३ ॥ झूठे मजेकेमाईं[7], सव जिंदगी गमाई । अजहूँ सँतोष नाहीं, मरना जरूर होगा ॥ इस० ॥ ४ ॥ जीवोंपै मिहर दीजे, जोरू[8]-परेज कीजे । जरका[9] न लोभ लीजे, बुधजन सवाव[10] होगा ॥ इस० ॥ ५ ॥

(१२५)

कोई भोगको न चाहो, यह भोग वद[11] वला है ॥ कोई० ॥ टेक ॥ मिलना सहज नहीं है, रहनेकी गम नहीं है, [12]सेनें-सेती सुनी है, रावनसा खाक मिला है ॥ कोई० ॥१॥ वानीतैं हिरन हरिया, रसनातैं मीन मरिया, करनी[13] करी[14] पकरिया[15], पावक पतँग जला है ॥ कोई० ॥ १ ॥ अलि नासिकाके काजै, वसिया है कौल[16]-मांजै, जव होय

१ परहेज—त्याग । २ जल्दी । ३ खराबी । ४ जुल्मकरनेवाला—अन्यायी । ५ मनुष्य । ६ स्त्री । ७ मजेमें । ८ स्त्री—त्याग । ९ धनका । १० पुण्य । ११ बुरी वला है । १२ सेवन करनेसे । १३ हथिनी । १४ हाथी । १५ पकड़ा गया । १६ कमलमें ।

गई सांजै, ततखिन पिरान दला है ॥ कोई० ॥ २ ॥ विषयोंसे रागताई, ले जात नर्कमाईं, कोई नहीं सहाई, काटैं तहां गला है ॥ कोई० ॥ ३ ॥ बुधजनकी सीख लीजे, आतुरता त्याग दीजे, जलदी संतोष कीजे, इसमें तेरा भला है ॥ कोई० ॥ ४ ॥

(१२६)

चन्दजिन विलोकवेतैं, फंद गलि गया। धंद सब जगतके विफल, आज लखि लिया ॥ चंद० ॥ टेक ॥ शुद्ध चिदानंद–खंध, पुद्गलके माहिं। पहिचान्या हममें हम, संशय भ्रम नाहिं ॥ चंद० ॥ टेक ॥ सो न ईस सो न दास, सो नहीं है रंक। ऊंच नीच गोत नाहिं, नित्य है निशंक ॥ चंद० ॥ १ ॥ गंध वर्न फरस स्वाद, वीस गुन नहीं। एक आतमा अखंड, ज्ञान है सही ॥ चंद० ॥ २ ॥ परकौं जानि ठानि परकी, बानि पर भया, परकी साथ दुनियांमैं, खेदकौं लया ॥ चंद० ॥३॥ काम क्रोध कपट मान, लोभकौं करा। नारकी नर देव पशू होयके फिरा ॥ चंद० ॥ ४ ॥ ऐसे वखतके बीच ईस, दरस तुम दिया। मिहरवान होय दास आपका किया ॥ चंद० ॥५॥ जौलौं कर्म काटि मोख धाम ना गया। तौलौं बुधजनकौं शर्न राख करि मया ॥ चंद० ॥६॥

(१२७)

मद मोहकी शराब पी खराब हो रहा। बकता है बेहिसाब ना किताबका कहा ॥ मद० ॥ टेक ॥ देता नहीं

---

१ प्राण।

जवाव तुझे क्या गरूर है। ये वक्त चला जाता, इसकी जरूर है ॥ मद० ॥ १ ॥ जेर जिंदगी जवानी, जाहिर जहानमें। सव सपनेकी दौलत, रहती न ध्यानमें ॥ मर० ॥ २ ॥ झूठे मजेकेमाहीं, सव सम्पदा दई। तेरे ओकूप (?) सेती, तू आपदा लई ॥ मद० ॥ ३ ॥ साहिव है सभीका ये, इसक क्या लिया। करता है ख्याल सवपैं, वेशर्म हो गया ॥ मद० ॥ ४ ॥ निज हालका कमाल है, सम्हाल तो करो। सव साहिवी हैं इसमें, वुधजन निगह धरो ॥ मद० ॥ ५ ॥

(१२८)

राग–मल्हार।

हो राज म्हें तौ वारी जी, थांनैं देखि ऋषभ जिन जी, अरज करूं चित लाय ॥ हो० ॥ टेक ॥ परिग्रहरहित सहित रिधि नाना, समोसरन समुदाय। दुष्ट कर्म किम जीतियौ जी, धर्म क्षमा उर ध्याय ॥ हो० ॥ १ ॥ निंदनीक दुख भोगवैं, वंदक सव सुख पाय। या अदभुत वैरागता जी, मोतैं वरनी न जाय ॥ हो० ॥२॥ आन देवकी मानतैं, पाई वहु परजाय। अव वुधजन शरनौ गह्यौ जी, आवागमन मिटाय ॥ हो० ॥ ३ ॥

(१२९)

राग–मल्हार।

देखे मुनिराज आज जीवनमूल वे ॥ देखे० टेक ॥ सीस लगावत सुरपति जिनकी, चरन कमलकी धूल वे ॥ दे० ॥१॥

---

१ घमंड। २ धन।

सूखी सरिता नीर वहत है, वैर तज्यौ मृग सूर वे। चालत मंद सुगंध पवन वन, फूल रहे सब फूल वे ॥ देखे० ॥२॥ तनकी तनक खबर नहिं तिनकौं, जर जावौ जैसैं तूल वे। रंक रावतैं रंच न ममता, मानत कनककौं धूल वे ॥ देखे० ॥ ३ ॥ भेद करत हैं चेतन जड़कौ, मैंटत हैं भवि-भूल वे। उपगारक लखि बुधजन उरमैं, धारत हुकम कबूल वे ॥ देखे० ॥ ४ ॥

(१३०)

राग—मलहार।

जगतपति तुम हौ श्रीजिनराई॥ जगत० ॥ टेक ॥ और सकल परिग्रहके धारक, तुम त्यागी हौ सांई ॥ जगत० ॥ १ ॥ गर्भमास पँदरै लौं धनपति, रत्नवृष्टि वरसाई। जनम समय गिरिराज शिखरपर, न्हौंन कर्यौ सुरराई ॥ जगत० ॥ २ ॥ सदन त्यागि वनमैं कच लौंचत, इंद्रन पूजा रचाई। सुकलध्यानतैं केवल उपज्यौ, लोकालोक दिखाई ॥ जगत० ॥ ३ ॥ सर्व कर्म हरि प्रगटी शुद्धता, नित्य निरंजनताई। मनवचतन बुधजन वंदत है, द्यो समता सुखदाई ॥ जगत० ॥ ४ ॥

(१३१)

अहो! अब विलम न कीजे हो। भवि कारज कर लीजे हो ॥ अहो० ॥ टेक ॥ चौरासी लख जौंनिवीचमैं, नर-भव कब लीजे ॥ अहो० ॥ १ ॥ श्रवन अंजुली धारि जिनेश्वर,—वचनामृत पीजे। निज स्वभावमैं राचि पराई, परनति तजि दीजे ॥ अहो० ॥ २ ॥ तनक विषयहित

काल अनन्ता, भव भव क्यौं छीजे । बुधजन जिनपद सेय सयानें, अजर अमर जीजे ॥ ३ ॥

(१३२)

राग-गौड़ मल्हार ।

सुरनरमुनिजनमोहनकौं मोहि, दर्शन देखन दै री ॥ भव भरमनतैं दुखी फिरत हूं, अव जिन चरनन रहनै दै ॥ सुर० ॥ १ ॥ सूर स्याल कपि सिंह न्यौलकी, विपति हरी इन सरनौं दै । वलिहारी बुधजन या दिनकी, बड़े भाग पद परसन दै ॥ सुर० ॥ २ ॥

(१३३)

राग-रेखता ।

अरज जिनराज यह मेरी, इसा औसर बतावोगे ॥ अरज० ॥ टेक ॥ हरो इन दुष्ट करमनको, मुकतिका पद दिलावोगे ॥ अरज० ॥ १ ॥ करूं जव भेष मुनिवरका, अवर विकलप विसारूंगा । रहूंगा आप आपेमें, परिग्रहको विड़ारूंगा ॥ अरज० ॥२॥ फिर्‌या संसार सारेमें, दुखी मैं सव लख्या दुखिया । सुनत जिनवानि गुरुमुखिया, लख्या चेतन परम सुखिया ॥ अरज० ॥ ३ ॥ पराया आपना जाना, वनाया काज मन माना । गहाया कुगति तैखाना, लहाया विपति विललाना ॥ अरज० ॥ ४ ॥ जगतमें जनम अर मरना, डरा मैं आ लिया शरना । मिहर बुधजनपै या करना, हरो परतैं ममत धरना ॥ अरज० ॥ ५ ॥

(१३४)

परमजननी धरमकथनी, भवार्णवपारकौं तरनी ॥ परम० ॥ टेक ॥ अनच्छरि घोष आँपतकी, अच्छरजुत गनधरौं वरनी ॥ परम० ॥ १ ॥ ²निखेपौ-नयनुजोगनितैं, भविनकौं तत्त्व अनुसरनी । वि³थरनी शुद्ध दरसनकी, मिथ्यातम मोहकी हरनी ॥ परम० ॥ २ ॥ मुकति मंदिरके चढ़नैकौं, सुगमसी सरल नी⁴सरनी । अँधेरे कूपमैं परतां, जगतउद्धारकी करनी ॥ परम० ॥ ३ ॥ तृपाके ताप मेटनकौं, करत अम्रत वचन झरनी । ⁵कथंचित्वाद आदरनी, अवर एकान्त परिहरनी ॥ परम० ॥ ४ ॥ तेरा अनुभौ करत मोकौं, बनत आनंद उर भरनी । फिरूयौ संसार दुखिया हूं, गही अब आनि तुम सरनी ॥५॥ अरज बुधजनकी सुन जननी, हरौ मेरी जनम मरनी । नमूं कर जोरि मन वचतैं, लगाकै सीसकौं धरनी ॥ परम० ॥ ६ ॥

(१३५)

राग—विलावल ।

मेरे आनँद करनकौं, तुम ही प्रभु पूरा ॥ मेरे० ॥ टेक॥ और सबै जगमैं लखे, दूषनजुत कूरा ॥ मेरे० ॥ १ ॥ मोह शत्रुके हरनकौं, तुम ही हौ सूरा । मोकौं मोह दवात है, कर याकौं दूरा ॥ मेरे० ॥ २ ॥ केवलज्ञान छिपात है, ताकौं करि चूरा । ज्यौं प्रगटैं मोमाहिंके, नाना गुन भूरा ॥ मेरे० ॥ ३ ॥ बुधजन विनती करत है, जिन

---

१ आप्त-सच्चे देवकी । २ निक्षेप नयके अनुयोगसे । ३ विस्तारनी । ४ नसैनी । ५ स्याद्वाद ।

चरन हजूरा। मेरौ संकट मैंटिये, वाजै ज्यौं तूरा ॥ मेरे० ॥ ४ ॥

(१३६)

राग—परज मारू।

जिनवानी प्यारी लागै छै महाराज। सव दुखहारी अति सुखकारी ॥ जिनवानी० ॥ टेक ॥ अनँत जनमके कर्म मिटत हैं, सुनत हि तनक अवाज ॥ जिनवानी० ॥१॥ षट द्रव्यनकौं कथन करत है, गुन परजाय समाज। हेयाहेय वतावत सिगरे, कहत है काज अकाज ॥ जिनवानी० ॥ २ ॥ नय निखेप परमाण वचनतैं, परमत हरत मिजाज। वुधजन मन-वांछा सव पूरै, अंमृत स्याद अवाज ॥ जिनवानी० ॥ ३ ॥

(१३७)

आयो प्रभु तोरे दरवार, सव मो कारज सरिया ॥ आयो० ॥ टेक ॥ निरखत ही तुम चरनन ओर, मोह तिमिर मो हरिया ॥ आयो० ॥ १ ॥ मैं पाई मेरी निधि सार, अवलौं रह्या विसरिया। अव हूवा उर हरप अ-पार, कृत्य कृत्य तुम करिया ॥ आयो० ॥ २ ॥ जड़ चेतन नहिं मान्या भेद, राग दोप जव धरिया। तव हूवा ये निपट कुज्ञान, करम वंधमैं परिया ॥ आयो० ॥३॥ इष्ट अनिष्ट सँजोगन पाय, दुष्ट दवानल जरिया। तुम पाये वड़भागनि जोग, निरखत हिय गया हरिया ॥ आयो० ॥ ४ ॥ धारत ही तुम वानी कान, भरम भाव सव ग-

रिया । वुधजनके उर भई प्रतीत, अब भवसागर त-
रिया ॥ आयो० ॥ ४ ॥

(१३८)

ऐसे प्रभुके गुनन कोउ कैसैं कहै ॥ ऐसे० ॥ टेक ॥
दरस ज्ञान सुख वीर्ज अनन्ता, और अनँत गुन जामैं रहै
॥ ऐसे० ॥ १ ॥ तीन काल परजाय द्रव्य गुन, एक समय
जाकौ ज्ञान गहै ॥ ऐसे० ॥ २ ॥ जो निज शक्ति गुपत छी
अनादी, सो सब प्रगट अब लहलहै ॥ ऐसे० ॥ ३ ॥ नंता-
नंत काललौं जाकौ, सांत सुथिर उपयोग वहै ॥ ऐसे०॥४॥
मन वच तनतैं बंदत वुधजन, ऐसे गुननकौं आप चहै
॥ ऐसे० ॥ ५ ॥

(१३९)

राग—ठुमरी ।

अब हम निश्चय जान्या हो जिन तुम सरन सहाई ।
जनम मरनका डर है जगमैं, रोग सोग दुखदाई ॥ अब०
॥ टेक ॥ तुमकौं सेवत समता आई, विपता तुरत भगाई
॥ अब० ॥ १ ॥ अनँत कालमैं जीव अनन्ते, तुमतैं शिव-
गति पाई । अवहूं भविजन तुमतैं तिरहैं, ये आगममैं गाई
॥ अब० ॥ २ ॥ शत्रु मित्र तेरे कोऊ नहिं, सुख साता यौं
आई । अपना भला चहत जे वुधजन, तोकौं सेवैं भाई
॥ अब० ॥ ३ ॥

(१४०)

सुन करि वानी जिनवरकी म्हारै, हरष हियैं न समाय
जी ॥ सुन० ॥ टेक ॥ अनादि कालकी तपन बुझाई, निज

निधि मिली अघाय जी ॥ सुन० ॥ १ ॥ संशय भर्म विपर्जय नास्या, सम्यक बुधि उपजाय जी ॥ सुन० ॥ २ ॥ अब निरभयपद पाया उरमैं, वंदौं मन वच काय जी ॥ सुन० ॥ ३ ॥ नरभव सुफल भया सब मेरा, बुधजन भेंटत पाँय जी ॥ सुन० ॥ ३ ॥

(१४१)

राग—अल्हैया विलावल।

गाफिल हूवा क्या तू डोलै, दिन जाता है भरतीमैं ॥ गाफिल० ॥ टेक ॥ चौकस करौं रहत है नाहीं, ज्यौं अँजुली जल झरतीमैं। ऐसैं तेरी आयु घटत है, बचै न विरियां मरतीमैं ॥ गाफिल० ॥ १ ॥ कंठ दबै तब नाहिं बनैगा, काज बना लै सरतीमैं। फिर पछताये कछू न होगा, कूप खुदैं नहिं बरतीमैं ॥ गाफिल० ॥ २ ॥ मानुप भव तेरा श्रावक कुल, कठिन मिल्या है धरतीमैं। बुधजन भवदधि उतरौ चढ़िकैं, समकित नवका तिरतीमैं ॥ गाफिल० ॥३॥

(१४२)

सुमरौ क्यौं ना चन्द जिनेसुर, ज्यौं भवभवकी विपति हरौ ॥ सुमरौ० ॥ टेक ॥ सुरपति नरपति पूजत जिनकौं, सनमुख फनपति नमत खरौ ॥ सुमरौ० ॥ १ ॥ तन धन परिजन—मांझ लुभाकर, क्यौं करमनके फंद परौ ॥ सुमरौ० ॥ २ ॥ मिथ्या तिमिर अनादि रोग दृग, दरसन करिकैं परौ करौ ॥ सुमरौ० ॥ ३ ॥ विषय भोगमैं राचि रहे क्यौं, यातैं गति गति विपति भरौ ॥ सुमरौ० ॥ ४ ॥ बुधजन

आतम ध्यान नाव चढ़ि, भवसागरकौं वेगि तिरौ ॥
सुमरौ० ॥ ५ ॥

(१४३)

राग-लूहरि सारंग।

प्रभु जी चन्द जिनंदा म्हें तौ थांका चरनन वंदा ॥ प्रभु जी० ॥ टेक ॥ अनादिकालके देत करम दुख, डारि वंदके फंदा ॥ म्हें तौ० ॥ १ ॥ क्रोध लोभ मद मान हियामैं, कर राख्या है गंदा। ज्ञान ध्यान धन खोसि हमारौ, कर दीना है जिंदा (?) ॥ म्हें तौ० ॥ २ ॥ वारंवार वीनवै वुधजन, करौ करमकौं मंदा। तुम गुन गाऊं और न ध्याऊं, पाऊं शिव सुखकंदा ॥ म्हें तौ० ॥ ३ ॥

(१४४)

चन्द जिन नाथ हमारा, भविनकौं पार उतारा जी। ॥ चंद० ॥ टेक ॥ तीन काल परजाय द्रव्य गुन, एक समयमैं जानत सारा ॥ चंद० ॥१॥ इंद नरिंद मुनिंद फनिंदा, सेवत मिलि मिलि सारा। जाकी दुति सम कोटि चंद नहिं, करि लीना निरधारा ॥ चंद० ॥ २ ॥ ऐसा और कोइ नहिं मिलिया, हेरा सब संसारा। वुधजन वंदत पाप निकंदत, तारन तरन निहारा ॥ चंद० ॥ ३ ॥

(१४५)

राग-भैरौं।

उठौ रे सुज्ञानी जीव, जिनगुन गावौ रे ॥ उठौ० ॥ टेक ॥ निसि तौ नसाय गई, भानुकौ उद्योत भयौ, ध्यानकौं लगावौ प्यारे, नीदकौं भगावौ रे ॥ उठौ० ॥ १ ॥

भव वन चौरासी बीच, भ्रमतौ फिरत नीच, मोह जाल फंद पर्यौ, जन्म मृत्यु पावौं रे ॥ उठौ० ॥ २ ॥ आरज पृथ्वीमें आय, उत्तम जनम पाय, श्रावक कुलको लहाय, मुक्ति क्यौं न जावौ रे ॥ उठौ० ॥ ३ ॥ विषयनि राचि राचि, बहु विध पाप सांचि, नरकनि जायके, अनेक दुःख पावौ रे ॥ उठौ० ॥ ४ ॥ परकौ मिलाप त्यागि, आतमके जाप लागि, सुबुधि बतावै गुरु, ज्ञान क्यौं न लावौ रे ॥ उठौ० ॥ ५ ॥

(१४६)

राग-भैरवी ।

यौं करौ उपगार मोपै ॥ यौं० ॥ टेक ॥ अनँतकालके करम देत दुख, यें नहिं मिटत मिटाये मोपै ॥ यौं० ॥१॥ ज्यावत मारत जा जा गतिमें, ता ता गतिमें फेरी रोपैं । इन करमनको नाश कियौ तुम, यातैं करत निहोरे तोपैं ॥ यौं० ॥ २ ॥ दीनदयाल कृपा हि करोगे, मोमें हैं अपराध हि जोपै । हरौ कर्ममल बुधजनकौ सब, ज्यौं जगमगती जोती ओपै ॥ यौं० ॥ ३ ॥

(१४७)

राग-झिंझौटी ।

निरखि छवी परमेसुरकी कांई, नमिकरि दोष गमा दे जीव ॥ निरखि० ॥ टेक ॥ भ्रमत भ्रमत गति गतिके माहीं, वड़े भाग भए लादे जीव ॥ निरखि० ॥ १ ॥ आन जँजाल त्यागि मन मेरा, इनके चरन लगा दे जीव ॥ निरखि० ॥ २ ॥ जन्म मरनकी विपति मिटैगी, तोकौं

मोखि मिला दे जीव ॥ निरखि० ॥ ३ ॥ वुधजन सहजैं सुरगति देहै, वहुरि अनँत सुख द्यावैं जीव ॥ निरखि० ॥ ४ ॥

(१४८)

तुम विन जगमैं कौन हमारा ॥ तुम० ॥ टेक ॥ जौलौं स्वारथ तौलौं मेरे, विन स्वारथ नहिं देत सहारा। और न कोई है या जगमैं, तुम ही हौ सवके उपगारा ॥ तुम० ॥ २ ॥ इंद नरिंद फनिंद मिलि सेवत, लखि भवसागर-तारनहारा ॥ तुम० ॥ ३ ॥ भेद विज्ञान होत निज परका, संशय भरम करत निरवारा ॥ तुम० ॥ ४ ॥ अनेक जन्मके पातक नासे, वुधजनके उर हरप अपारा ॥ तुम० ॥ ५ ॥

(१४९)

निसि दिन लख्या कर रे; तन मन वचन थिर रे। ये ज्ञानमइ जिनराजकौं, ज्यौं ह्वै सुफल मन रे ॥ निसि० ॥ टेक ॥ ये भवि तेरा धन रे, तोकौं मिले जिन रे। कर पूज चरननकी सदा, सँचि पुन्यका धन रे ॥ निसि० ॥ १ ॥ सुनिकै वचन जिन रे; सरधान धरि उर रे। करि जन्म तेरेका भला, या भली है छिन रे ॥ निसि० ॥ २ ॥ वुधजन कहै सुन रे, सव पापकौं हन रे। अव मिल्या औसर है भला, करि जाप जिन जिन रे ॥ निसि० ॥ ३ ॥

(१५०)

मनुवो लागि रह्यौ जी, मुनिपूजा विन रह्यौ न जाय

॥ मनुवो० ॥ टेक ॥ कोटि बात पिय क्यौं कहौ, हूं मानूं नहिं एक। बोधमती गुरु ना नमूं, याही म्हांरै टेक ॥मनुवो० ॥ १ ॥ जन्म मृत्यु सुख दुख विपति, वैरी मीत समान। राग दोष परिग्रहरहित, वे गुरु मेरे जान ॥ मनुवो० ॥२॥ सुर शिवदायक जैन गुरु, जिनकैं दया प्रधान। हिंसक भोगी पातकी, कुगतिदाइ गुरु आन ॥ मनुवो० ॥ ३ ॥ खोटी कीनी पीव तुम, मुनिके गल अहि डारि। थे तो नरकां जायस्यो, वे नहिं काढ़ैं डारि ॥ मनुवो० ॥ ४ ॥ श्रेणिक सँगतैं चेलणा, खायक समकित धार। आप सातमाँ नरक हरि, पहुँचे प्रथममँझार ॥ मनुवो० ॥ ५ ॥ तीर्थंकर पद धारसी, आवत कालमँझार। वुधजन पद वंदन करैं, मेरी विपता टार ॥ मनुवो० ॥ ६ ॥

(१५१)

राग—सोरठ।

राग दोष हंकार त्यागकरि शुद्ध भया जी थे तौ ॥ राग० ॥ टेक ॥ तारन तरन सुविरद रावरो, मेरी ओर निहार ॥ राग० ॥ १ ॥ द्रव गुन परजय तीनकालका, लखि लीना विस्तार। धुनि सुनि मुनिवर गनधर कीनैं, आगम भवि-हितकार ॥ राग० ॥ २ ॥ जा मति करिकै जा विधि करिकैं, उतर गये हो पार। सो ही वुधजनकौं वुधि दीजे, कीजे, यौं उपगार ॥ राग० ॥ ३ ॥

(१५२)

अदभुत हरष भयौ यौं मनमैं, जिन साहिव दीठे नैन-नमैं ॥ अदभुत० ॥ टेक ॥ गुन अनन्त मति निपट अल्प

है, क्यौंकरि सो वरनौं वैननमैं ॥ अदभुत० ॥ १ ॥ भरम नस्यौ भास्यौ तत्त्वारथ, ज्यौं निकस्यौ रवि वादर-घनमैं ॥ अदभुत० ॥ २ ॥ ऋद्धि अनादी भूली पाई, वुधजन राजै अति चैननमैं ॥ अदभुत० ॥ ३ ॥

(१५३)

राग—जंगलो ।

ओर तो निहारौ दुखिया अति घणौ हो सांइयां ॥ ओर० ॥ टेक ॥ गति च्यारन धारिवो सांइयां, जनम मरनकौ कष्ट अपार; म्हारा साइयां ॥ ओर० ॥ १ ॥ तारण विरद तिहारौ सांइयां, मोहि उतारोगे पार। बुधजन दास तिहारौ सांइयां, कीजे यौ उपगार; म्हारा सांइयां ॥ ओर ॥ २ ॥

(१५४)

तूही तूही याद आवै जगतमैं ॥ तूही० ॥ टेक ॥ तेरे पद पंकज सेवत हैं, इंद नारिंद फनिंद भगतमैं ॥ तूही० ॥ १ ॥ मेरा मन निशिदिन ही राच्या, तेरे गुन रस गान पगतमैं ॥ तूही० ॥ २ ॥ भव अनन्तका पातक नास्या, तुम जिनवर छवि दरस लगतमैं ॥ तूही० ॥ ३ ॥ मात तात परिकर सुत दारा, ये दुखदाई देख भगत मैं ॥ तूही० ॥ ४ ॥ बुधजनके उर आनँद आया, अव तौ हूं नहिं जाऊं कुगतिमैं ॥ तूही० ॥ ५ ॥

(१५५)

राग—दीपचंदी ।

म्हारा मनकै लग गई मोहकी गांठि, मैं तौ जिनआगमसौं खोलौं ॥ म्हारा० ॥ टेक ॥ अनादि कालकी घुलि

रही गाठी, ज्ञान छुरीसौं छोलौं ॥ म्हारा० ॥ १ ॥ अष्ट करम ज्ञानावरनादिक, मो आतम ढिग जौलौं । राग दोष विकल्प नहिं त्यागौं, तौलौं भव वन डोलौं ॥ म्हारा० ॥२॥ भेद विज्ञानकी दृष्टि भई तब, परपद नाहिं टटौलौं । विषय कषाय वचन हिंसाका, मुखतें कबहुँ न बोलौं ॥ म्हारा० ॥ ३ ॥ धन्य जथारथवचन जिनेसुर, महिमा वरनौं कौलौं । बुधजन जिनगुनकुसुम गूंथिकैं, विधिकरि कंठमें पोलौं ॥ म्हारा० ॥ ४ ॥

(१५६)

राग—खंमाच झंझौटी ।

पूजन जिन चालो री मिल साथनि ॥ पूजन० ॥ टेक ॥ आज देहाड़ो[1] है भलो, आवो जिन आंगनि ॥ पूजन० ॥ १ ॥ आठों द्रव्य चढ़ोड़िकें, कीये गुन भापनि । अपना कल्मख खोय हैं, करि हैं प्रतिपालनि ॥ पूजन० ॥ २ ॥ चित चंचलता मेटिकैं, लागो प्रभु पाँयनि । सब विधि मनवांछा मिलै, फिरि होहि न चायनि ॥ पूजन० ॥ ३ ॥

(१५७)

राग—रेखता ।

तिहारी याद होते ही, मुझे अम्रत बरसता है । जिगर[2] तपता मेरा भ्रमसों, तिसैं समता सरसता है ॥ तिहारी० ॥ १ ॥ दुनीके देव दाने सब, कदम तेरे परसता है । तिहारे दरस देखनको, हजारों चँद तरसता है ॥ तिहारी०

---

१ दिन । २ हृदय ।

॥ २ ॥ तुम्हींने खूब भविजनको, वताया भिसंत-रसता है। उसी रसते चले सायर, तुम्हारे वीच वसता है ॥ तिहारी० ॥ ३ ॥ विमुख तुमसों भये जितने, तिते दोजकमें धसता है। मुरीद तेरा सदा वुधजन, आपने हाल मसता है ॥ तिहारी० ॥ ४ ॥

(१५८)

राग-मलहार।

माई आज महामुनि डोलैं। मतिवंता गुनवंत काहुसौं, बात कछू नहिं खोलैं ॥ माई० ॥ टेक ॥ तू नहिं आई ये घर आये, चरन कमल जल धोलैं ॥ माई० ॥ १ ॥ विधि पड़गाहे असन कराये, निधि वँधि गई अतोलै ॥ माई० ॥ २ ॥ नगर जिमाया कोइ न रहाया, यौं अचरज कहौं कोलै ॥ माई० ॥ ३ ॥ धन्य मुनीसुर धनि ये दानी, वुधजन इम मुख बोलै ॥ माई० ॥ ४ ॥

(१५९)

राग-सोरठ।

हो चेतन जी ज्ञान करौलो जी ॥ हो० ॥ टेक ॥ थे अविनाशी नित्य निरंजन, नेकन डर न धरौला ॥ हो० ॥ १ ॥ देखन जान स्वभाव अनादी, ताहिन ना विसरौला। राग दोष अज्ञान धारतां, गति गति विपति भरौला ॥हो०॥ ॥ २ ॥ पूर्व कर्मका बंध हरौला, जो आपमैं धीर करौला।

१ वहिश्तका रास्ता-स्वर्गका मार्ग। २ नरकमें। ३ शिष्य। ४ वढ़ गई। ५ करोगे।

बुधजन आप जिहाज बैठिकैं, भवदधि-वारि तिरौला ॥ हो० ॥ ३ ॥

(१६०)

हूं तौ निशिदिन सेऊं थांका पाय, म्हारौ दुख भानौ ॥ हूं० ॥ टेक ॥ चौरासीमैं डोलतौ जी, नीठि पहुँच्यौ छौं आय ॥ म्हारौ० ॥ १ ॥ आन देवकौं सेवतां जी, जनम अकारथ जाय ॥ म्हारौ० ॥ २ ॥ मन वच तन वंदन करूं जी, दीजै कर्म मिटाय ॥ म्हारौ० ॥ ३ ॥ बुधजनकी या वीनती जी, सुनिज्यौ श्रीजिनराय ॥ म्हारौ० ॥ ४ ॥

(१६१)

राग-अडाणौं।

तुम चरननकी शरन, आय सुख पायौ ॥ तुम० ॥ टेक ॥ अवलौं चिर भव वनमैं डोल्यौ, जन्म जन्म दुख पायौ ॥ तुम० ॥ १ ॥ ऐसो सुख सुरपतिकै नाहीं, सौ मुख जात न गायौ। अव सव सम्पति मो उर आई, आज परमपद लायौ ॥ तुम० ॥ २ ॥ मन वच तनतैं दृढ़ करि राखौं, कवहुँ न ज्या विसरायौ। वारंवार वीनवै बुधजन, कीजै मनको भायौ ॥ तुम० ॥ ३ ॥

(१६२)

राग-टोंगी।

आज सुखदाई वधाई, जनमैं चन्दजिनाई ॥ आज० ॥ टेक ॥ महासेन घर चंदपुरीमैं, जाये लछमना माई ॥ आज० ॥ १ ॥ चतुरनिकाय देव देवी मिलि, नाचत गावत आई। अव भविजनके पातक टरि हैं, पथ चलि है

शिवदाई ॥ आज० ॥ २ ॥ वड़े भाग वुधजनके आये, सहजैं सब निधि पाई । सब पुरके घर घरमैं मंगल, वाजे वजत सवाई ॥ आज० ॥ ३ ॥

(१६३)

राग—अलहिया विलावल ।

कृपा तिहारी विन जिन सइयाँ, कैसैं उधरैगौ विषयसुख लइयां ॥ कृपा० ॥ टेक ॥ जो कछु भोजन हरत समय-छिन, तन यह विलखि वनै मुरझैंया ॥ कृपा० ॥ १ ॥ पह-लैं याकी वान सुधारौ, दिखलावौ तत्त्वार्थ गुसइयां । तव ये जानै उर सरधानै, तजै कुवुद्धि सुवुद्धि गहइयां ॥ कृपा० ॥ २ ॥ वहुत पातकी भवदधि तारे, पतितउधारक सांचे सइयां । वुधजन दास पर्यौ भवदधिमैं, वेगि तारिये गह-कर वहियां ॥ कृपा० ॥ ३ ॥

(१६४)

राग—अड़ाणूं ।

चेतन मो—मातौ भव वनमैं, गति गति भरमत डोलै ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ अनत ज्ञान दरसन सुख वीरज, ढांपि दिये रंग होलै ॥ चेतन० ॥ १ ॥ अलप भोगमैं मगन होय है, हित अनहित नहिं तोलै । मनमैं और करत तन ओरै, और हि मुखतैं वोलै ॥ चेतन० ॥ २ ॥ गुरु उपदे-श धार ले भाई, तजि विकलप झकझोलै । ह्वै वैरागी नि-ज लौं लागी, सो वुधजन शिवको लै ॥ चेतन० ॥ ३ ॥

(१६५)

राग—सोरठ ।

उमाहौ म्हानैं लागि गयौ छै, मुक्ति मिलनरो ॥ उमा-

हौं० ॥ टेक ॥ अब ही अपूरव आनँद आयौ, जिनदरसन-तैं लाहौं ॥ उमाहौं० ॥ १ ॥ तन कारागृह आशा वेड़ी, सुत तिय साथ उगाहौं। रोग सोग डर त्रास होत नित, सब छूटनकौं चाहौं ॥ उमाहौं० ॥ २ ॥ भव वन सघन कठिन अँधियारौं, जन्म मरनकौ दाहौं। श्रीगुरु शरन मिल्यौ बुधजनकौं, अब संशय रह्यौ काहौं ॥ उमाहौं०॥३॥

(१६६)

राग–विलावल ।

रे मन मूरख बावरे मति ढीलन लावै। जप रे श्रीअरहन्तकौं, यौ औसर जावै ॥ रे मन० ॥ टेक ॥ नर-भव पाना कठिन है, यौं सुरपति चाहै। को जानै गति कालकी, यौं अचानक आवै ॥ रे मन० ॥ १ ॥ छूट गये अब छूटते, जो छूट्या चावै। सब छूटैं या जालतैं, यौं आगम गावै ॥ रे मन० ॥ २ ॥ भोग रोगकौं करत हैं, इन-कौं मत लावै। ममता तजि समता गहौ, बुधजन सुख पावै ॥ रे मन० ॥ ३ ॥

(१६७)

राग–झंझौटी ।

नेमिजीके संग चली जाती, जाती री मैं ॥ नेमिजी० ॥ टेक ॥ वा छिन खबर भई नाहिं मोकौं, तातैं मैं पछताती; पछताती री मैं ॥ नेमिजी० ॥ १ ॥ यौ जंजाल कुटुंब परि-जन सब, कोइ न मेरे साती; साती री मैं ॥ नेमिजी० ॥२॥ या घर भीतर छिन हू वसिवौ, दावानलसी ताती; ताती

री मैं ॥ नेमिजी० ॥ ३ ॥ एकाकी वनमैं जा वसिकै, ध्याऊंगी दिन राती; राती री मैं ॥ नेमिजी० ॥ ४ ॥ बुधजन गावै सो सुख पावै, या रजमतिकी वाती; वाती री मैं ॥ नेमिजी० ॥ ५ ॥

(१६८)

जिनगुन गाना मेरे मन माना ॥ जिन० ॥ टेक ॥ जिन ध्याया तिन शिवपुर पाया, सुख अनन्तका थाना ॥ जिन० ॥ १ ॥ भरम मिथ्या तिनका छिनमाहीं, निज परमातम आना ॥ जिन० ॥ २ ॥ आन ज्ञानतैं गति गति भटका, जनम मरन दुख पाना ॥ जिन० ॥ ३ ॥ अब बुधजन कहुँ नाहिंन भटकै, चरन शरन मिल जाना ॥ जिन० ॥ ४ ॥

(१६९)

राग—जंगलो ।

मुझे तुम शान्त छवी दरसाया, देखत आनँद आया ॥ मुझे० ॥ टेक ॥ अंदर वाहर परिग्रह नाहीं, नासा दृष्टि लगाया ॥ मुझे० ॥ १ ॥ मैं हेरा संसार समूचा, तोसा निरख न पाया ॥ मुझे० ॥ २ ॥ नाहर सूर विलाव ऊंदरा, इकठे मिलि बतराया ॥ मुझे० ॥ ३ ॥ तपत हमारी जीव अनादी, सीतल समता पाया ॥ मुझे० ॥ ४ ॥ इंद नरिंद फनिंद मुनिंद मिल, चरन कमल सिर नाया ॥ मुझे० ॥ ५ ॥ धन्य दिवस धनि भाग हमारे, बुधजन तुम गुन गाया ॥ मुझे० ॥ ६ ॥

(१७०)

राग-झंझोटी।

मानुष भव अव पाया रे, कर कारज तेरा ॥ मानुष० ॥ टेक ॥ श्रावकके कुल आया रे, पाया देह भलेरा। चलन सितावी होयगा रे, दिन दोय वसेरा ॥ मानुष० ॥ १ ॥ मेरा मेरा मति कहै रे, कह कौन है तेरा। कष्ट पड़ै जब देहपै रे, कोई आत न नेरा ॥ मानुष० ॥ २ ॥ इन्द्रीसुख मति राच रे, मिथ्यातअँधेरा। सात विसन दे त्याग रे, दुख नरक घनेरा ॥ मानुष० ॥ ३ ॥ उरमैं समता धार रे, नहिं साहव चेरा। आपाआप विचार रे, मिटिज्या गति-फेरा ॥ मानुष० ॥ ४ ॥ ये सुध भावन भावैं रे, वुधजन तिनकेरा। निस दिन पद वंदन करै रे, वे साहिव मेरा ॥ मानुष० ॥ ५ ॥

(१७१)

राग-जंगलौ।

वीतराग मुनिराजा मोकौं दरस वता जा, दरस वता जा धरम सुना जा ॥ वीतराग० ॥ टेक ॥ परिगृह रत न नगन छवि थांकी, तारनतरन जिहाजा ॥ वीतराग० ॥ १ ॥ जीवन मरन विपति अर संपति, दुख सुख किंकर राजा। सवमैं समता रमता निजमैं, करत आपनौ काजा ॥ वीत-राग० ॥ २ ॥ तन कारागृह भोग भुजँगसा, परिकर शत्रु समाजा। ऐसी जानि त्याग वन वसिकै, राखत धर्म इलाजा ॥ वीतराग० ॥ ३ ॥ कर्मविनासी मुनि वनवासी,

तीनलोक सिरताजा । आप सारिसा करि बुधजनकौं, तुमकौं मेरी लाजा ॥ वीतराग० ॥ ४ ॥

(१७२)

राग—सोरठ ।

क्यौं रे मन तिरपत है नहिं कोय ॥ क्यौं० ॥ टेक ॥ अनादि कालका विषयन राच्या, अपना सरवस खोय ॥ क्यौं० ॥ १ ॥ नेकु चाखकै फिर न बाहुड़ै, अधिका लपटै जोय । झंपापात लेत पतंग ज्यौं, जलि वलि भस्मी होय ॥ क्यौं० ॥ २ ॥ ज्यौं ज्यौं भोग मिलैं त्यौं तृष्णा, अधिकी अधिकी होय । जैसैं घृत डारेतैं पावक, अधिक जरत है सोय ॥ क्यौं० ॥ ३ ॥ नरकनमाहीं भव साग-र लौं, दुख भुगतैगो कोय । चाहि भोगकी त्यागौ बुधजन, अविचल शिवसुख होय ॥ क्यौं० ॥ ४ ॥

(१७३)

मूनैं थे तौ तारौ श्रीजिनराज, यौं ही थांकौ जस सुणि-जे छै ॥ मूनैं० ॥ टेक ॥ तारन तरन सुभाव रावरो, सब जग जनकै मुख भणिजे छै ॥ मूनैं० ॥ १ ॥ चोर चिंडाल भील वेश्याकौं, त्यार दये अबलौं कहिजे छै । अब औसर मेरा है प्रभु जी, यामैं ढील नहीं कीजे छै ॥ मूनैं० ॥ २ ॥ भव सागरमैं मोह मगर मछ, पकड़ रह्यौ म्हारौ चित छीजे छै । पार उतारौ अब बुधजनकौं, शरनागतकी सुधि लीजे छै ॥ मूनैं० ॥ ३ ॥

(१७४)

अजी मैं तौ हेख्या षटमतसार, दया सबमैं सिरै ॥ अजी०

॥ टेक ॥ दुष्ट जीव पर प्रान सतावैं, सो ही नरकनि मांय, जाय विपता भरै ॥ अजी० ॥ १ ॥ या विन जप तप सब ही झूठे, यौं भाषैं जिनराज, सुजन मनमैं धरै ॥ अजी० ॥ २ ॥ जो सुख दे सो तौ सुख पावै, दुख पावै जो जीव, परकौं दुःख करै ॥ अजी० ॥ ३ ॥ जो त्रस थावर रक्षा करि हैं, तिनके मन वच काय, पाँय बुधजन परै ॥अजी० ॥ ४ ॥

(१७५)

आनंद भयौ निरखत मुख जिनचंद ॥ आनंद०॥टेक॥ सब आताप गयौ तखिन ही, उपज्यौ हरष अमंद ॥ आनंद० ॥ १ ॥ भूल थकी रागादिक कीनैं, तब बांधे कर्मबंद[1] । इनकी कृपातैं अब मिटि जैं हैं, विपताके सब फंद ॥ आनंद० ॥ २ ॥ केवल स्वेत सुभग सुछतापर, वारौं कोटिक चंद । चरन कमल बुधजन उर भीतर, ध्यावै शिव सुखकंद ॥ आनंद० ॥ ३ ॥

(१७६)

राग—कालिंगड़ा ।

जो मोहि मुनिकौं मिलावै, ताकी बलिहारी ॥ जो० ॥ टेक ॥ मिथ्या व्याधि मिटत नहिं उन विन, वे निज अंमृत पावै[2] ॥ ताकी० ॥ १ ॥ इंद नरिंद फनिंद तीनौं मिलि, उन चरना सिर नावै । सब परिहारी परउपगारी, हित उपदेश सुनावै ॥ ताकी० ॥ २ ॥ तजि सब विकलप निज

---

१ कर्मबंध । २ पिलावें ।

पदमाहीं, निसिदिन ध्यान लगावै। जन्म सुफल वुधजन तब व्है है, जब छवि नैन लखावै ॥ ताकी० ॥ ३ ॥

(१७७)

भई आज बधाई, निरखत श्रीजिनराई ॥ भई० ॥टेक॥ गया अमंगल पाया मंगल, जन्म सुफल भया भाई ॥ भई० ॥ १ ॥ तीनलोककी सारी सम्पति, अर सारी ठकुराई। इनकी कृपा कटाछ होत ही, मेरी मुझमैं पाई ॥ भई० ॥ २ ॥ इन विन राचे भोग विसनमैं, तातैं विपदा लाई। अब भ्रम नास्या ज्ञान प्रकास्या, पिछली वुध विसराई ॥ भई० ॥ ३ ॥ सबहितकारी परउपगारी, गनधर वानि वताई। वुधजन अनुभव करके देखी, सांची सरधा आई ॥ भई० ॥ ४ ॥

(१७८)

भये आज अनंदा, जनमैं चंद्रजिनंदा ॥ भये० ॥टेक॥ चतुर-निकाय देव मिलि आये, इन्द्र भया है वंदा ॥ भये० ॥ १ ॥ महासेन घर मात लछमना, उपजाया सुख कंदा। जाके तनमैं बड़ी जोति अति, मलिन लगै है चंदा ॥ भये० ॥ २ ॥ अब भविजन मिलि सुख पावैंगे, कटिहैं कर्मके फंदा। याहीके उपदेश जगतमैं, होगा ज्ञान अमंदा ॥ भये० ॥ ३ ॥ धन्य घरी धनि भाग हमारा, दूर भया दुख दंदा। वुधजन वारवार इम भाषै, चिरजीवौ यह नंदा ॥ भये० ॥ ४ ॥

(१७९)

राग–ईमन कल्यान चौतालो ।

तू पहिचान रे मन, निज स्वरूप ज्ञायक अनूप परमभू-प गुनका निधान ॥ टेक ॥ सुरलोक नरलोक नागलोक, लोकालोक विलोक सुजान ॥ तू पहिचान० ॥ १ ॥ विधि-वश ह्वै भरमत अनादि जग, धारत जन्म मरन दुख जान॥सुधनय[1] सुध है शिवमैं विराजै, जैसौ बुधजन करत बखान ॥ तू पहिचान० ॥ २ ॥

(१८०)

राग–काफी, ताल–दीपचंदी ।

चेतन तोसौं आज होरी खेलौंगी रे ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ अनँत दिवस क्यौं अंनतहि[2] डोल्यौ, ताकौ बदला अब ल्यौंगी रे ॥ चेतन० ॥ १ ॥ जो तैं करी सो भंडुवा गवा-ऊं, संजमतैं कर बाँधौंगी रे । त्रास परीषह लगैगी तेरै, तब सुधताई आवैगी रे ॥ चेतन० ॥ २ ॥ जिन तोकौं दुख दे भरमायौ, ता दुरमतिकौं भगावौंगी रे । खोटे भेष धरे लंगर तैं, अब शुभ भेष बना द्यौंगी रे ॥ चेतन० ॥३॥ समकित दरस गुलाल लगाऊं, ज्ञान सुधारस छिरकौंगी रे। चारित चोवा चरचौं सब तन, दया मिठाई खवावौंगी रे चेतन० ॥४॥ बुधजन यौं तन सफल करौंगी, विधि-विपदा सब चूरौंगी रे । हिल मिल रहुँ बिछुरौं नाहिं कबहूं, मनकी आशा पूरौंगी रे ॥ चेतन० ॥ ५ ॥

---

१ शुद्ध निश्चयनयसे । २ अन्यस्थानोंमें ।

(१८१)

राग–कनड़ी ।

श्रीजिनवर दरवार खेलूंगी होरी ॥ श्री जिन० ॥ टेक ॥ पर विभावका भेष उतारूं, शुद्ध सरूप वनाय, खेलूंगी होरी ॥ श्रीजिन० ॥ १ ॥ कुमति नारिकौं संग न राखूं, सुमति नारि बुलवाय, खेलूंगी होरी ॥ श्रीजिन० ॥ २ ॥ मिथ्या भसमी दूर भगाऊं, समकित रंग चुवाय, खेलूंगी होरी ॥ श्रीजिन० ॥ ३ ॥ निज रस छाक छक्यौ वुधजन अब, आनँद हरष वढ़ाय, खेलूंगी होरी ॥ श्रीजिन० ॥ ४ ॥

(१८२)

राग–कनड़ी ।

होजी म्हांरी याही मानूं काई मानूंजी प्रभूजी, ॥ होजी० ॥ टेक ॥ भव भवमैं तुम दरसन पाऊं, सुपनैं और नहीं जानूं ॥ होजी० ॥ १ ॥ काल अनादि गयौ भटकत ही, अब तौ करमनकौं भानूं। तुम विन मेरी कहौ कहुं कासौं, वुधजन मांगै शिवथानूं ॥ होजी० ॥ २ ॥

(१८३)

राग–कनड़ी । (पंजावी)

मग वतलाना मैनूं[१] मोखिदा[२] हो साइंयां ॥ मग० ॥ टेक ॥ तैंडे चरन दानिवे, इक सरना मेरे ताईं, ओरतैं नाहिं पुकारना, हो साइंयां ॥ मग० ॥ १ ॥ भवदधि भारीतैं तूहि उतस्या मेरे सांई, मैंनूं भी पार उतारना, हो साइंयां ॥ मग० ॥ २ ॥ वुधजन चेराकौं विधि जकस्या दुखदाई, हाथ पकरिकैं उबारना, हो साइंयां ॥ मग० ॥ ३ ॥

---

१ मुझको । २ मोक्षका ।

(१८४)

राग-भैरों।

पूजत जिनराज आज, आपदा हरी। दरस्यौ तत्त्वार्थ मोहि धन्य या घरी ॥ पूजत० ॥ टेक ॥ छल बल मद क्रोध भेरी, ऊंचता करी। अब लौं या जानत सो, बात निरवरी ॥ पूजत० ॥ १ ॥ राजपदी छोरिकैं, विरागता धरी। तासौं जिनराज भये, दृष्टि या परी ॥ पूजत० ॥२॥ आन भाव जन्म जन्म, कीन बहु वरी। यातैं गति चार बीच, विपति अति भरी ॥ पूजत० ॥ ३ ॥ बुधजन जिन शरन गह्यौ, मिट गई मरी। आपमाहिं आप लख्यौ, शुद्ध आपरी ॥ पूजत० ॥ ४ ॥

(१८५)

राग-भैरवी।

तैं तौ गुरु सीख न मानी, न मानी रे मोरे जिया; फिर विषयनिसौं रति मानी ॥ तैं० ॥ टेक ॥ इनहीके कारन चहुँगति, डोल्यौ रे भाई। सुन ताकी कौलग कहूं कहानी ॥ तैं तौ० ॥ १ ॥ गई सो गई अब बुधजन समझौ रे भाई, तू तौ करिलै जिनमत उर सरधानी ॥ तैं तौ० ॥ २ ॥

(१८६)

राग-झिंझोटी।

सजनी मिलि चालो ये पूजनकाज ॥ सजनी० ॥ टेक ॥ समोसरन बन आय विराजे, वीरनाथ महाराज ॥ सजनी० ॥ १ ॥ सखियन संग चेलना रानी, भगत करै मनलाय। वे प्रभु दीनदयाल जगतके, हितकर धर्म-जिहाज ॥ सजनी० ॥ २ ॥

(१८७)

राग-ललित, एकतालो।

कहाजी कियौ भव धरिकैं रे वाह वाहोजी तुम॥ कहा० ॥ टेक ॥ नरभव श्रीजिनवरमत पायौ, लख चौरासी फि-रिकैं; रे वाह वाहो ॥ कहा० ॥ १ ॥ परद्रव्यनितैं रीझत खीजत, या कुटिलाई करिकैं। भटके हो अति भटकौगे पुनि, जन्म मरन दुख भरिकैं, रे वाह वाहो ॥ कहा० ॥ २ ॥ अब सुख दुखमैं बूड़त हौ क्यौं, तनमैं आप विसरि-कैं। करि पुरुषारथ शिवपुर चालौ, वुधजन भवदधि त-रिकैं, रे वाह वाहो ॥ कहा० ॥ ३ ॥

(१८८)

राग-ललित एकतालो।

हमारी पीर तौ हरौ जी, अजी, यौ सुनियौ जी सेवक ओर चितइयौ ॥ हमारी० ॥ टेक ॥ हम जगवासी तुम जगनायक, इतनी रीति निवहियौ ॥ हमारी० ॥ १ ॥ ज्ञान आपना भूलि रहे हैं, मोह नींद वश गइयौ। कर्म चोर मिलि हमकौं लूटत, करुना धारि जगइयौ जी ॥ हमारी० ॥ २ ॥ दुखी अनादि काल भव भरमत, जिन तुम दर्शन लइयौ। अब फिरना हरि शरना दीजे, वुधजन सीस नमइयौ जी ॥ हमारी० ॥ ३ ॥

(१८९)

राग-ललित एकतालो।

वधाई भई है महावीर, हो जी म्हारै, नैंनन लखि हर-षाय ॥ वधाई० ॥ टेक ॥ वनि आई सव मौज री, सुख

कहिय न जाय । हो जी म्हारै विछुरत वनि नहिं आय ॥ वधाई० ॥ १ ॥ दुख खोयौ सव जनमकौ, आनंद वढ़ाय । हो जी मैं तो शुभ विधि पूजौं पाय ॥ वधाई० ॥ २ ॥

(१९०)

राग-अलहिया जल्द तितालो ।

सुण तों मांहींवाला, क्योंजी क्योंजी क्योंजी जिया रिंदगी (?) ॥ सुण० ॥ टेक ॥ प्रभु न विसरि जाना वे रचिया विषयनसों । करन भला जिन वंदगी हो ॥ सुण० ॥ १ ॥ देहमें मगन सदा वे भुलानी, आतमनूं देह भरी सारी गंदगी हो ॥ सुण० ॥ २ ॥ रहना भला तैनूं वे, जिनदे चरन तटवे, ऐसानूं वनै विधि वंदगी हो ॥ सुण० ॥ ३ ॥

(१९१)

राग-विलावल कनड़ी तेतालो ।

अष्ट कर्म म्हांरो कांई करसी जी, हूं म्हारै ही घर राखूं राम ॥ अष्ट० ॥ टेक ॥ इन्द्री द्वारै चित दौरत है, सो वशकै नहिं करस्यूं काम ॥ अष्ट० ॥ १ ॥ इनका जोर इताही मुझपै, दुख दिखलावैं इन्द्रीग्राम । जाकूं जानूं मैं नहिं मानूं, भेदविज्ञान करूं विसराम ॥ अष्ट० ॥ २ ॥ कहूं राग कहुं दोष करत थौ, तव विधि आते मेरे धाम । सो विभाव नहिं धारूं कवहूं, शुद्ध सुभाव रहूं अभिराम ॥ अष्ट० ॥ ३ ॥ जिनवर मुनिगुरुकी वलि जाऊं, जिन वत-

---

१ मध्यवाला—अन्तरात्मा ।

लाया मेरा ठाम । सुखी रहत हूं दुख नहिं व्यापत, बुधजन हरषत आठौं जाम ॥ अष्ट० ॥ ४ ॥

(१९२)

राग—अलहिया बिलावल ।

वानी जिनकी वखानी, हो जी, थांनैं सब मुनि मनमैं आनी ॥ वानी० ॥ टेक ॥ मिथ्याभानी सम्यकदानी, म्हारा घटमैं बसौ हितदानी ॥ वानी० ॥ १ ॥ निश्चय व्योहार जितावनहारी, नय निक्षेप प्रमानी । तुम जानैं विन भव-वन भटक्यौ, करौ कृपा सुखदानी ॥ वानी० ॥ २ ॥ जिते तिरे भवि भवदधिसेती, तिन निश्चय उर आनी । अवहूं तिरिहैं बुधजन तुमतैं, अंकित स्यादनिशानी ॥ वानी० ॥३॥

(१९३)

राग—धनासरी ।

थारी थारी चेतन मति भोरी रे, तैं तौ अपनी आप हि वोरीरे ॥ थारी० ॥ टेक ॥ सिर डारै मोह ठगौरी रे, सँग राग दोष दो थोरी[1] रे । तू रचि रह्यौ इनतैं सोंरी रे, ये करत कहा तोसौं जोरी रे ॥ थारी० ॥ १ ॥ क्रोधादिक भाव बनावै रे, तातैं जन्म मरण दुख पावै रे । यौ औ-सर गुरु समझावैं रे, जो मानैं तौ बचि जावै रे ॥ थारी० ॥ २ ॥ द्रव थान काल ले आया रे, भावी न अन्यथा थाया रे । जो बुधजन धीरज लाया रे, सो अविचल सुखकौं पाया रे ॥ थारी० ॥ ३ ॥

---

१ दुष्ट ।

(१९४)

थे चिंतचाहीदा नजरूं आया ॥ थे० ॥ टेक ॥ निशिदिन ध्यावां नीवे मंगल गावां हरपावां चरनन पूज रचाया ॥ थे० ॥ १ ॥ अब नहिं विसरूं जी वे ये वर दीजे सुन लीजे बुधजन सरना पाया ॥ थे० ॥ २ ॥

(१९५)

राग–ईमन जल्द तितालो ।

शरन गही मैं तेरी, जगजीवन जिनराज जगतपति ॥ शर० ॥ टेक ॥ तारन तरन करन पावन जग, हरन करम भवफेरी ॥ शरन० ॥ १ ॥ ढूंढ़त फिर्यो भर्यो नाना दुख, कहुँ न मिली सुखसेरी । यातैं तजी आनकी सेवा, सेव रावरी हेरी ॥ शरन० ॥ २ ॥ परमैं मगन विसार्यौ आतम, धर्यौ भरम जगकेरी । ये मति तजूं भजूं परमातम, सो बुधि कीजे मेरी ॥ शरन० ॥ ३ ॥

(१९६)

करमूंदा कुपंच मेरे हैं दुख दाइयां हो ॥ करमूंदा० ॥ टेक ॥ करमहरन महिमा सुनि आयौ, सुनिये[3] मैंड़ी साइयां हो ॥ करमूंदा० ॥ १ ॥ कबहुंक इंद नरिंद बनायौ, कबहुंक रंक बनाइयां । कबहुंक कीट गयंद रचायौ, ऐसैं नाच नचाइयां ॥ करमूंदा० ॥ २ ॥ जो कुछ भई सो तुमही जानौं, मैं जानत हूं नाइयां । कर्मबंध तुम काटे जाविधि, सो विधि मोहि दिवाइयां ॥ करमूंदा० ॥ ३ ॥

---

१ चित्त जिनको चाहता था, ऐसे आप दिखलाई दिये । २ कर्मोंका । ३ मेरी ।

(१९७)

राग–ईमन धीमो तेतालो।

तुम सुध आयैं मोरै आनँदकी उठत हियरा चाह हां ॥ तुम० ॥ टेक ॥ तेरे नामके जापका, फल आगम लेखा। सिंह स्याल वानर तरे, कहुं कोलौं विसेखा ॥ तुम० ॥ १ ॥ अपने जियके काजका, कोई नाहीं देख्या। तुम ही हो प्रभु एकले, मैं सव विधि पेख्या ॥ तुम० ॥ २ ॥

(१९८)

राग–वरवा।

अव तेरी सुनि वातड़ी, चुप रहौ रे जिया, धंधा रे करता ॥अव० ॥टेक॥ काल अनन्त निगोदमैं, भरम्या इम भाई। अष्टादश भव सांसमैं, धारे दुखदाई ॥ अव० ॥ १ ॥ पुनि विकलत्रय ऊपज्या, पुनि हुआ असैनी। अव सैनी मानुष भया, पाया कुल जैनी ॥ अव० ॥ २ ॥ अशुभ कियैं ह्वै नारकी, नाना दुख पावै। शुभतैं सुरगन सुख लहै, आगम इम गावै ॥ अव० ॥ ३ ॥ दोउ शुभाशुभ त्यागिकैं, अपना पद ध्यावै। वुधजन तव थिरता लहै, फिर जन्म न पावै ॥ अव० ॥ ४ ॥

(१९९)

राग–सिंधड़ा।

तू तौ है ज्ञानमैं नाहीं तन धनमैं ॥ तू० ॥ टेक ॥ सपरस गंध वरन रस रूपी, जानपनौं नहिं इनमैं ॥ तू० ॥१॥ पर–परनति परनति करवेतैं, भ्रमत फिरत है गतिन-मैं ॥ तू० ॥ २ ॥ विन आवरन स्वच्छ जव ह्वै है, तव

तोमैं तू इनमैं ॥ तू० ॥ ३ ॥ बुधजन जानपनौ ही अपनौ, तज ममता जन जनमैं ॥ तू० ॥ ४ ॥

(२००)

राग–सिंधड़ा ।

हो चेतन अभी चेत लै, मर जानेकी गम क्या ॥ हो० ॥ टेक ॥ मानुष ह्वै गाफिल नहिं रहना, आपा आप पिछान लै ॥ हो० ॥ १ ॥ सिरँडा[1] हो विषयनसौं लपटा, दुख पावैगा जान दे । आगैं भवमैं क्या तू करैगा, ताका जतन विचारि लै ॥ हो० ॥ २ ॥ जिनवरकी वानी उर धारौ, मिथ्या मोह निवारि लै । बुधजन अपना परका भला करि, समता सुखकर धारि लै ॥ हो० ॥ ३ ॥

(२०१)

वूड़्यौ रे भोळा जीव, मूरख वूड़्यौ रे ॥ वूड़्यौ रे० ॥ टेक ॥ जिनधर्मामृत छोड़िकैं रे, पीवत जहर मिथ्यात । आन देव पूजत फिर्‌यौ, सुन्यौ कुगुरुकी वात ॥ वूड़्यौ रे० ॥ १ ॥ पेट भरनके कारनैं रे, करौ अनीति अज्ञान । चोरी चुगली झूठी वकिकैं, हरै हरखिकैं प्रान ॥ वूड़्यौ० ॥ २ ॥ अरुचि हियामैं धार लै रे, भोग भुजंग समान । बुधजन आतम परखि ल्यो, करि करि भेदविज्ञान ॥ वूड़्यौ० ॥ ३ ॥

(२०२)

राग–सिंधड़ा ।

चेतन आयु थोरी रे, भोगमैं क्यौं भुलायौ रे। विषयमैं

---

१ पागल ।

क्यौं लुभायौ रे, तू तौ उलझत है जंजाल ॥ चेतन० ॥ टेक ॥ मनुष जनममैं आयवौ रे, सुलभ जगतमैं नाहिं । गयौ न मोती पायसी रे, सागरका जलमाहिं ॥ चेतन० ॥ १ ॥ राज विभौ जोवन तन सुंदर, रानी जुतसिंगार । जल बुदबद दामिनिका चमका, विनसत होत न बार ॥ चेतन० ॥२॥ नैन पतंग मतंग फरसतैं, मृग श्रवना आधार । अलि नासा सफरी रसनातैं, प्रान तजत निरधार ॥ चेतन० ॥ ३ ॥ पराधीन ये निश्चल नाहीं, आखिर होत गिलान । सेवनका फल नरक मिलत है, त्यागेतैं निरवान ॥ चेतन० ॥ ४ ॥ बुरी भली दोऊ कह दीनी, कर लै आप पिछान । ऐसा कारज करिये बुधजन, जामैं सदा कल्यान ॥ चेतन० ॥ ५ ॥

(२०३)

राग-झंझौटी ।

अनी (?) मेरा नाभिनंदन जगवंदन स्वामी, पूजन काज चलै ॥ अनी० ॥ टेक ॥ मिलि साधरमी चलौ देहरै[1], उत्तम दरव सु लै ॥ अनी० ॥ १ ॥ करि पूजा प्रभुका गुन गावैं, निहचल होय भलै ॥ अनी० ॥ २ ॥ भव भवमैं बुधजन सुख लै है, अनुक्रम मुक्ति मिलै ॥ अनी० ॥ ३ ॥

(२०४)

राग-जंगलो ।

या काया माया थिर न रहैगी, झूठा मान न कर रे ॥

---

[1] मन्दिरको ।

या० ॥ टेक ॥ खाई कोट ऊंचा दरवाजा, तोप सुभटका भंर रे । छिनमैं खोसि मुदी (?) लै तव ही, रंक फिरै घर घर रे ॥ या० ॥ तन सुंदर रूपी जोवनजुत, लाख सुभटका वल रे । सीतं–जुरी जव आन सतावै, तव कांपै थर थर रे ॥ या० ॥ २ ॥ जैसा उदय तैसा फल पावै, जाननहार तू नर रे । मनमैं राग दोष मति धारै, जनम मरनतैं डर रे ॥ या० ॥ ३ ॥ कही वात सरधा कर भाई !, अपने परतंख लख रे । शुद्ध सुभाव आपना वुधजन, मिथ्याभ्रम परिहर रे ॥ या० ॥ ४ ॥

(२०५)

येती तो विचारौ जगमैं पावँनां है, हे जिया ॥ येती० ॥ टेक॥ पाई नरदेह मति भूलै म्हारा हे जिया ॥ येती० ॥ १ ॥ लख चौरासीकै माहिं तू फिरैलो वावरा । जनम मरण दुख होय, म्हारा हे जिया ॥ येती० ॥ २ ॥ तेरा साहिव तुझहीमाहिं विराजै जीयरा । वुधजन क्यौं रह्या भूल, म्हारा हे जिया ॥ येती० ॥ ३ ॥

(२०६)

अव तौ या जोग नाहीं रे, अरे हो अजान ॥ अव० ॥ टेक ॥ सिरपर काल फिरत नहिं दीसै, चेत वुढ़ापा आई रे ॥ अव० ॥ १ ॥ कोड़ि मुहर दीयां नहि जीवौ, हेलौ पाड़ि सुनाई रे ॥ अव० ॥ २ ॥ धरम विना नरभव तू खोवत, ज्यौं आंधे निधि पाई रे ॥ अव० ॥ ३ ॥

---

१ समूह । २ शीत–ज्वर । ३ प्रत्यक्ष । ४ पाहुंना–महमान । ५ चिल्लाकरके ।

त्यागि मिथ्यात धारि समकितकौं, बुधजन है सुखदाई रे ॥ अब० ॥ ४ ॥

(२०७)

राग–खंमाच ।

जमारा[1] नी वे तेरा नाहक बीता ॥ जमारा० ॥ टेक ॥ या तौ थारी कुमतिड़ल्या[2] दुख दीता भलां दुख दीता ॥ जमारा० ॥ १ ॥ धरम विसारि विषय सुख सेवत, अं-मृत तजि विष लीता ॥ जमारा० ॥ २ ॥ आन देव सेया तजि जिनकौं, रह्या रीतेका रीता ॥ जमारा० ॥ ३ ॥ अब बुधजन संवरकौं पकरौ, तासौं रहौगे नचीता ॥ जमारा० ॥ ४ ॥

(२०८)

राग–खंमाच ।

हो जिय ज्ञानी रे ये ही सुणि जइयौ रे ॥ हो० ॥ टेक ॥ भ्रमतौ आयौ नरभवमाहीं, बिछुरत बार न लइयौ रे ॥ हो० ॥ १ ॥ जो चेतै तौ ही सुख पावै, विन चेतैं दुख पइयौ रे ॥ हो० ॥ २ ॥ हित करिकै बुधजन भाषत है, जिनसरधान करइयौ रे ॥ हो० ॥ ३ ॥

(२०९)

राग–खंमाच ।

गातां ध्यातां तारसी जी भरोसौ महावीरकौ ॥ गातां० ॥ टेक ॥ हेरि थक्यौ सबमाहीं ऐसौ, नाहीं कोऊ पीरको ॥ गातां० ॥ १ ॥ जे तिर गये ते इनके जपतैं, मेटि करम

---

१ जीवनसमय । २ कुमतिने ।

भव भीरको । बुधजन समता ल्यो पावौगे, शिवपुर भव-दधितीरको ॥ गातां० ॥ २ ॥

(२१०)

राग—खंमाच ।

यौं ही थाँनै ओलँबो, हो जिय ज्ञानी॥ यौं ही० ॥ टेक॥ रतन मनुषभव पाय कठिनतैं, सो नाहक क्यौं खोयवौ ॥ यौं ही० ॥ १ ॥ प्रभु विसारि पर—कंचन—कामिनि, उर चितवत क्यौं चोरिवौ ॥ यौं ही० ॥ २ ॥ आपा आप सम्हारौ बुधजन, फेरि न औसर पायवौ ॥ यौं ही० ॥३॥

(२११)

राग—खंमाच ।

पारै छै पारै छै दिन पारै छै, विधि मोकौं दिन पारै छै ॥ पारै० ॥ टेक ॥ ऊरध मध्य पताल लोकमैं, फेरै छिन छिन सारै छै । मिश्र गृहीत अगृहीत प्रमाणो, ग्रहण करत उरझारै छै ॥ पारै० ॥ १ ॥ केते कल्प गये तुम जानों, ज्यावै छै अर मारै छै । जघन मध्य उत्कृष्ट आयु करि, गति गतिमाहीं डारै छै ॥ पारै० ॥ २ ॥ अध्यवसाय जोगके सोई, सवै भाव विस्तारै छै । बुधजन चरन शरन दिढ़ पकरी, दुख हरिवौ थाँ—सारै छै ॥ पारै० ॥ ३ ॥

(२१२)

राग—खंमाच ।

मानै छै मानै छै यौं ही मानै छै, मुरँडाँट जी मूरख मानै छै ॥ मानै० ॥ टेक ॥ जीव अरूपी रूपी तनकौं,

---

१ उलहना । २ दुख देता है । ३ जिलाता है । ४ आपके सहारे । ५ हठात् ।

आपनपो करि जानै छै ॥ मानै० ॥ १ ॥ आप अकरता थाप हियामैं, पाप करत नहिं छानै छै। अशुभ तजत है शुभ आदरिकै, शुद्ध भाव नहिं आनै छै ॥ मानै० ॥ २ ॥ द्रव्य अभेदमैं भेद कल्पकै, अजथा रीति वखानै छै। भेद अभेदी एक अनेकी, बुधजन दोऊ ठानै छै ॥ मानै० ॥३॥

(२१३)

राग-सिद्धकी खंमाच तेतालो।

मुजनूं[1] जिन दीठा[2] प्यारा वे, ध्यान लगाय उरमाहिं निहारा ॥मुजनूं० ॥ टेक॥ और सकल स्वारथके साथी, विन स्वारथ ये म्हारा ॥ मुजनूं० ॥ १ ॥ आन देव परिगृहके धारी, ये परिगृहतैं न्यारा॥ मुजनूं० ॥२॥ सकल जगत जन राग वढ़ावत, ये प्रभु राग निवारा ॥ मुजनूं० ॥ ३ ॥ चरन शरन जाँचत है बुधजन, जव लौं है निरवारा॥ मुजनूं०॥४॥

(२१४)

जीवा जी थाँनै किण विधि राखां समझाय, हो जी म्हारा हो जी ॥ जीवा जी० ॥ टेक ॥ घणां दिनांका विगड्या तीवण[3], कुमति रही लपटाय ॥ जीवा जी० ॥ १ ॥ यातौ थानैं पर घर राखै, लालच विसन लगाय । मोमैंदिरातैं[4] किया वावला, दीना रतन गमाय॥ जीवा जी० ॥ ॥ २ ॥ एक स्याँत[5] मुझरूप निहारौ, निज घरमाहीं आय। बुधजन अविचल सुख पावौगे, सब संकट मिट जाय ॥ जीवा जी० ॥ ३ ॥

---

१ मुझको। २ दिखा। ३ शाक। ४ मोहरूपी शरावसे। ५ छनभर।

(२१५)

राग–परज ।

करि करि कर्म इलाज, जीवाजी हो ल्यो नै सुहेलौ सुख मोखरौ ॥ करि० ॥ टेक ॥ विधि दुष्टन सँग जगतमैं, पावत हौं संताप । तीनलोककी प्रभुता लायक, रंक भये क्यौं आप ॥ करि० ॥ १ ॥ निज स्वभावमैं लीन होयकैं, राग-रु-दोप मिटाय । बुधजन विलँव न कीजिये हो, फेर न या परजाय ॥ करि० ॥ २ ॥

(२१६)

राग–अडाणों ।

गहो नी धर्म, नित आयु घटै जी ॥ गहो० ॥ टेक ॥ या भव सुख परभव सुख है है, पूर्व कमाये कर्म कटै जी ॥ गहो० ॥ १ ॥ तन तेरेकी रीति निरखि लै, पोषत पोषत जोर हटै जी । मात तात सुत झूठे जगके, जम टेरै तव नाहिं नटै जी ॥ गहो० ॥ २ ॥ लाभ जतनमैं दिन मति खोवै, मिलि है जो तेरे लेख पटै जी । बुधजन जतन विचारौ ऐसा, जासौं अगली विपति मिटै जी ॥गहो० ॥ ३ ॥

(२१७)

यौं मन मेरौ निपट हठीलौ ॥ यौं० ॥ टेक ॥ कहा करूं वरज्यौ न रहत है, दौरि उठत जैसैं सर्प उकीलौ ॥ यौं० ॥ १ ॥ वारंवार सिखावत श्रीगुरु, यौ नहिं मानत गज गरवीलौ । दुख पावत तौहू नहिं ध्यावत, बुधजन निजपद अचल नवीलौ ॥ यौं० ॥ २ ॥

---

१ लो न सहज सुख मोक्षका ? २ गहो न–ग्रहण कर लो न ? । ३ इंकार नहीं करता है । ४ विना कीला हुआ । ५ नवीन ।

(२१८)

राग–सोरठ ।

मिनंखगति निठैं मिली छै आय ॥ मिनख० ॥ टेक ॥ काकताल किधौं अंधवटेरी, उपमा कौन बनाय ॥ मिनख० ॥ १ ॥ पूरन विपति नरकगतिमाहीं, ज्ञान पशू नाहिं पाय। देव ऊंचपदहूमैं जांचै, कधि उपजौं नर आय ॥ मिनख० ॥ २ ॥ यह गति दान–महातपकारन, अजरअमरपद-दाय। सो ही भोग व्यसनमैं खोवै, अँमृत तजि विष पाय ॥ मिनख० ॥ ३ ॥ जल अंजुलि ज्यौं आयु घटत है, करि-लै वेगि उपाय। बुधजन वारंवार कहत है, शठसौं नाहिं बसाय ॥ मिनख० ॥ ४ ॥

(२१९)

राग–सोरठ ।

प्रभु थांका वचनमैं वहुत वनै छै रूड़ी ॥ प्रभु० ॥ टेक ॥ अशुभ भाव सहजैं मिटि जै हैं, मिटि जै हैं सब ही गति कूड़ी ॥ प्रभु० ॥ १ ॥ विषय मगन जिन वचन अपूठे, तिनकी सब विधितैं मति बूड़ी। सरधा करि मुनि वचन सुनत ही, सुख पायौ निंदक हू चूंड़ी ॥ प्रभु० ॥ २ ॥ दया दान भवि वँलध्या जोतै, संवर तप हल धारै जूड़ी। धर्म खेतमैं मोक्ष धान लै, सहज मिलै विधि सुरगति तूंड़ी ॥ प्रभु० ॥ ३ ॥

---

१ मनुष्यगति। २ कठिनाईसे। ३ सुन्दरता। ४ खोटी। ५ उलटे। ६ चांडालिनीने। ७ बैल। ८ जूंआ। ९ तुष–पयाल।

(२२०)

निज कारज क्यौं न कियौ अरे हे जिया तैं, निज० देख्यौ थारौ यौ नसीव हे जिया तैं ॥ निज० ॥ टेक ॥ या भवकौं सुरपति अति तरसै, सहजैं पाय लियौ ॥ निज० ॥१॥ मिथ्या जहर कह्यौ गुरु तजिवौ, तैं अपनाय पियौ । दया दान पूजन संजममैं, कवहूँ चित न दियौ ॥ निज० ॥ २ ॥ बुधजन औसर कठिन मिल्यौ है, निश्चय धारि हियौ । अव जिन-मत सरधा दिढ़ पकरौ, तव है सफल जियौ ॥ निज० ॥३॥

(२२१)

तेरौ आवत नीड़ो¹ काल, वरज्यौ ना रहै ॥ तेरौ० ॥टेक॥ जोवन गयौ वुढ़ापौ आयौ, ढीली पड़ गई खाल, वरज्यौ ना रहै ॥ तेरौ० ॥ १ ॥ घरी घरी कर वीतत वेरसैं², करि है सव पैमाल, वरज्यौ ना रहै ॥ तेरौ० ॥ २ ॥ भोग व्यसनमैं दिन मत खोवै, वूड़ैगौ जग जाल ॥ तेरौ० ॥ ३ ॥ परकौं त्यागि लागि शुभ मारग, बुधजन आप सम्हाल, वरज्यौ ना रहै ॥ तेरौ० ॥ ४ ॥

(२२२)

समझ भव्य अव मति सोवै रे, उठ रे सोवत जनम गयौ तोकौं ॥ समझ० ॥ टेक ॥ काय कुटी तौ टूटि गई है, क्यौं नहिं जोवै रे । कुंजर काल गहै तव तेरा, क्या वश होवै रे ॥ समझ० ॥ १ ॥ अनँत काल थावर त्रस जीवा-माहीं खोवै रे । अव पुरुपारथ करिवेकौ दिन, सो क्यौं

१ निकट—नजदीक । २ वर्ष—सालैं ।

गोवै रे ॥ समझ० ॥ २ ॥ नरभव रतन पाय नहिं समझै, सो दधि[1] बोवै रे। निज-सुभाव-सुध-वारि करममल, बुधजन धोवै रे ॥ समझ० ॥ ३ ॥

(२२३)

राग-सोरठ।

आज लग्यौ छै उमाहौ यौ मनमैं, संग बुरौ करमनकौं हरस्यां[2] ॥ आज० ॥ टेक ॥ तीनलोकपति वंदत जाकौं, तिनके पद-पंकज-रज परस्यां[3] ॥ आज० ॥ १ ॥ सुनि जिन-वानी बात पिछानी, संशय मोह भरम परिहरस्यां[4] ॥ आज० ॥ २ ॥ पर-सँग त्यागि पाय निज सम्पति, बुधजन सुखसौं शिवतिय वरस्यां[5] ॥ आज० ॥ ३ ॥

(२२४)

हे देखो भोळौ वरज्यौ न मानै, यौ जीव विषयांरो[6] मातौ ॥ देखो० ॥ टेक ॥ परम दयाल सिखावत हितकौं, यौ विपरीति पिछानै ॥ हे० ॥ १ ॥ परघर गमन करत निशि वासर, अपनी बुधि नहिं जानै। दुखी भयौ खोयौ सब जिनतैं, तिनहीसौं रति आनै ॥ हे० ॥ २ ॥ भाग अ-पूरब उदय भये तब, भैंटे श्रीजिन थाँनै[7]। तुम सरधान धारि उर बुधजन, पासी[8] शिवसुख-थानै ॥ हे० ॥ ३ ॥

(२२५)

हो देवाधिदेव म्हारी, अरज सुनौ जी ॥ हो० ॥ टेक ॥ नरकनका दुःख कहौ, कौलौ भनौं जी। एकलेकैं

---

१ उदधि-समुद्रमें। २ हरूंगा-नष्ट करूंगा। ३ स्पर्श करूंगा। ४ परिहरण करूंगा, नष्ट करूंगा। ५ वरण करूंगा-ब्याहूंगा। ६ विषयोंका उन्मत। ७ आपसे। ८ पावैगा।

मार दई, लाख जनौं जी ॥ हो० ॥१॥ थावर विकलत्रय, पंचेन्द्री बनौ जी। शीत घाम भूख प्यास, त्रास घनौ जी ॥ हो० ॥ २ ॥ सागरलौं सुरगतिमैं, सुक्ख सुनौ जी। भोगनमैं लीन रह्यौ, अघ न गनौ जी ॥ हो० ॥ ३ ॥ नरभवमैं आय लह्यौ, दासपनौ जी। बुधजनपै दया धारि, कर्म हनौ जी ॥ हो ० ॥ ४ ॥

(२२६)

मानौ मन भँवरसुजान हो राज, नरभव यौ थिर ना रहै हो राज ॥ मानौ० ॥ टेक ॥ काल करन कछु नाहिं विचारौ, कर ल्यो कारज आज ॥ मानौ० ॥ १ ॥ नव जौवन सुंदर तन संपति, दारा सुतकौ समाज। थिति पूरी करि करि नश जै है, परेई रहैंगे इलाज ॥ मानौ० ॥ २ ॥ निज हित तजि विषयन हित राचौ, औसर खोत अकाज। अनुचित काज करत हौ बुधजन, आवत क्यौं नहिं लाज ॥ मानौ० ॥ ३ ॥

(२२७)

राग—विहाग।

सुख पावौगे यासौं, मेरा सुघर चेतन गुन गाय रे ॥ सुख० ॥ टेक ॥ गायां विना बिगार करत है, तुम विन कहो कहुं कासौं ॥ चेतन० ॥१॥ जिन गाया तिन ही शिव पाया, सीख देत हूं तासौं ॥ चेतन० ॥२॥ यातैं सास[1] सास बुधजन जपि, गयौ न आवै सौसौं[2] ॥ चेतन० ॥ ३ ॥

---

१ स्वासस्वासमें—हरएक सांसमें। २ गई हुई सांस फिर नहीं आती है।

(२२८)

राग—जैजैवंती ।

बोयौ रे जन्म यौं ही, नीठ[1] नीठ पायौ छै भाई ॥ ॥ बोयौ० ॥ टेक ॥ जोयौ नाहीं हेत वैन, जिनवर गायौ छै। धोयौ नाहिं पाप मैल, खोयौ पुन्य कुमायौ छै ॥ बोयौ० ॥ १ ॥ सोयौ तूं पराई सेज, गोयौ माल विरानौं छै। झूठ बोलि पीड़ि प्राणी, विभव बढ़ायौ छै ॥ बोयौ० ॥ २ ॥ मरि सो अनन्त काल, थावर बनायौ छै। अणुसौ मिनख भव, काकताल पायौ छै ॥ बोयौ० ॥ ३ ॥ जो बुध अबै चेतै, तौ न गमायौ छै। जिन पूज व्रत पाल, सिवसुखदायौ छै ॥ बोयौ० ॥ ४ ॥

(२२९)

राग—विलावल ।

धन्य सुदत्त मुनि वानि सुनाई॥ धन्य० ॥ टेक ॥ मित्र कल्यान मिले मो अब ही, तिन मोहि मुनिकी छवि दरसाई ॥ धन्य० ॥ १ ॥ टरत शिकार स्वानगन छोड़े, सो अघ क्यौं हु न मिटत कदाई। ता कारन सिर छेदूं मेरौ, सो मुनि मेरी विपति मिटाई ॥ धन्य० ॥ २ ॥ भूप जसोमति लखि अति हरष्यौ, उर तत्त्वारथ सरधा आई। मित्र सहित पुनि पंच शतक नृप, भोग विमुख ह्वै दिच्छा पाई ॥ धनि० ॥ ३ ॥ कुँवर अभयरुचि अर भगनीजुत, क्षुल्लक भये पुनि हुए मुनिराई। जोगी देवी मारदत्त नृप, बुधजन सुलटे सुरपद पाई ॥ धनि० ॥ ४ ॥

---

१ खोया । २ कठिनाईसे । ३ देखा ।

(२३०)

ऐसे गुरुके गुननकौं गावौ भविया ॥ ऐसे० ॥ टेक ॥ सदन त्यागि वनवास कियौ है, तन धन परिजन छोरि दिया ॥ ऐसे० ॥ १ ॥ पोष निशा सरिता तट बैठे, नगन-रूप जिन ध्यान लिया ॥ ऐसे० ॥ २ ॥ जेठ दिवस गिरि ऊपर ठाड़े, सूरज-सनमुख वदन किया ॥ ऐसे० ॥ ३ ॥ विरख तलैं सावन जब वरषत, डांस मछरकी विपति सया ॥ ऐसे० ॥ ४ ॥ शत्रु मित्र समभाव लये तिन, करुणा-वत्सल जीवदया ॥ ऐसे० ॥ ५ ॥ बाघ दुष्ट नर दोष करैं तब, ध्यानथकी नहिं भाग गया ॥ ऐसे० ॥ ६ ॥ विरत विना (?) भोजन नहिं जाचैं, भूख सहत वपु सूख गया ॥ ऐसे० ॥ ७ ॥ रतनत्रयजुत धर्म धरैं दश, निज पर-णति सुख मगन ठया ॥ ऐसे० ॥ ८ ॥ अहनिशि मुनिकौं वंदन मेरी, कर्म शत्रु जग जीति लया ॥ ऐसे० ॥ ९ ॥ कब दर्शन व्है ऐसे गुरुकौ, बुधजनके उर हरष भया ॥ ऐसे० ॥ १० ॥

(२३१)

राग—कालिंगड़ा।

मेरा तुमीसौं मन लगा ॥ मेरा० ॥ टेक ॥ याद नहिं भूल दावो सुणा(?), निशि दिन आनंद पगा ॥ मेरा०॥१॥ इस दुनियां विच ढूंढ थका मैं हो सांई, तुम विन कोइ न सगा ॥ मेरा० ॥ २ ॥ शांत भया उर तुम वच सुनतां, हो सांई जन्मांतर दुख दगा ॥ मेरा० ॥ ३ ॥ थारे चरन

विच चित बुधजनका, हो सांई निशिदिन रंग रगा ॥ मेरा० ॥ ४ ॥

(२३२)

म्हारा जी श्री जी मेरा भला हो किया॥ म्हारा जी० ॥ टेक ॥ दुखिया था मैं नादिकालका, ताकौं तुमने सुखी किया ॥ म्हारा जी० ॥ १ ॥ अब लौं मिले तिन मो भरमाया, ज्ञान ध्यानकौं भूलि गया। तुम निरखत मेरा संशय भाग्या, निज पद निजमैं पाय लिया ॥ म्हारा जी० ॥ २ ॥ पर उपगारी सब सरदारी, या लखि बुधजन शरन गया। ज्ञान विना मैंने क्रम[1] बांधे, तिनकौं खोलौ कीजे मया ॥ म्हारा जी० ॥ ३ ॥

(२३३)

राग—केसरां।

देख्यौ थारौ सुद्ध सरूप रे, जिया म्हारा, ज्ञानिक दर्पण ऊजलो रे लाल जिया ॥ देख्यौ० ॥ टेक ॥ यौं[2] ही थारौ सहज स्वभाव रे, जिया म्हारा । सब आ झलकै ज्ञानमैं, लाल जिया ॥ देख्यौ० ॥ १॥ करि करि ममत कुबाण[3] रे, जिया म्हारा। तू गति गति भरतो फिरै, लाल जिया ॥ देख्यौ० ॥ २ ॥ इन्द्री मन वसि आन रे, जिया म्हारा। ये नाखैं जग जालमैं, लाल जिया ॥ देख्यौ० ॥ ३ ॥ थारै देकौ[4] ठैठकौ[5] मिलाप रे जिया म्हारा। तुही छुड़ावै तौ छुटै, लाल जिया ॥ देख्यौ० ॥ ४ ॥ बुधजन आयौ संभाल रे

---

१ कर्म। २ जैसा। ३ बुरी आदत। ४ देहका। ५ हमेशाका।

जिया म्हारा । ज्यौं निकसै भव जालसौं, लाल जिया ॥ देख्यौं० ॥ ५ ॥

(२३४)

राग—आसावरी ।

श्रीजी म्हांनै जाणौ छो तौ म्हांकी सुधि लीज्यो जी ॥ श्री० ॥ टेक ॥ म्हे भूल्या म्हानैं विधि वांध्या, थे छुट-कारा दीज्यो जी ॥ श्री० ॥ १ ॥ अव म्हे शरणैं थांके आया, थे निरवाह करीज्यो जी । जोलौं रहै वुधजन जगमाहीं, तोलौं दर्शन दीज्यो जी ॥ श्री० ॥ २ ॥

(२३५)

राग—धनासरी ।

मेरा सपरदेसी (?) भूल न जाना वे, सुनि लेना वे ॥ मेरा० ॥ टेक ॥ द्रष्टा ज्ञाता नित्य निरंजन, तू है सिद्ध समाना ॥ मेरा० ॥ १ ॥ मोहित होय अनादि कालका, अजथा जथा पहचाना । राग दोष कीना परसेती, यातैं है मर-जाना ॥ मेरा० ॥ २ ॥ तेरी भूलि मैटि तोहीमैं, करि तेरा सरधाना । वुधजन थिर व्है त्यागि अथिरता, पावौगे शिवथाना ॥ मेरा० ॥ ३ ॥

(२३६)

तैं ना जानी तोहि उपयोग हि देत दिखानी ॥ तैं० ॥ टेक ॥ ज्यौं फूलनमैं वास वसत है, त्यौं तू तनमैं ज्ञानी ॥ तैं० ॥ १ ॥ ये तेरे कवहूं मति मानै, क्रोध लोभ छल मानी ॥ तैं० ॥ २ ॥ जैसैं राजत सिद्ध मुकतिमैं, तैसा तू है प्रानी ॥ तैं० ॥ ३ ॥ या जानैं विन गति गति भीतर,

दुख पाये हैरानी ॥ तैं० ॥ ४ ॥ वुधजन औसर अजब मिल्यौ है, धरि सरधा जिनवानी ॥ तैं० ॥ ५ ॥

(२३७)

राग–सोरठ ।

ठाइसौं[1] गुनाकौ धारी जीव, कांई जाना कव होसी ॥ ठाइसौं० ॥ टेक ॥ भोग विसनमैं राचै माचै, मानुप भव यौं ही खोसी ॥ ठाइसौं० ॥ १ ॥ धारि उदासी ह्वै वनवासी, निज सुखमैं कर संतोसी । सांत सुभाव विमल जलसेती, भव भवके पातक धोसी ॥ ठाइसौं० ॥ २ ॥ वदन निहारूं गुन उर धारूं, ध्यान धरूं मन ईकोसी । ऐसी दशा कीजे वुधजनकी, ज्यौं हो जाऊं निरदोसी ॥ ठाईसौं० ॥ ३ ॥

(२३८)

राग–परज ।

तू आतम निरभय डोलि[2] नी । मोह गहल विच वात बिगड़ती, मिथ्याभ्रम तजि घोलि नी ॥ तू० ॥ टेक ॥ तू चेतन यौं जड़ रूपी है, या उरमाहीं तोलि नी । तन अनन्त धारे छांड़े तैं, ये अनादिका भोलि नी ॥ तू० ॥ १ परद्रव्य लेवेतैं दुख पावै, राज गजनका (?) वोलि नी । यातैं परतैं ममत न करिये, कर लै ऐसा कोलि नी ॥ तू० ॥ २ ॥ उपजै विनसै जरै मरै सो, पुदगलका झकझोलि नी । तू अविनाशी जिनवर भासी, वुधजन दिल विच खोलि नी ॥ तू० ॥ ३ ॥

---

१ अठाईसों २८ मूलगुणोंका धारी मुनि । २ डोल न–अर्थात् निर्भय होकर भ्रमण कर न ?

(२३९)

जियरा रे तू तौं भोग लुभावै काल गमावै तौ या भली वात नहीं ॥ जियरा० ॥ टेक ॥ पापकौं नांहीं डर डोलत घर घर मूरखकौं सुध नाहिं, वंध वधाई ॥ जियरा० ॥ १ ॥ चौरासीमाहिं फिरि हुवो आरज नर, क्यौं न करै निज काज विपतिमें कौन सहाई ॥ जियरा० ॥ २ ॥ जिनपद वंदि सिर तत्त्व प्रतीत कर, वुधजन सुखदाई मुक्ति लहाई ॥ जियरा० ॥ ३ ॥

(२४०)

राग-जंगला ।

अव जग जीता वे मांनूं ॥ अव० ॥ टेक ॥ सांत छवी थांकी जी, निरखतें नैंना हो साईं । विसर गया छा सो निधि लीता वे मांनूं ॥ अव० ॥ १ ॥ धन्नि घरी म्हांकी जी, चरननकूं सिर नाया । वुधजनकौं थे कृतकृत कीता वे मांनूं ॥ अव० ॥ २ ॥

(२४१)

मैं तौं अयाना थाँनैं ना जाना, जानै जो भला जीया सो ॥ मैं० ॥ टेक ॥ विन जानैं दुख गति गतिमाहीं, लया काल अनन्तेकी तू जाना ॥ मैं० ॥ १ ॥ जिन जाना ते शिवपुरमाहीं, गया अष्ट कर्मनकौं भाना ॥ मैं० ॥ २ ॥ अव सिर नायकें वुधजन जांचै, हो साइयां वहुरि जनम नहिं पाना ॥ मैं० ॥ ३ ॥

(२४२)

राग–भैरौं।

चरनन चिन्ह चितारि चित्तमैं, वंदन जिन चौवीस करूं ॥ टेक ॥ रिषभ वृषभ गज अजितनाथकै, संभवकै पद बाज[1] सरूं। अभिनंदन कपि कोक[2] सुमतिकै, पद्म[3] पद्मप्रभ पाय धरूं ॥ चरनन० ॥ १ ॥ स्वस्ति[4] सुपारस चंद चंदकै, पुष्पदंत पद मत्स्य[5] वरूं। सुरतरु[6] शीतल चरनकमलमैं, श्रेयांस गैंड़ा वनचरूं ॥ चरनन० ॥ २ ॥ भैंसा वासु बराह विमलपद, अनँतनाथके सेहि परूं। धर्मनाथ कुँस शांत हिरनजुत, कुंथुनाथ अज मीन अरूं ॥ चरनन० ॥ ३ ॥ कलश मल्लि कूर्म[8] मुनिसुव्रत, नमि कमल सतपत्र तरूं। नेमि संख फनि[9] पास वीर हरि, लखि बुधजन आनन्द भरूं ॥ चरनन० ॥ ४ ॥

(२४३)

राग–मलहार।

झूम झूम वरसैं बदरवा, मुनिजन ठाड़े तरुवर तरवा ॥ टेक ॥ कारी घटा तैसी बीजँ[10] डरावै, वे निधरक मानौं काठ पुतरवा ॥ झूम झूम० ॥ १ ॥ बाहरि को निकसै ऐसे मैं, बड़े बड़े घर हू गलि गिरवा। झंझा वायु बहै अति सियरी, वे न हलैं निज बलके धरवा ॥ झूम० ॥ २ ॥ देखि उन्हैं ज्यौं आय सुनावै, ताकी तौ कर हूं नौछरवा। सफल होय सिर पाँय परसिकै, बुधजनके सब कारज सरवा ॥ झूम० ॥ ३ ॥

(समाप्तोऽयं पदसंग्रहः)

---

१ घोड़ा। २ चकवा। ३ कमल। ४ सांथिया। ५ मगर। ६ कल्पवृक्ष। ७ वज्र। ८ कछुवा। ९ सर्प। १० विजली।